संस्कृत वाङ्मय में गंगा- एक अध्ययन
(गंगासागरीयम् के विशेष सन्दर्भ में)

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की संस्कृत में
पी-एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत)

शोध -प्रबन्ध

शोध कर्त्री

कु0 राशि तिवारी
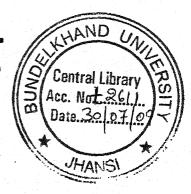
एम.ए.(संस्कृत)

म०प्र० स्नातकोत्तर महाविद्यालय,कोंच (जालौन)
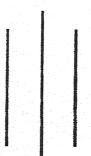
शोध निर्देशक -

डॉ0 कैलाश नाथ द्विवेदी

एम.ए. साहित्याचार्य,सा.रत्न,पी-एच०डी०,डी०लिट्

पूर्व प्राचार्य

म०प्र० स्नातकोत्तर महाविद्यालय,कोंच (जालौन)

२००५

मकरवाहिनी गंगा

डा0 कैलाश नाथ द्विवेदी,
एम.ए.,साहित्याचार्य,सा.रत्न.पी-एच.डी.,डी.लिट्
पूर्व प्राचार्य,म.प्र. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोंच(जालौन) २८५२०५

कुसुम कुलाय,
शास्त्री नगर,अजीतमल (औरैय्या) २०६१२१
फोन नं० ०५६८३- २८४०६५
दिनांक- 20.12.05

प्रमाण -पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु० राशि तिवारी ने मेरे निर्देशन में शोध कार्य करते हुये बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी की संस्कृत में पी-एच.डी. उपाधि हेतु संस्कृत वाङ्.मय में गंगा- एक अध्ययन (गंगा सागरीयम् के विशेष सन्दर्भ में) विषय पर शोध प्रबन्ध तैयार किया है।

यह शोध प्रबन्ध शोधकर्त्री का मौलिक कार्य है।

इस शोधकार्य को सम्पन्न करने के लिये बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के शोध अधिनियमों में निर्दिष्ट अवधि तक शोध छात्रा महाविद्यालय के संस्कृत विभागीय शोध केन्द्र और मेरे सांन्निध्य में उपस्थित रही है।

शोध छात्रा की सफलता की शुभकामनाओं सहित शोध प्रबन्ध विश्वविद्यालय को परीक्षणार्थ सहर्ष अग्रसारित करता हूँ।

(कैलाश नाथ द्विवेदी)
20.12.05
पर्यवेक्षक

प्राक्कथन

पुरातन काल से गंग की पावनता से लोक जीवन अनुप्राणित होता रहा है। इसकी महत्तता से सभी मानव सर्वथा सुपरिचित हैं तथा इनकी उपादेयता से सदैव लाभान्वित होते रहते हैं। अतः विश्व की विभिन्न भाषाओं में गंगा गौरव के हृदयगंमकर विभिन्न विधाओं में साहित्यिक कृतियों की सजृना पुरातन काल से अब तक निरन्तर होती रही है। वर्तमान समय में भी गंगा पर आधृत गद्य काव्य,महाकाव्य,नाटक चम्पूकाव्य आदि में गंगा का स्वाभाविक मनोहारी चित्रण प्राप्त होता है।

यशस्वी स्वाधीनता सेनानी स्वर्गीय पं. विष्णुदत्त शुक्ल की संस्कृत काव्य कृति 'गंगा सागरीयम्' अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं जिसमें नायिका रूप में गंगा को सचेतन रूप में चारूचित्रित किया गया है। इस सरस काव्य की रोचकता, उत्कृष्टता तथा साहित्यिकता से प्रभावित होकर मैंने गंगा विषयक साहित्यिक कृतियों के अनुसन्धान का संकल्प किया। जिसको पूर्ण करने में निर्देशनार्थ स्थानीय मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य डा. कैलाश नाथ द्विवेदी से सम्पर्क किया,जिन्होने इसके निर्देशन करने की सहर्ष स्वीकृति मुझे प्रदान की। अतः इनके महत्वपूर्ण सुझावों और निर्देशों के आधार पर शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने का मेरा यह विनम्र प्रयास है।

वस्तुतः गंगा पर आधृत संस्कृत वाङ्.गय बहुत विपुल और व्यापक हैं। वैदिक वाङ्.मय से लेकर वैदिक वाङ्.मय की संहितायें,ब्राह्मण आरण्यक,उपनिषद,रामायण,महाभारत,महाकाव्य, गद्यकाव्य नाटक, चम्पू काव्य, गीति-स्तोत्र काव्य आदि में प्रायः गंगा का गौरव, स्वरूप एवं माहात्म्य अधिकांशतः अभिव्यजिंत हुआ है,जिसके तत्वता अनुसन्धनात्मक अध्ययन के लिये में प्रवृत्त हुई।सर्वप्रथम शोध-प्रबन्ध के आभार प्रदर्शन में मैं उस परमपिता परमात्मा अकारण कृपावत्सल ईश्वर की कृतज्ञ हूँ,जिसने मेरे इस पांच भौतिक स्थूल को चौरासी लाख योनियों में श्रेष्ठ,मानव कोटि में जन्म दिया और मेरे मन में इस शोध प्रबन्ध के लिये प्रेरणा प्रदान की। बिना प्रभु कृपा से पत्तातक नहीं हिलता, बिना इसके सम्बल के प्रसून भी नहीं खिलता है। भला मेरे मन में उसकी कृपा के बिन कैसे में विचार सम्भव थे।

सिंचन से अंकुरित करने वाले उन साहित्याचार्य,साहित्यरत्न,पी.एच-डी. एवं डी.लिट् की उपाधि से विभूषित महामनीषी पूज्य गुरूवर डा. कैलाश नाथ द्विवेदी जी को अपना शोध-प्रबन्ध पूर्ण करने का श्रेय प्रदान करती हूँ। जिन्होने मुझे शोध प्रबन्ध के विषय में प्रेरणा दी एवं मुझे निर्देशन सहयोग प्रदान किया। इसके लिये सम्बन्धित आधार एवं सन्दर्भ ग्रन्थों के अध्ययनार्थ हमें अपने निर्देशक डा. द्विवेदी के समृद्ध पुस्तकालय के अतिरिक्त,स्थानीय मथुरा प्रसाद महाविद्यालय कोंच और बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी के समृद्ध पुस्तकालय दुर्लभ पाठ्य एवं शोध सामग्री प्राप्त हुई जिसके लिये इनके व्यवस्थापकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूं।

मैं मथुरा प्रसाद महाविद्यालय कोंच के संस्कृत विभागाध्यक्ष डा.टी.आर. निरंजन एवं एस.आर.पी. इण्टर कालेज कोंच के संस्कृताध्यापक श्री सत्यनारायण बुधौलिया एवं श्री प्रभुदयाल नायक का हृदय से आभार प्रकट करती हूँ जो कि इस शोध प्रबन्ध में मेरे प्रेरणा स्त्रोत रहे।

आभारी हूँ उन विद्वान लेखकों,विचारकों एवं कवियों की जिन के विचारों, लेखों तथा काव्यों से प्रेरित हो तथा जिनके उद्धरण प्रस्तुत कर शोध प्रबन्ध की कलेवर वृद्धि कर सकी।

अग्रज श्री सुनील कान्त तिवारी के प्रति मुक्त मन से हार्दिक आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करती हूं,जिनके श्रम जल तथा स्नेहजल से सिंचित होते हुये मैंने अपनी शोध यात्रा सम्पन्न की । मैं अपने परिवार के सभी सदस्यों के प्रति,जिन्होंने अपने शुभाशीष तथा सहयोग से मेरा उत्साह बढ़ाया। मेरी सम्पूर्ण चेतना ही उनके प्रति श्रद्धावान है।

मेरा यह शोध प्रबन्ध परम पूज्य पिता डा. सुशील चन्द्र तिवारी के कर-कमलों में समर्पित है। वास्तव में आपके सतत् प्रयास एवं आर्शीवाद से ही मैंने अपना शोध प्रबन्ध पूर्ण किया अन्त में मैं ऋषभ कम्पयूटर कोंच, के लोगों का भी विशेष रूप से आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होने मेरे इस शोध प्रबन्ध को स्वच्छ एवं सुन्दर स्वरूप प्रदान किया।

यद्यपि इस शोध-प्रबन्ध को तैयार करने में यथा सम्भव कमियों को दूर करने का प्रसास किया गया हैं,तथापि अनवधानतावश अनजान में मुद्रण सम्बन्धी त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक ही हैं।

विश्वास है कि प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध गंगाभक्त जिज्ञासु पाठकों एवं संस्कृत प्रेमियों के लिये उपादेय सिद्ध होगा तथा विद्वज्जन उदारतापूर्वक इसके दोषों पर ध्यान न देकर अपनी नीर-क्षीर दृष्टि से गुणों को ग्रहण करने की कृपा करेगे।

"हंसो हि क्षीरमादत्ते तन्मिश्रा वर्जयत्यः।"

विनयविनता

राशि तिवारी

कु. राशि तिवारी

विषयानुक्रम

क्र० सं०		विषय	पृष्ठ सं.
१.	भूमिका	विषय प्रवेश	१ - २४
२.	प्रथम अध्याय	वैदिक वाङ्मय में गंगा	२५ - ३४
३.	द्वितीय अध्याय	पौराणिक साहित्य में गंगा	३५ - ८८
४.	तृतीय अध्याय	रामायण एवं महाभारत में अंकित गंगा	८९ - १०९
५.	चतुर्थ अध्याय	संस्कृत महाकाव्यों में गंगा वर्णन	११० - १६७
६.	पंचम अध्याय	संस्कृत स्तोत्र साहित्य में गंगा	१६८ - २०९
७.	षष्ठ अध्याय	गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्यों का अध्ययन	२१० - २२७
८.	सप्तम अध्याय	गंगा सागरीयम के कर्ता पं. विष्णुदत्त शुक्ल का जीवन परिचय,व्यक्तित्व एवंकृतित्व	२२८ - २४४
९.	अष्टम अध्याय	गंगा सागरीयम् की साहित्यिक समीक्षा	२४५ - २७४
१०.	नवम अध्याय	संस्कृत में गंगा विषयक अन्य प्रकीर्ण साहित्य का अध्ययन	२७५ - ३०३
११.	उपसंहार	शोध निष्कर्षों का निरूपण	३०४ - ३१५
१२.	परिशिष्ट	सहायक ग्रन्थ सूची	३१६ - ३२१

- भूमिका -

विषय–प्रवेश

सामान्यतः साहित्य शब्द वाड्.मय के अर्थ में भी अभिहित होता है,जिसके स्वरूप का संक्षेप में निवर्चन यहां प्रस्तुत है।

'साहित्य शब्द का स्वरूप एवं महत्त्व'

शब्द और अर्थ के परस्पर साथ रहने का भाव ही साहित्य है।[१] यह साहित्य जब शब्दार्थ-समष्टि के माध्यम से लोकोत्तर आदर्शो की सृष्टि करता है।[२] प्रकृति,समाज एवं व्यक्ति के विविध अनूठे रूपों को भंगीभणितियों द्वारा रूपायित करता है अथवा सूक्ष्माति सूक्ष्म मानवीय हृदयसंवेदनाओं को कल्पना तूलिका द्वारा अभिव्यक्त करता है, तब तो 'साहित्य अथवा काव्य' कहा जाता है परन्तु जब यह साहित्य अथवा काव्य का विश्लेषण करके रचना प्रक्रिया के नियामक धर्मो-शब्दशक्ति,गुण-दोष,रीति-वृत्ति,रस आदि की व्याख्या करता है, तब साहित्यकशास्त्र अथवा काव्यशास्त्र बन जाता है।[३]

प्राचीन काल में १४ विद्यास्थानों की प्रतिष्ठा मान्य थी। इनमें चार, वेद, ६वेदांग तथा चार शास्त्र (पुराण,आन्वीक्षिकी,मीमांसा और स्मृति तंत्र) आते थे, परन्तु आचार्य राजशेखर ने काव्य अथवा साहित्य को १५ वां विद्यास्थान मानते हुये उसे समस्त विद्याओं का उपकारक बताया।

काव्य मीमांसा के द्वितीय अध्याय में आचार्य राजशेखर अत्यन्त विस्तारपूर्वक काव्य एवं शास्त्र की चर्चा करते हैं, जैसे बिना दीप प्रवर्तित अन्धकार में वस्तुओं का ज्ञान नहीं हो पाता । उसी प्रकार शास्त्र परिचय के बिना काव्य में भी कवि अथवा सहृदय की गति होनी असम्भव है।

---

१. शब्दार्थयोः सहितयोः भावः साहित्यम् (सहित+भावेष्यत्म्)
२. द्रष्टव्यः काव्य प्रकाश (प्रथम उल्लास)
३. तत्र केचिदाचक्षीरन्-शब्दार्थ शरीरं तावत्काव्यन्। तत्र च शब्दगता चारूत्वहेतवो अनुप्रासादयः प्रसिद्धा इव। अर्थगताश्चोपमादयः । वर्ण संघटनाधर्माश्च ये
माधुर्यादयस्तेपि प्रतीयन्ते। तदनीति रिक्त वृत्तयों वृत्तयोपि याः कैश्चिदुपनागरिकाद्याः प्रकाशितास्ता अपि गताः श्रवणगोचरम् । रीतयश्च वैदर्भीप्रभृतयः ।

आचार्य राजशेखर शास्त्र को काव्य की आधारशिला स्वीकार करते हैं।[१] यह शास्त्र अपौरूषेय तथा पौरूषेय दो प्रकार का होता है।प्रथमकोटि में श्रुति (वेद) हैं, जो कि मंत्र एवं ब्राह्मण से युक्त हैं। ऋक्, यजुष,साम एवं अर्थववेद ये चार वेद हैं। इतिहास वेद, धनुर्वेद,गान्धर्ववेद तथा आयुर्वेद ये चार उपवेद माने गये हैं। आचार्य द्रौहिणि नाट्यवेद को पंचम वेद मानते हैं।

शिक्षा,कल्प,निरूक्त,व्याकरण,ज्योतिष तथा छन्द-छह वेदांग हैं। आचार्य राजशेखर सर्वप्रथम अलंकार शास्त्र की प्रतिष्ठा करते हुये, उसे साँतवा वेदांग मानते है।-

उपकारकत्वादलंकारः सप्तयमंगम् इति यायावरीयः। ऋते च तत्स्तरूपपरि ज्ञानाद् वेदार्थानवगतिः ।

पौरूषेय शास्त्रों में आचार्य पुराण,आन्वीक्षिकी,मीमांसा तथा स्मृति तंत्र का उल्लेख करता है। इस प्रकार कुल १४ विद्यास्थान हुये।[२] आचार्य राजशेखर पुनः साहित्य को एक स्वतन्त्र विद्यास्थान मानते है।[३]

आचार्य चाणक्य ने चार विद्या ये मानी थी। इस तथ्य का उल्लेख करते हुये आचार्य राजशेखर पुनः साहित्य को पंचम विद्या के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

"आन्वीक्षिकी त्र्यीवार्तादण्डनीतयश्चतस्तो विद्या इति कौटिल्यः। आन्वीक्षिक्या हि विवेचिता त्रयीवार्तादण्डनीत्योः प्रभवति। पंचमी साहित्य-विद्या इति यायावरीमः। सा हि चतसृणामपि विद्यानां निष्यन्दः।"

---

१. इह हि वाड्.मययुभयथा- शास्त्रं काव्यं च। शास्त्र पूर्वकत्वात् काव्यानां पूर्व शास्त्रेष्वभिनिविशेत्। नह्यप्रवर्तित प्रदीपास्तमसि तत्वार्थसार्थमध्यक्षयन्ति।

२. तानीमानि चतुर्दशविद्यास्थानानि यदुत वेदाश्चत्वारः षडगानि चत्वारि शास्त्राइत्याचार्याः। तान्वेतानि कृत्स्नामपि भूर्भूवः स्वस्त्रयीं व्यासज्य वर्तते।

३. सकलविद्यास्थानैकायतनं पंचदशं काव्यं विद्यास्थानम् इति यायावरीयः। गद्य पद्यमयत्वात् कविधर्मत्वात् हितोपदेशकत्वाच्च। तद्धि शास्त्राण्यनुधावति।।

इस प्रकार आचार्य राजशेखर की दृष्टि में साहित्य सातवाँ वेदांग,१५ विद्यास्थान तथा पांचवी विद्या सिद्ध होती है। उसका सैद्धान्तिक (काव्यशास्त्र,साहित्यशास्त्र अथवा अलंकार शास्त्र) एवं व्यावहारिक (काव्य अथवा साहित्य) दोनों ही पक्ष परेण्य हैं।

आचार्य मम्मट काव्यरचना करने वाले कवि के जिन प्रयोजनों की व्याख्या करते हैं।[१] वह आपाततः तो मात्र कवि से सम्बद्ध सिद्ध होता है, परन्तु सच तो यह है, कि वे प्रयोजन काव्यानुशीलन करने वाले सहृदय पाठक के भी हैं। यश की प्राप्ति,अर्थ की प्राप्ति, व्यवहार का ज्ञान,लोकमंगल की सिद्धि सद्यः आनन्दानुभूति तथा कान्तासम्मित उपदेश का सुख-कवि एवं पाठक दोनों को होता है। सम्भवतः इसी तथ्य को ध्यान में रखकर आचार्य अभिनवगुप्त कवि एवं सहृदय- दोनों को सारस्वत तत्व का भागीदार मानते हैं।[२]

१८ वीं. शती के प्रख्यात कवि एवं आचार्य श्री नीलकण्ठ दीक्षित 'अभिव्यक्ति के विदग्ध विन्यास' को ही साहित्य अथवा काव्य मानते है।[३] इसी विन्यास विदग्धरीति को आचार्य भामह-[४] दण्डी[५] तथा कुन्तक 'वक्रोक्ति' कहते है। ध्वनिवादी आचार्यो की 'ध्वनि' भी यही है।[६] आचार्य जगन्नाथ का 'चमत्कार तत्व' भी यही है। समीक्षाशास्त्रियों ने इसी को भंगीभणिति अथवा वचोभंगी भी कहा है। संक्षेप में चमत्कारपूर्ण ढंग से की गई भावाभिव्यक्ति ही काव्य हैं।

---

१. काव्यं यशसे अर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परिनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।
(काव्य प्रकाश)

२. सरस्वत्यास्तत्वं कविसहृदयाख्यं विजयते । (ध्वन्यालोकलोचन का मंगलाचरण)

३. यानेव शब्दान् वटामालपामः यानेव चायनि् वयमुल्लिखामः।
तैरेव विन्यास विदग्धरीत्या सम्मोहयन्ते कवयो जगन्ति ।।
(शिवलीला महाकाव्ये)

४. सैषा सर्वैव वक्रोक्तिरनयार्थो विभाव्यते।
यत्नो अस्यां कविना कार्यः को लंकारो नया बिना ।।

५. वक्रोक्तिश्च स्वभावोक्तिः द्विधैतद् वाड्.मयं मतम्।।

६. द्रष्टव्यध्वन्यालोक, १/१३

विश्ववाङ्मय में वेदों के अतिरिक्त पुराणों,महाकाव्यों,नाटकों एवं चम्पू काव्यों में गंगा-गौरव गाया गया है।

इस दृष्टि से विष्णु पुराण का एक सुभाषित श्लोक सर्व विदित है। जिसमें पवित्र भारतभूमि को देवताओं के लिये भी स्पृहणीम बताया गया है। स्वर्ग के देवता भी यह गीत गाते है। कि भारत भूमि में जन्म लेने वाले व्यक्ति धन्य है।

"गायन्ति देवाः किलगीतकानि, धन्यास्तु ये भारतभूमि भागे।।"
स्वर्गापवर्गास्पदतुभूते,भवन्ति भूयः पुरूषाः सुरत्वात्।।

(विष्णुपुराण)

यह एक गम्भीर चिन्तन का विषय है। देवयोनि अपनी अलौकिक तथा अति मानवीय शक्तियों के कारण निश्चय ही मानवयोनि से प्रत्येक दृष्टि से श्रेष्ठ है। देवता योगयोनि में है, जबकि मनुष्य कर्मयोनि में। ऐसी स्थिति में भी यदि देवगण भारत में जन्म लेने को लालयित हो तो आश्चर्य होना स्वाभाविक है।

निश्चय ही यह प्रश्न अत्यन्त रहस्य गर्भ है कि भारतभूमि में ऐसी कौन सी विशेषता है। अनेक विद्वन्मनीषियों ने इस प्रश्न की अपनी रूचि के अनुकूल उत्तर दिया है, परन्तु इस रहस्य का सर्वोत्तम समाधान वर्तमान शती के महान चिन्तक,शास्त्रक और उद्भट धर्मव्याख्याकार स्वामी 'करपात्री' जी ने दिया है। उनकी दृष्टि में भारतभूमि की विशेषता इस तथ्य में निहित है, कि पतित पावनी,कलिमलहारिणी तथा मुरारिचरणाम्बुजमाध्वीभूता भगवती भागीरथी इस देश की मिट्टी को पवित्र करती है।

सृष्टि के प्रारम्भकाल से ही गंगा भारतभूमि को अपने औषधभूत अमृत जल का वरदान देती रही है। गंगा जल का दर्शन,स्पर्श,स्नान,पान और कीर्तन मात्र मनुष्य को जन्म-मरण के बन्धन से सदा सर्वदा के लिये मुक्त कर देता है। महाभारत कार ने तो स्पष्टतः कह दिया है कि गंगा अपना नामोच्चारण करने वाले व्यक्ति के पापो का नाश करती है,दर्शन करने वालों का कल्याण करती है तथा स्नान-पान करने वालों की सात पीड़ियों तक को पवित्र कर देती है।

" प्रनाति कीर्तिता पापं दृष्ट्वा भद्रं प्रयच्छति ।
अवगाढ़ा च पीता च प्रनाति सप्तमं कुलम् ।।"

(महाभारत)

भौगोलिक दृष्टि से विश्व के अन्यान्य भूखण्डों की तरह भारतवर्ष भी पर्वतों,नदियों,काननों,उपत्यकाओं तथा गांवों नगरों में परिव्याप्त है, परन्तु किसी भी देश की भौगोलिक व्यवस्था में नदियों का विशेष महत्व रहा है, क्योंकि कि अन्न और जल की सुविधा होने के कारण इन्हीं नदियों की घाटियों में प्राचीनकाल से ही सांस्कृतियाँ जन्म लेती रही हैं। इन्हीं के तट पर महानगर और व्यावसायिक केन्द्र बनते रहे है। प्राचीनकाल में सुदूर यातायात भी नदियों के मार्ग से ही हुआ करता था। आज भी हस्तिनापुर, अयोध्या , कौशम्बी तथा प्रतिष्ठान जैसे महानगरों के भग्नावशेष नदियों की उस भौगोलिक महत्ता को सिद्ध करते है।

परन्तु गंगा एक ऐसी विलक्षण नदी है जो कि भौगोलिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि सच तो यह है कि इस राष्ट्र की संस्कृति का मेरूदण्ड ही गंगा है। एक ओर वह अमृतोपम जलराशि का बहन करने वाली नदी है, जिसके तट पर सैकड़ों महानगर विद्यमान हैं तो दूसरी ओर वह विष्णु के चरण को पखारने वाली,ब्रह्मा के कमण्डलु से निःसृत तथा शिव के जटाजूट से विमुक्त ब्रह्मद्रव से मुक्त एक ऐसी मुक्ति पीठिका भी है जिसके दर्शनमात्र से जीवों को सद्गति प्राप्त हो जाती है। कुछ लोग घर बैठे गंगा का स्मरण करते हैं, कुछ लोग गंगा स्नान के लिये धर से चल पड़ते है,कुछ पुण्यवान् लोग दूर से ही गंगा की पवित्र जलधारा का दर्शन कर लेते हैं, कुछ और भाग्यशाली उसका स्पर्श भी कर लेते हैं, परन्तु उन सौभाग्यशालियों का तो कहना ही क्या जो गंगा जल के दो-चार चुल्लुक अपने कण्ठ में उतार लेते हैं।

" केचित्समरन्त्यनुसरन्ति च केचिदन्ये,
पश्यन्ति पुण्य पुरूषाः कति च स्पृशन्ति।
मातमुरारिचरणाम्ब्रजमाध्वि ! गंगे!
भाग्याधिकाः कतिपये भवतीं पिबन्ति ।।"
(पण्डित राज जगन्नाथ)

भूगोल और धर्म के अतिरिक्त गंगा का एक तीसरा रूप भी है। अपने उस रूप में गंगा जलप्रवाह भूत एक जड़ पदार्थ ही नहीं है बल्कि वह अखण्ड चैतन्ययुक्त एक जीवन्तनारी-मूर्ति भी है। अपने उस रूप में वह कभी महर्षि जह्नु की कन्या बनती है तो कभी हस्तिनापुर नरेश शान्तनु की प्राण प्रिया और देवव्रत भीष्म की जन्मदात्री माँ ।। इस प्रकार वह मानवी के रूप में प्राचीन भारत की एक इतिहास मूर्ति भी है।

संस्कृत का सम्पूर्ण वैदिक, पौराणिक और लौकिक वाङ्मय गंगा-सम्बन्धी आख्यानों एवं वर्णनों से ओतप्रोत है। सच तो यह है कि भारत रूपी राष्ट्र-पुरूष के व्यक्तित्व में यदि हिमालय शीश है,समुद्र चरण हैं तो गंगा हृदय है और हृदय का स्पन्दन ही जैसे मनुष्य के जीवित होने का प्रमाण होता है उसी प्रकार गंगा का अस्तित्व ही भारत राष्ट्र की जीवन्तता का एकमात्र प्रमाण हैं। अनादि काल से ही वैदिक ऋषि,साधु,सन्त ज्ञानी,धर्माचार्य,साहित्यकार और वैज्ञानिक गंगा के महात्म्य का गायन करते रहे है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में गंगा की उसी सर्वतोमुखी महिमा को दृष्टि में रखकर एक अभिनव मूल्यांकन करने का प्रयास किया जा रहा है। यद्यपि इस सन्दर्भ में कुछ कार्य विद्वानों द्वारा पहले भी किया गया है, परन्तु यह व्यापक नहीं,एक दृष्टि विशेष,पौराणिक तथा लौकिक संस्कृत वाड्.मय में व्याप्त उसके विविध आयामों का संकलन,विश्लेषण और निर्णय करने की चेष्टा की जा रही है।

गौरवशालिनी गंगा पर आधृत संस्कृत काव्य साहित्य में संस्कृतज्ञ स्वाधीनता सेनानी सुकवि स्व. पं. विष्णुदत्त शुक्ल की काव्य कृति " गंगासागरीयम्" अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसमें पावन गंगा को सचेतना रूप में चित्रित किया गया है। संस्कृत वाङ्मय का विहंगम दृष्टि से अनुशीलन करते हुये 'गंगासागरीयम्' का अनुसन्धानात्मक अध्ययन करना ही मेरे शोध प्रबन्ध का परम उद्देश्य हैं।

गंगा गरिमा से प्रभावित होकर अनेक ऋषियों,मुनियों,साधु,सन्तों,कवियों

और साहित्य सर्जकों ने विपुल साहित्य की सृजना की है। ऋग्वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, रामायण,महाभारत,पुराणों रघुवंशादि महाकाव्यों,गंगालहरी आदि श्रेष्ठ स्त्रोत्रकाव्यों में गंगा स्तवन से प्रभावित होकर साहित्य मनीषियों ने प्रभूत चिन्तन मनन किया है।

अर्वाचीन काल में गंगा का पावनत्व प्रदूषणकारी नाना तत्वों से शनैः-शनैः विलुप्त होता जा रहा है। जिसकी चिन्ता करते हुये इसे प्रदूषण मुक्त करने का महाअभिमान शासन और जन कल्याणकारी सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठनों द्वारा छेड़ा जा रहा है। संस्कृत, हिन्दी और साहित्यिक शोध पत्रिकाओं ने गंगा पर आधृत विशेषांको का प्रकाशन कर गंगा विषयक अनुसन्धान के व्यापक क्षेत्र को अति प्रशस्त कर दिया है।

पुरातन ऋषि मुनियों के अतिरिक्त सुप्रसिद्ध साधुओं पर्यटकों ने गंगा विषयक गहन चिन्तन-मनन किया है और उनके शोध लेखो से गंगा विषयक महत्वपूर्ण ज्ञान हमें प्राप्त होता है। पुरातात्विक स्त्रोतों से भी गंगा का अनुस्न्धानात्मक अध्ययन साहित्यिक ग्रन्थों के साक्ष्यों की सम्पुष्टि के आधार पर करना समीचीन प्रतीत होता है।

संक्षेप में, पूर्ववर्ती संस्कृत साहित्य के आलोक में 'गंगा सागरीयम्' का गहन अनुसन्धानात्मक अध्ययन करने में प्रवृत्त हूँ जिससे गंगा की पावनता रक्षण प्रदूषण मुक्ति विषयक अभिनव दृष्टिकोण प्रस्तुत कर सकूं।

नदियों में श्रेष्ठता-

वैदिक-वाङ्मय में अनेकशः सृष्टि प्रक्रिया का व्याख्यान प्राप्त होता है।ऋग्वेद में नदी सूक्त के अन्तर्गत गंगा का सर्वप्रथम नामोल्लेख मिलता है।

" इमंमे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोयंसचता पुरूष्ण्या
असिक्न्या मरूद्वधे वितस्ततयार्जीकाये श्रुणुह्या सुषोमया ।।"

ऋग्वेद १०/७५/५

इसके अतिरिक्त नदी सूक्त के अन्तर्गत गंगा का सर्वप्रथम इन्द्र सूक्त विष्णु सूक्त तथा अन्यान्य सूक्तों में भी उन-उन देवों की महिमा,गरिमा तथा सर्वश्रेष्ठता का वर्णन करते हुये मंत्रदृष्टा ऋषि ने प्रत्यक्ष तथा सांकेतिक रूप से सृष्टिम को भी

व्याख्यात किया है,परन्तु सृष्टि प्रक्रिया की सुस्पष्ट व्याख्या सर्वप्रथम पुरूष सूक्त में प्राप्त होती है। इस सूक्त में विराट पुरूष की कल्पना के साथ ही साथ उससे विविध प्रजाओं एवं स्थावर-जगंम के उद्भव की बात कही गई है।[२]

"नाभ्या आसीदन्तरक्षिं शीष्णोद्यौः समवर्तत,
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तया लोकान् अकल्पयत् ।।"

पुरूष सूक्त मंत्र ४ ऋग्वेद २०.६०

प्रायः प्रत्येक पुराण में चाहें वह महापुराण हो अथवा उपपुराण,जम्बूद्वीप तथा अन्यान्य द्वीपों की विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। इन चर्चाओं में भी उन द्वीपों में उपलब्ध समुद्रों,पर्वतों एवं जनपदों के साथ-२ नदियों का वर्णन प्राप्त होता है। पुराणों के ये वर्णन प्रायः एक दूसरे से पृथक् एवं अतिशयोक्ति पूर्ण प्रतीत होते है,परन्तु कोई भी ऐसा विवरण नहीं है जिसमें नदियों की नामावली में भागीरथी का उल्लेख न हो।

नृसिंह पुराण में जम्बूद्वीप को लक्ष्योजन विस्तीर्ण बताया गया है।

"जम्बूनाम्ना च विख्यातं जम्बूद्वीपामिदं शुमिुम्,
रुक्षयोजन विस्तीर्ण इदं श्रेष्ठं तु भारतम् ।।"

यही भारत वर्ष भी है। जिसमें सात कुलपर्वत एवं सात नदियां है।

"महेन्द्रो मलयः शुक्तिमान् झष्टायूथः सहृयपर्वतो
विन्ध्यः पारियात्रः इत्येते भारते फलपर्वताः ।।"

नृसिंहपुराण अध्याय ३७ (२)

इन सात नदियों के साथ ही साथ पाप का प्रशमन करने वाली गंगा प्रभृति महानदियों का भी उल्लेख नृसिंह पुराण में किया गया है।

"नर्मदा सुरसा ऋषि कुल्या भागीरथी कृष्णावेणी
चन्द्रभागा ताम्रपर्णी इत्येताः सप्तनद्यः ।
गंगा यमुना गोदावरी तुंगभद्रा कावेरी सरयूरिव्येता।
महानद्यः पापध्नूयः ।।"

नृसिंहपुराण ३७/३

विष्णुपुराण द्वितीय अंश,अध्याय-२ श्लोक ३२-३७ तक भूगोल वर्णन के सन्दर्भ में पुनः पर्वतों आदि के साथ नदियों का उल्लेख मिलता है।

श्री मद्‌भागवत के पंचम स्कन्ध,अध्याय १९ में भी सृष्टिक्रम में नदियों का उल्लेख मिलता है। इन नदियों की संख्या लगभग ४५ है। चन्द्रवशा, ताम्रपर्णी,अवरोदा,कृतमाला एवं कावेरी-वेणी के साथ ही साथ यहाँ भी मन्दाकिनी,यमुना,सरस्वती एवं हषद्‌वती आदि की गणना की गई है। पुराणकार इन नदियों को पर्वतों से उत्पन्न मानता है।

" तेषां नितम्बप्रभवा नदा नद्यश्च सन्त्यसख्याताः।।"

शिवपुराण उमासंहिता अध्याय ८ के सप्तद्वीप वर्णन-प्रसंग में श्लोक संख्या १ से ७५ तक हम पुनः पर्वतों,भूखण्डों एवं महानदियों का वर्णन पाते है। इस सन्दर्भ में नदियों का उद्‌गम-स्थान भी विस्तार पूर्वक वर्णित किया गया है। परिमात्र से वेदस्मृति एवं पुराण,विन्ध्व से सुरक्षा एवं नर्मदा,झक्ष से गोदावरी,भागीरथी एवं ताप्ती,सह्‌य से कृष्णा एवं वेणी, मलय से कृतमाला एवं ताम्रपर्णी महेन्द्र से त्रियामा एवं ऋषिकुल्या एवं शक्तिमान् से कुमार आदि का उद्‌भव बताया गया है। ये सभी जम्बूदीप की नदियां है।

इसी प्रकार प्लक्ष, शाल्मली,कुश ऋौंच,शाकद्वीप तथा पुष्कर द्वीप में बहने वाली नदियों की एक विस्तृत तालिका शिवपुराण प्रस्तुत करता है, परन्तु आश्चर्य है कि इस विस्तृत वर्णन में न तो हिमाचल का उल्लेख है न हि उससे प्रादुर्भूत गंगादि नदियों का। हाँ भारतदेश की स्थिति के सन्दर्भ में हिमालय का नाम अवश्य है।

" वक्ष्येअहं भारतं वर्ष हिमाद्रेश्चैव दक्षिणे,
उत्तरे तु समुद्रस्य भारती यत्र सन्ततिः।
नवयोजनसाहसो विस्तारो दस्य महामुनेः ।
स्वर्गापवर्गयोः कर्मभूमिरेषा स्मृता बुधैः।।"

शिवपुराण उमासंहिता अध्याय १८

शिवपुराण (उमासंहिता) के १७ वे अध्याय में भी जम्बूद्वीप का विध्य वर्णन श्लोक १ से ४४ तक उपलब्ध होता है। इस वर्णन में बड़ी स्पष्टता के साथ जम्बूद्वीप के भरत खण्ड में स्थित पर्वतों एवं नदियों का उल्लेख किया गया है। इस वर्णन में हम गंगा की भी गणना पाते है।

"विष्णुपादनिष्क्रानता गंगा पपति वै नदी,
सीता चालकनन्दा च चक्षुभद्रा च वै क्रमात् ।।" २६

वामनपुराण के १३ वे अध्याय में सुकेशी के प्रश्न का उत्तर देते हुये ऋषिगण जम्बूद्वीप के पर्वतों एवं नदियों का वर्णन प्रस्तुत करते हुये दिखलाते है। इस सन्दर्भ में भी गंगा का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है।

"दृष्टव्य वामनपुराण अध्याय १३ श्लोक २० से ३२ तक

देवी भागवत पुराण में भूमण्डल विस्तार के दो प्रंसग परिलक्षित होते है।एक प्रसंग में है- आठवें स्कन्ध का ग्यारहवां अध्याय श्लोक ७ से ३२ तक नारायण एवं देवर्षि नारद के संवाद रूप में विद्यमान प्रथम सन्दर्भ कुछ गूढ़ सा प्रतीत होता है। क्योंकि इसमें अनेक लोकों में अनेक अभिधानों से बहने वाली गंगा का उल्लेख किया गया है। इस सन्दर्भ में हम अलकनन्दा,धनुदी,देवपूजिय देवनदी,गंगा देववन्दिता, गंगा त्रैलौक्यपावनी आदि नामों का प्रयोग पाते हैं। इसी पतित पावनी गंगा की एक धारा भारत में भी अवतरित है,ऐसा विवरण उपर्युक्त सन्दर्भ में प्राप्त होता है-

" सरितां पतिना विष्टा सा गंगा देववन्दिता ।
ततस्तृतीया धारा तु नाम्ना ख्याता च नारद ।।
पुण्या चालकनन्दा वै दक्षिणेनाब्जभूपदात् ।
बनानि गिरि कूटानि समतिक्रम्य चागता ।।

हेमकूटं गिरिवरं प्राप्ता तो पीह निर्गता ।
अतिवेगवती भूत्वा भारतं चागता परा ।।
दक्षिणं जलधिं प्राप्ता तृतीया सा सरिद्वरा।।
यस्याः स्नानाय सरतां मनुजानां पदे-पदे ।।
राजसूयाश्वमेधादिफलन्तु नहि दूर्लभम् ।।

देवी भागवतका द्वितीय प्रसंग -

अत्यन्त स्पष्टता के साथ जम्बूद्वीप में अवस्थित भारतवर्ष के भूगोल को प्रस्तुत करता है।

" अस्यिन्वै भारते वर्षे सरिच्छैलास्तु सन्ति हि।
तान् प्रवक्ष्यामि देवर्षेः श्रृणुष्वैकाग्रमानसः।।"

इसमें मलय,मंगलप्रस्थादि अनेक पर्वतों तथा उससे प्रादुर्भूत सैकड़ों-हजारों नदियों का उल्लेख किया गया है जिनके जलपान,अवगाहन,स्नान,दर्शन एवं उत्कीर्तन से पापों का विनाश हो जाता है।

"एतद्रुत्पन्नसरितः शतशोभ सहसृशः ।
पानावगाहनस्नान दर्शनोत्कीर्तनैरपि ।। २
नाशयन्ति च पापनि त्रिविधानि शरीरिणाम् ।
देवीभागतवत् (आंठवा अध्याय)

इस प्रसंग में उल्लिखित ४४ नदियों की नामावलि में हम मन्दाकिनी (गंगा) का भी अभिधान देखते हैं।

"कौशिकी यमुना चैव मन्दाकिनी दृष्द्वती।
गोमती सरयू रोधवती सप्तवती तथा ।।"
देवीपुराण (अध्याय-८), (१७)

गंगा सप्त-सैन्धव प्रदेश की पूर्वी सीमान्त नदी थी। जिसका पूर्व से पश्चिम की प्रमुख नदियों के साथ गंगा तटवासी-जन (गाड्.ग्यं) के रूप में उल्लेख हुआ है। (द्रष्टव्य- ऋग्वैदिक सप्त सैन्धव-भौगोलिक अध्ययन,डी.लिट् शोध ग्रन्थ,डा. कैलाश नाथ द्विवेदी, कानपुर १९८५ पृ. २९-३३) गंगा के लिये इस समय प्रयुक्त अन्य अभिधान जांहन्वी का भी ऋग्वेद में तथा शतपथ ब्राह्मण १३/५/४/११ में गंगा का प्रयोग हुआ है।

" अधिवृणुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्यस्मात्।
उरुः कक्षो न गाड्.ग्य ।।"

यद्यपि गंगा और यमुना का उल्लेख सिन्धु की सहायक तथा सरस्वती आदि नदियों के साथ हुआ है, तथापि वैदिक-कालीन सप्तसैन्धव प्रदेश की प्रधान सात नदियों के समान इन्हें उतना महत्व नहीं मिला है,जितना सरस्वती शुतुद्रि-पुरूष्णी विपाशा,असिक्नी,वितस्ता,सिन्धु को। इससे प्रतीत होता है कि ऋग्वैदिक गंगा एक गौण नदी है। लुडविग इसे आपगा से अभिन्न समझकर आपया (सरस्वती की सहायक) से समीकृत करते है,यह समीकरण निराधार होने के कारण मान्य नहीं कहा जा सकता। यह गंगा वर्तमान गंगा नदी से भिन्न नहीं है किन्तु इसका आकार अवश्य परिवर्तित-परिवर्धित हो गया है।

इस प्रकार उपर्युक्त सन्दर्भों से स्पष्टतः दृष्टव्य हो जाता है कि प्रायः समस्त पुराण अपने भूमण्डल-परिचय के प्रंसग में सामान्यतः नदियों का तथा विशेषरूप से गंगा का उल्लेख करते है। इन पुराणों में उल्लिखित नदियों की नामावलि तथा संख्या भी प्रायः परस्पर अभिन्न है परन्तु जिन पुराणों में गंगा का विरट रूप प्रस्तुत किया गया है,वह सामान्य जनमानस की मेधा परिधि से बाहर की वस्तु है। उसका रहस्य न समझ पाने वाले लोग उन सन्दर्भों को अतिश्योक्ति पूर्ण अथवा कपोलकल्पनामात्र स्वीकार कर सकते हैं, परन्तु गंगा का अधिभौतिक रूप भी उसके आधिदैविक तथा आध्यात्मिक रूवरूप पर ही आधारित है। उन स्वरूपों को समझने के लिये आस्था,धैर्य तथा भारतीय - दर्शन एवं धर्म को भी आत्मसात् करने की आवश्यकता है।

पुराणों का भुवनकोश-वर्णन निश्चय ही अपनी सांकेतिक शैली के कारण कुछ जटिल एवं अविश्वसनीय प्रतीत होता है, परन्तु आज का विज्ञान स्वयं अनेक सौर मण्डलों एवं लोकों में विश्वास करने लगा है ऐसी स्थिति गंगा का विराट् स्वरूप भी विश्वसनीय ही प्रतीत होता है।

गंगा का प्राचीनतमू उल्लेख -

गंगा का प्राचीनतमू उल्लेख सम्भवतः ऋग्वेद के दशम मण्डल में उपलब्ध ा होता है। सिन्धुक्षित् प्रैयमेध ऋषि द्वारा साक्षात्कृत प्रस्तुत सूक्त की देवता नदियाँ है।

जगती छन्द में कुल ६ मंत्र हैं, पांचवे मंत्र में ऋषि कहता है।

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रिस्तोमं सचता परूष्णया
असिक्त्या मरूद्वृधे वितस्तया र्जीकाये श्रृणुहूयासुषोयया।

इसी मंत्र का उद्धरण तैत्तिरीय आरण्यक १०/१/१३ तथा यास्काचार्य-प्रणीत निरुक्त ६.२६ में भी प्राप्त होता है। इसी प्रकार ऋग्वेद १/३,१/८६,१/१६४,२/३, २/१६,२/४१,३/२३,३/३३,३/५४,५/४३,५/४६,६/४६,६/५२,६/६१,७/६, ७/३५,७/३६,७/३७,७/६५,७/६६,८/२१,६/६७,१०/६७,१०/३०,१०/६४,१०/६५, १०/१३१ तथा १०/१८४ सन्दर्भों में भी अनेक नदियों का नामोल्लेख हुआ है। इन सन्दर्भों में सरस्वती,सरयू,सिन्धु,शुतुद्री एवं विपाशा को परस्पर बहन के रूप में कल्पित किया गया है।

छान्दोग्म उपनिष्द के छठे अध्याय के दशम मण्डल में प्रथम मंत्र मं कहा गया है कि-

" समुद्र में विलीन नदियां अपना अस्तित्व भूल जाती है-"

"इमाः सोम्यः नद्यः पुरस्तात्प्राच्यः स्यन्दन्ते पश्चात्प्रतीच्यस्ताः समुद्रात्समुद्रयेवापियन्ति च समुद्र एवं भवति। ता यथा तत्र न विदुरियमहस्यीययहमस्यीति ।"

प्रस्तुत मंत्र की व्याख्या करते हुये भाष्यकार श्री शंकराचार्य "नद्यः" का अर्थ "गंगाद्याः" करते है। व्याख्या के अन्त में आचार्य पुनः कहते है " ता नद्यो यथा ह्री तत्र समुद्रे समुद्रात्मनैकतां गता न विदुर्न जानन्तीयं गंगास्मस्यीयं यमुनाहयस्मीति च ।

इसप्रकार यद्यपि छान्दोग्य में 'गंगा' शब्द साक्षात्संकेतित नहीं है फिर भी भाष्यकार के मन्तव्यानुसार वहां परोक्षरूप से उसका उल्लेख ही अभीष्ट है।

मुण्डकोपनिषद् २/१/६ तथा ३/२/८ में भी सामान्यरूप से नदियों की चर्चा की गई है तथा उनकी उत्पत्ति परब्रह्म परमेश्वर से स्वीकार की गई है।

" अतः समुद्रा गिरयश्च सर्वे स्मात्स्वन्दते सिन्धवः सर्वरूपाः ।
अतश्च सर्वा ओषधयो रसश्च यथेष भूतैस्तिष्ठते त्यन्तरात्मा ।।
यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे स्तं गच्छति नामख्ये विहाय,
तथा विद्वान् नामरुपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषम्रपैतिदिव्यम् ।।

प्रश्नोपनिषद् प्रश्नषष्ठ में भी नदियों की सामान्य चर्चा उपलब्ध होती है परन्तु गंगा के नाम का उल्लेख नहीं मिलता। ऐतरेय एवं तैत्तिरीय उपनिषद् में भी सृष्टिक्रम में जल का बार-बार उल्लेख मिलता है।

इस प्रकार ऋग्वेद संहिता तथा विभिन्न उपनिषदों के विविध प्रसंगों में सामान्य जल-तत्व,नदियों तथा गंगा का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। इन उल्लेखों से गंगा की प्राचीनता स्पष्ट हो जाती है।

गंगा शब्द की उत्पत्ति -:

गम्लृ गतौ धातु से गन् प्रत्यय 'गन् गम्यद्योः' तथा स्त्रीवाचक ताप् प्रत्यत् जोड़कर गंगा शब्द निष्पन्न होता है। इसका तात्पर्य है-निरन्तर संचरणशील जो परब्रह्म परमेश्वर का ज्ञान करा दें अथवा वहां तक पहुंचा दे वही गंगा है।

" गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पद या शक्तिः ।
यद्वा गम्यते प्राप्यते ज्ञाप्यते मोक्षार्थिभियां सा गंगा।।"

तुहिनाचल के गोमुख (गंगोत्री) से समुद्भूत गंगा भागीरथी देवप्रयाग आते आते अपनी अनेक धाराओं,धौलीगंगा,पिण्डर,मन्दाकिनी,अलकनन्दा से संवलित होकर विशाल जलप्रवाह का रूप धारण कर लेती है और वेग के साथ आगे बढ़ती है। गंगा की यह मात्रा सागर विलय के पूर्व तक उसी गति से चलती रहती है। सरस्वती की तरह गंगा किसी मरूभूमि में लुप्त नहीं होती और न ही नर्मदा आदि की तरह ग्रीष्म ऋतु आते ही क्षीणकाय हो जाती है। उसका अथाह जल प्रवाह बारहों महीने उसी वेग से आगे बढ़ता है। ग्रीष्म ऋतु में हिमालय की हिमराशि पिघलते ही गंगा में वर्षा जैसी बाढ़ आ जाती है। इस प्रकार उसका 'गंगा' निरन्तर गमनशील अभिधान सार्थक ही प्रतीत होता है।

अमरकोशकार गंगा के आठ पर्यायों का उल्लेखा करते है-गंगा, विष्णुपदी, जहरूनुतनया, सुरनिम्नगा, भागीरथी, त्रिपथगा, त्रिस्तोता एवं भीषमसू।

" गंगा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा ।
भगीरथी त्रिपथगा त्रिस्तोता भीष्मसूरपि ।।"

हलायुधकोशकार नौ पर्यायों का उल्लेख करते है-

" भागीरथी, सुरसरिद्, विष्णुपदी, जाह्नवी तथा गंगा,
मन्दाकिनी, त्रिपथगा, सरिद्वरा त्रिदशदीर्धिका प्रोक्ता ।।"

उन्होने गंगा के तीन नये नाम प्रस्तुत किये है- मन्दाकिनी, सरिदुवटा तथा त्रिदशदीर्धिका। जह्नुतनया एवं सुरनिम्गना को हलायुघ भट्ट जाह्नवी तथा सुरसरित् कहते है।

त्रिकाण्डशेष के कर्ता महाराज पुरूषोत्तमदेव ने गंगा के १६ नाम दिये है जिनमें अधिकांश नवीन है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि त्रिकाण्डशेष के टीकाकार आचार्य शीलस्कन्ध ने नदी के कुछ सामान्य पर्यायों को भी गंगा का ही पर्याय मान लिया है, जैसे-नदी, निर्झरिणी, रोधोवका, एवं सागरगामिनी। फिर भी गंगा के कुछ नये पर्याय उत्यन्त महत्वपूर्ण है- तलोदा, चाम्पिला, सिन्धु, ऋषिकुल्या, वहा, उध्वगा, गान्दिनी, हैमवती, उग्रशेखरा, धर्मद्रवी तथा सिद्ध सिन्धु ।

" नदी, निर्झरिणी रोधोवक्रा सागरगामिनी ।
तल्लोदा चाम्पिला सिन्धुः ऋषिकुल्या वहा च सा ।।
अध्वगा गान्दिनी गंगा हैमवत्युग्रशेखरा ।
धर्मद्रवी सिद्धसिन्धुः.............................।।" १/१०/२२-२३

अभिधान चिन्तामणिकार आचार्य हेमचन्द्र गंगा के १६ पर्याय प्रस्तुल करते हैं, जिनमें कुछ नये अभिधान बड़े महत्व के हैं- कुमारयुः स्वरापगा, स्वर्ग्यापगा, स्वापगा, स्वर्वायी।

" गंगा त्रिपथगा भागीरथी त्रिदशदीर्धिका ।
त्रिस्तोता जाह्नवी मन्दाकिनी भीष्मकुमारसूः।।
सरिद्वरा विष्णुपदी सिद्धस्वः स्वर्गिरवापगा ।
ऋषिकुल्या हैमवती स्वर्गपी हरशेखरा।।"

संस्कृत के कोशों की संख्या अनेक है। ऐसी स्थिति में मेदिनी,विश्व तथा बैजयन्ती आदि में उल्लिखित नये गंगा पर्यायों को भी मिलाकर गंगाभिधानों की संख्या भी विशाल हो जाती है। गंगा पर्यायो की बृद्धि का एक प्रमुख कारण है योगज शब्दों की कल्पना। यदि गंगा स्वर्ग अथवा देवो की नदी है तो स्वर्ग तथा देवतावाचक किसी भी शब्द में अपगा अथवा निम्नगा शब्द जोड़कर गंगा का पर्याय बनाया जा सकता है। इस सन्दर्भ में हारावली में उल्लिखित पुरूषोत्तम देव का यह अभिमत बड़े महत्व का है कि शब्द-निर्माण एवं शब्द प्रयोग का आयाम अनन्त है। फलतः कोई भी प्रतिभाशाली कवि या साहित्यकार नूतन शब्द का निर्माण करने में समर्थ है।

"काव्यादीनामनन्तत्वाच्छब्दानां तु विशेषतः ।
क्व कदा केन किं दृष्टमिति को वेदितुं क्षमः ।।
अतः शब्दः क्व दृष्टो यमर्थतश्चापि कीदृशाः ।
इति काव्यमलीकं स्यान्यात्सर्वमलिनात्मनाम् ।।

गंगा से सम्बद्ध अन्यान्य शब्दों का विवेचन करने से पूर्व उचित होगा कि गंगा के उपर्युक्त पर्यायों की समीक्षा कर ली जाये। शब्द-निर्माण प्रक्रिया में संस्कृत के वैयाकरणों की प्रतिभा देखते ही बनती है। प्रत्येकशब्द में प्रयुक्त प्रकृति और प्रत्यय से ही उसकी सारी सार्थकता साकार हो उठती है। एक ही जीव के लिये प्रयुक्त,भृंग,भृमर, षटपद्,द्विरेक और मधुकर आदि शब्द उसके व्यक्तित्व में तिरोहित पृथक् वैशिष्ट्यों को रूपायित कर देते है। इस दृष्टि से विश्व की कोई भी भाषा संस्कृत के समकक्ष सिद्ध नहीं हो पाती ।

इस प्रकरण के प्रारम्भ में ही गंगा शब्द का विस्तृत निर्वचन प्रस्तुत किया गया है। अब संक्षेप में ही अन्य शब्दों की सार्थकता प्रस्तुत की जा रही है।

विष्णु ही जिसका षट उद्भव स्थान है उसे विष्णु पदी कहते है। यह शब्द क्लीव,पुल्लिगं तथा स्त्रीलिंग में क्रमशः आकाश एवं कमल का,समुद्र का तथा गंगा का वाचक है।

" विष्णुः पदं स्थानं यस्याः ङीषि विष्णुपदी,
विष्णुपद नभो ज्जयोः ।
विष्णुपदस्तु क्षीरोदे विष्णुपदी सुरापगा ।। इति हैमः ।।

इसी प्रकार जह्नु की पुत्री होने के कारण गंगा जह्नुतनया एवं जाह्नवी है। जह्नों तनया/जह्नोः अपत्यं स्त्रीति। सुरो की निम्नगा नदी होने के कारण वह सुरनिम्नगा है- सुर+निम्नगम्+ड+टाप्। तीन मार्गों से प्रस्थान करने के कारण वह त्रिपथगा अथवा त्रिस्तोता है- त्रिपथेन गच्छतीति त्रिपथ+गम्+ड+टाप्/

" क्षितौ तारयते मर्त्यान् नागांस्तारयते प्यधः ।।"
दिवि तारयते देवास्तेन त्रिपथगा स्मृता ।।"

भीष्म अथवा कुमार को जन्म देने के कारण वह भीषमसू अथवा कुमारसु कही जाती है।- भीष्मं सूते इति,भाष्म+सूञ्+क्विप् प्रत्यय।

हिमवान् की ज्येष्ठ कन्या पार्वती से पूर्व होने कारण उसे हैमवती तथा शंकर का शेखर शिरोमाल्य होने के कारण उग्रशेखरा अथवा हरशेखरा भी कहते है। प्रायः अन्य नदियां वर्षाजल से ही सृजला हो पाती है परन्तु गंगा "तलोदा" है जिसका तात्पर्य है- तलेऽधोभागे उदकं यस्याः सा तलोदा। ऋषियों,महर्षियों अथवा महर्षि जह्नु से सम्बद्ध होने के कारण उसे 'ऋषि कुल्या' कहते है। कुल्या का अर्थ है- जलधारा, प्रणाली।

गंगा से सम्बद्ध अन्यान्य शब्द -:

त्रिकाण्डशेषकार रेखा नर्मदा को पूर्वगंगा तथा कावेरी को अर्थगंगा[१] कहते है।

" रेवा तु पूर्वगंगा स्यान्मुरला तु मुरन्दला ।
स्यादर्धगंगा कावेरी वाशिष्ठी गोमती समे ।।" १/२५

---

१. इसीप्रकार गोमती को 'आदिगंगा' मानने की परम्परा उत्तरभारत में प्रचलित है।

गंगाम्बु,गंगाभ्भस् अथवा गंगाजल कहते है। गंगा की धारा में प्रवहमान् जलराशि को। आश्विन मास में बरसने वाले पवित्र वर्षाजल को भी 'गंगाम्बु' कहा जाता है।

गंगावतार अथवा गंगावतरण का अर्थ है देवनदी गंगा का पृथ्वी पर उतरना। 'कादम्बरी-कथामुख' के हारीत वर्णन सन्दर्भ में बाणभट्ट हारीत को भागीरथी के साथ उपमित करते हुये कहते हैं-भागीरथ इव दृष्टगंगावतारः। गंगा स्थान करने के निमित्त गंगाजल में अवगाहनार्थ उतरने को भी गंगावतार कहते है। एक पवित्र तीर्थ को भी गंगावतार कहते हैं।

गंगोद्भेद शब्द का अर्थ है- गंगा का उद्भवस्थान। इस प्रकार यह शब्द गोमुख अथवा गंगोत्री का पर्यार्य है।

गंगाक्षेत्र के दो अर्थ है। एक तो गंगा नदी स्वयं तथा दूसरा गंगा के प्रत्येक तट से दो कोस दूरी तक का क्षेत्र।

गंगा चिल्ली का अर्थ है गंग के आसपास रहने वाली चील (पक्षिविशेष)

''गंगाजः'' शब्द गंगापुत्र भीष्म एवं स्वामिकार्तिक का वाचक है। इसी प्रकार 'गंगादत्तः' शब्द भी इन्ही दोनों का वाचक है। गंगापुत्र तथा गंगात्मक भी समानार्थक हैं।

'गंगाद्वार' वह स्थान-विशेष है जहां सर्वप्रथम गंगा समतल भूमि में प्रवेश करती है। इसे मायापुरी अथवा हरिद्वार भी कहते है।

'गंगाधर' भगवान् शंकर अथवा समुद्र का नाम है। दोनों गंगा को क्रमशः शीश पर तथा हृदय पर धारण करते हैं।

'गंगापुत्र' शब्द का प्रयोग मृतव्यक्तियों के शब्दों का दाहसंस्कार करने वाले डोमों तथा गंगातीर्थ की यात्रा कराने वाले तीर्थपुरोहितो (पण्डो) के सन्दर्भ में होता है। गंगामृत (गंगा विभर्ति धरमतीति) कहते है शिव एवं सागर को। गंगामध्य तथा गंगायात्रा शब्दों का अर्थ भी सुस्पष्ट है। गंगासागर वह तीर्थविशेष है जहां गंगा समुद्र में विलीन

होती है।

गंगा का गंगिका और गगंका शब्द भी गंगा के ही अन्य रूप है। सच बात तो यह है कि गंगा से सम्बद्ध शब्दों की संख्या ही अनन्त है जैसे- गंगेश्वर,गांगेय,गागं, गंगामय,गंगापूत आदि।

'गंगादत्तः' शब्द भी इन्ही दोनों का वाचक है।

महाभारत के आदि पर्व में अध्याय ६८ में गंगा स्वयं शान्तनु से कहती है।

" स्वस्ति ते स्तु गमिष्यामि पुत्रं पाहि महावृतम् ।
मत्प्रसूतिं विजानीहि गंगादत्तमिमं सुतम् ।।" २४।।

लोकपरम्परा में आज भी 'गंगालाभ' शब्द मुक्ति का पर्याय माना जाता है। इसीप्रकार गांव-गिरावं की अनेक लोकोक्तियों में भी 'गंगा' शब्द पवित्रता,मुक्ति एवं पापक्षय आदि के अर्थ में प्रयुक्त दृष्टिगोचर होता है।

गंगा शब्द की व्यापकता-

सुवर्णभूमि,लावदेश,चम्पा,ताम्रपर्णी,यवद्वीप अपरान्तक प्रदेश तथा बाह्लीक आदि बृहत्तरभारत तथा सुदूर देशों में भारतीय-संस्कृति के प्रचार-प्रसार के साथ भारत के अनेक पवित्र तीर्थ,नदियाँ तथा सांस्कृतिक नगर भी उन देशों में गये।

लावदेश,(लोआस) के रामायण 'फा-लाक फा-लाभ' प्रिय लक्ष्मण,प्रिय राम में सं.डा (सीता) हनीमोन (हनुमान्)फा-फाली (प्रियवाली) साडर्वीय (सुग्रीव) सुआन-हुआन (रावण) आदि पात्रों के साथ ही साथ लंग्का (लंका) अयुथ्या (अयोध या)तथा खिटकिन जैसे (किष्किन्धा) नगरों के नाम भी मिलते हैं।

यह सचमुच विस्मय एवं आश्चर्य का विषय है कि चीन में बहने वाली नदी 'ह्वांगहो' का ठीक यही अर्थ है जो गंगा का है अर्थात् निरन्तर गमनशील। चीन की अन्यान्य नदियों सीकांग,मीकांग तथा यांगत्सीकांग आदि में भी गम् धातु की समानार्थक धातु का ही प्रयोग मिलता है।

इस सम्भावना का निषेध करना कठिन है कि इस्लामी देशों में अथवा अन्यान्य प्राचीन-संस्कृति वाले 'सुमेरियन,वेविलोनियन,हित्ती तथा असीरियन आदि देशों

में प्रह्मान किसी नदी का नामार्थ भी गंगार्थक हो अथवा गंगार्थ का समकक्ष हों।

गंगा संस्कृति के उदयबिन्दु से ही मुक्तिदायी कल्मषध्वंसिनी एवं पवित्रता की प्रतिमूर्ति रही है। यही कारण है कि दक्षिण के तीर्थों में गंगा,यमुना आदि को कल्पित किया गया। आज भी रामेश्वरम् तथा पुरी आदि तीर्थों में यह व्यवस्था देखी जा सकती है।

लोक जीवन और गंगा -

सामान्यतः नदियां लोकजीवन का मूल आधार सृष्टि के आदिकाल से रही है। यही कारण है कि विश्व की प्रमुख संस्कृतियां नदियों के किनारे ही प्रादुर्भूत और पल्लिवित होती रही है भारत वर्ष में सप्तपावन नदियों में प्रमुख गंगा लोकजीवन को आदिकाल से अनुप्राणित कर लोक संस्कृति को समृद्ध करती आ रही है। मानव के पुरूषार्थ चतुष्टय में धर्म,अर्थ के पश्चात् काम और मोक्ष की अवधारणा गंगा से ही फली भूत होती रही है। काम-तीर्थ रूप अनेक पावन नगर गंगा के तट पर अवस्थित होकर लोकजीवन के आर्थिक पक्ष को पुष्ट करते रहे हैं। इन काम तीर्थों से ही राष्ट्र का राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप समुन्नत हो सका है।

लोकजीवन का आधारभूत उत्तरापथ पुरातन १६ महाजनपदों से सर्वथा विख्यात रहा है। इन महाजनपदों में कुरूपंचाल,कौशल,वत्स,काशी,मगध,लिच्छवि,बंग,सुह्म आदि गंगा के पावन प्रवाह से प्राणवन्त होकर कृषि,पशुपालन,वाणिज्य,उद्योग धन्धों से जहां भौतिक समृद्धि के केन्द्रबिन्दु बने वहां इन्होंने सांस्कृतिक समुत्कर्ष का संस्पृश कर संसार को धर्म,दर्शन,साहित्य,विज्ञान (आयुर्वेद,रसायन,वनस्पति,जीवविज्ञान,ज्योर्तिविज्ञान, नक्षत्र इत्यादि) और ललित कलाओं का अदभुत अवदान दिया। इस सन्दर्भ में डा. कैलाश नाथ द्विवेदी की अवधारणा सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है।- दृष्टव्य ' गांगी संस्कृति' शोधलेख पांचाल नवांक १/२००० पृष्ट १७ से २३

साहित्य इतिहास और पुराण ग्रन्थों में उल्लखित गंगातटीय तीर्थो-गंगाद्वार (हरिद्वार या मायापुरी),कनरवल,गढ़मुक्तेश्वर,शोरों,कम्पिल,फारूखाबाद,कान्यकुब्ज (कन्नौज)

ब्रह्मावर्त (बिठूर)शिवराजपुर,कानपुर,प्रयाग,मिर्जापुर,काशी,मुंगेर,पाटिलपुत्र (पटना),भागलपुर,कलकत्ता,आदि काम तीर्थ नगरों से लोकजीवन प्रभूत प्रभावित परिलक्षित हैं। इन नगरों का सांस्कृतिक समुत्कर्ष अनेक रूपों में प्राप्त होता है। जिसमें उत्कृष्ठ वास्तु शिल्प के कलात्मक मूर्तियुक्त अनेक सुन्दर मन्दिर पक्के सांपानयुक्त रम्यघाट, सेतु (पुल), सुदृढ़ विशाल पुरातन दुर्ग, शिक्षाकेन्द्र,विश्वविद्यालय,न्यायालय,कारखाने,बहुमंजिले पक्के भवन, चौड़े राजमार्गों वाले नैनाभिराम नगर उल्लेखनीय है।

धर्मतीर्थ स्थल भी गंगा तटीय अपनी महत्वपूर्ण अवस्थिति से लोकजीवन को आदि काल से आकर्षित करते रहे हैं गंगा अपनी अनेक साहित्य सरिताओं को समंटकर संगम स्थल को सामान्यतः प्रयाग अभिधान देकर लोकजीवन को तप एवं दान आदि धार्मिक कार्यों में प्रवृत्त करती है इस दृष्टि से कर्णप्रयाग,देवप्रयाग,रूद्रप्रयाग,विष्णुप्रयाग, प्रयाग आदि पंचप्रयाग उल्लेखनीय है। तीन लोक से न्यारी होकर लोक जीवन को खिलाने वाली काशी के दशासुमेध,हरिश्चन्द्र,मणिकर्णिका,शिवाला,तुलसी,अशि आदि घाट इसी वैदिक अवधारणा की समपुष्टि करते हैं।

" गह्वरे (उपह्वरे) गिरीणां, संगमे नदीनां, धियो विप्रोऽजायात् ।।" (ऋग्वेद)

विश्व संस्कृतियों में सर्वश्रेष्ठ गांगी लोक संस्कृति और लोक जीवन की चारू छटा गंगा तटीय ऋतु या पुण्यतिथि के पर्वों,मेलों,दशहरा,कुम्भादि पर्वों के धार्मिक स्नानों यज्ञिय अवभृथों (स्नानों), में परिलक्षित होती है। कोटि-कोटि नर-नारी आवाल-वृद्ध - देश विदेश के कोने-२ से समिट कर गंगा की अमृत जलधारा में डुबकी लगाकर आनन्द विभोर होकर,समस्त भेदभाव को भूलकर आंचलिक वेशभूषा,खानपान,लोकगीत, लोकनृत्य,लोकवाद्यों आदि से गांगोया संस्कृति की असीम समन्वयात्मक सुषमा को प्रकट करते है। चाहे हरिद्वार का कुम्भ पर्व हो अथवा प्रयाग या ज्ञान विज्ञान की सांस्कृतिक राजधानी विश्वनाथपुरी काशी का गंगाभक्त जनसंमर्द,महिमामयी गांगी संस्कृति ने पुरातन काल से लोकमानस को अपने अचंल में समेटकर परम सुख शान्ति प्रदान की है।

अनेक आंचलिक ग्राम गंगा गीतों से गांगेया संस्कृति लोकजीवन और लोकसंस्कृति को प्रतिबिम्बित करती हुई इसकी विराट भावनात्मक एकतापूर्ण गौरव गरिमा को आत्मसात्-कर इन्द्रधनुषी रंग ग्रहण करती है। जहां संस्कृत के मूर्धन्य महाकवियों वाल्मीकि,वेदव्यास,कालिदास,भर्तृहरि,भवभूति दिङ्.नाग,शंकराचार्य,पण्डितराज जगन्नाथ,अब्दुलरहीम खानखाना, पं. विष्णुदत्त शुक्ल आदि ने गंगा के गौरव का गान करते हुये गांगी संस्कृति के विविध पक्षों को उजागर किया,वहीं हिन्दी साहित्य के गोस्वामी तुलसीदास,पद्माकर,रसखान,हरिशचन्द्र,रत्नाकर,पन्त,निराला दिनकर जैसे अनेक यशस्वी कवियों ने अपने सरस भावोद्गारों से अतीत के आलोक में गांगेया संस्कृति का संदर्शन कर उसकी पौराणिक,धार्मिक,सामाजिक,राजनैतिक एवं ऐतिहासिक महत्ता को प्रतिपादित किया।

गंगा के प्रति लोकजीवन की उद्भुत भक्ति,आस्तिकता,परमपद प्राप्ति की मनोकामना परिलक्षित होती है। जिसमें शाक्तों,शैवो एवं वैष्णों का परस्पर अन्तर्द्वन्द्व एवं मनोमालिन्य स्वतः समाप्त हो जाता है। आचार्य शंकर के शब्दों में जनजीवन की यह भव्य भावना इस प्रकार व्यक्त हुयी है।

" मातर्जाह्नवि शम्भुसंगवलिते मौलौ निधायाग्न्जलिम् ।
त्वन्तीरे वपुषोऽवज्ञानसमये नारासणाङ्घ्रिद्वमम् ।।
सानन्दं स्मरतो भव्यिति मम प्राणप्रयाणोत्सवे ।
भूयाद्भक्तिरविच्युता हरिहरद्वैताम्किा शाश्वती ।।

गंगाष्टृकम्, ६

आचार्य शंकराचार्य के शब्दों में आस्तिक लोकजीवन के मानस में कितनी असीम आस्था,श्रद्धा एवं भक्ति भावना गंगा के प्रति समायी हैं, कि पतितपावनी गंगा की महिमा स्वतः ही स्पष्ट हो जाती है।

" तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम् ।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं दृष्टुं न यमः शक्तः ।।

अनेक आंचलिक ग्राम गंगा गीतों से गांगेया संस्कृति लोकजीवन और लोकसंस्कृति को प्रतिबिम्बित करती हुई इसकी विराट भावनात्मक एकतापूर्ण गौरव गरिमा को आत्मसात्-कर इन्द्रधनुषी रंग ग्रहण करती है। जहां संस्कृत के मूर्धन्य महाकवियों वाल्मीकि,वेदव्यास,कालिदास,भर्तृहरि,भवभूति दिङ्.नाग,शंकराचार्य,पण्डितराज जगन्नाथ,अब्दुलरहीम खानखाना, पं. विष्णुदत्त शुक्ल आदि ने गंगा के गौरव का गान करते हुये गांगी संस्कृति के विविध पक्षों को उजागर किया,वहीं हिन्दी साहित्य के गोस्वामी तुलसीदास,पद्माकर,रसखान,हरिशचन्द्र,रत्नाकर,पन्त,निराला दिनकर जैसे अनेक यशस्वी कवियों ने अपने सरस भावोद्गारों से अतीत के आलोक में गांगेया संस्कृति का संदर्शन कर उसकी पौराणिक,धार्मिक,सामाजिक,राजनैतिक एवं ऐतिहासिक महत्ता को प्रतिपादित किया।

गंगा के प्रति लोकजीवन की उद्भुत भक्ति,आस्तिकता,परमपद प्राप्ति की मनोकामना परिलक्षित होती है। जिसमें शाक्तों,शैवो एवं वैष्णों का परस्पर अन्र्तद्वन्द्व एवं मनोमालिन्य स्वतः समाप्त हो जाता है। आचार्य शंकर के शब्दों में जनजीवन की यह भव्य भावना इस प्रकार व्यक्त हुयी है।

“ मातर्जाह्नवि शम्भुसंगवलिते मौलौ निधायाग्न्जलिम् ।
त्वन्तीरे वपुषोऽवज्ञानसमये नारासणाङ्घ्रिद्वमम् ।।
सानन्दं स्मरतो भव्यिति मम प्राणप्रयाणोत्सवे ।
भूयाद्भक्तिरविच्युता हरिहरद्वैताम्मिका शाश्वती ।।

गंगाष्टकम्, ६

आचार्य शंकराचार्य के शब्दों में आस्तिक लोकजीवन के मानस में कितनी असीम आस्था,श्रद्धा एवं भक्ति भावना गंगा के प्रति समायी हैं, कि पतितपावनी गंगा की महिमा स्वतः ही स्पष्ट हो जाती है।

“ तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम् ।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं दृष्टुं न यमः शक्तः ।।

गंगा के गौरव एवं महात्मय से लोकजीवन इतना अधिक प्रभावित हुआ हैं, कि उसकी अप्रतिहत गतिमयिता, आस्तिकता, उदारता, शुचिता, निश्छलता, स्वच्छता, स्निग्धता, पावनता आदि अनन्त गुणों से आदर्शोन्मुख लोकजीवन को इतना अधिक अनुप्राणित किया कि न केवल नाना नर-नारियों के गंगा,गंगापुत्री, गंगापुत्र, गंगाप्रसाद, गंगाधर, गांगेय, गंगादत्त, भागीरथ आदि पुरूषों के नाम अपितु नगरों (गंगाद्वार,गंगानगर तथा तीर्थस्थलों गंगोत्री) आदि के नाम भी लोकजीवन की पावनता के प्रतीक गंगा अभिधान क साथ जुड़ गये।

चरैवेति चरैवेति की असीम अवधारणा और अविरल गति-प्रगति की प्रतीक गंगा संसारी जनो को जगत में जीवन्त होकर नियन्त्रित गति और प्रगति का दिव्य सन्देश देती है। संक्षेप में कहा जा सकता हैं कि गंगा से लोकजीवन पर्याप्त रूप से प्रभावित पालित पोषित और अनुपाणित रहा है।

शोध प्रबन्ध की संक्षिप्त पृष्ठभूमि-:

शोध प्रबन्ध में विषय प्रवेश के अन्तर्गत गंगा का स्वरूप,उत्पत्ति,नदियों में श्रेष्ठता और लोकजीवन में गंगा के प्रवाह की मीमांसा करने के पश्चात् प्रथम अध याय के अन्तर्गत वैदिक वाड्.गम में गंगा के स्वरूप की तथ्यात्मक विवेचना की गयी है। ऋग्वेद में गंगा के स्वरूप एवं महत्व के अतिरिक्त अथर्ववेद,ब्राह्मण एवं उपनिषद् ग्रन्थों में गंगा के स्वरूप कीं गवेष्णा की गई है।

द्वितीय अध्याय के अर्न्तगत श्रीमद्भागवत, विष्णुपुराण,स्कन्दपुराण, ब्रह्माण्ड,वायुपुराण आदि पौराणिक साहित्य में गंगा के स्वरूप एवं माहात्म्य का अनुसं धानात्मक विवेचन किया है।

तृतीय अध्याय में रामायण तथा महाभारत में अंकित गंगा की उत्पत्ति, स्वरूप तथा प्रभाव का अनुसंधानात्मक पूर्ण अनुशीलन किया गया है।

शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय के अर्न्तगत परिवर्ती संस्कृत महाकाव्यों में गंगा के स्वरूप, सहायक सरितायें तटीय तीर्थ संगम आदि का निरूपण किया गया है।

पंचम अध्याय में संस्कृत के स्तोत्र साहित्य में गंगा का अनुसन्धानात्मक अध्ययन किया गया है। इस दृष्टि से आदि शंकराचार्य के अतिरिक्त पण्डितराज जगन्नाथ,अब्दुल रहीम खान खाना आदि के स्तोत्र काव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

षष्ठ अध्याय के अन्तर्गत गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्यों का अनुशीलन किया गया है जिसमें पण्डित विष्णुदत्त शुक्ल विरचित 'गंगासागरीमम्' , पाण्डे कृत 'रक्षत गंगाम्', चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य कृत 'गंगातरंगम्' डा. कैलाशनाथ द्विवेदी द्वारा विरचित -'गंगागरिमा' आदि रचनायें उल्लेखनीय है।

सप्तम अध्याय में 'गंगा सागरीमम्' के प्रणेता पं. विष्णु दत्त शुक्ल का अनुसन्धान पूर्ण जीवन परिचय,व्यक्तित्व एवं कृतित्व निरूपित हैं।

शोध प्रबन्ध के अष्टम् अध्याय में गंगासागरीयम् की साहित्यिक समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। जिसमें गंगासागरीयम् की कथावस्तु,काव्यसौष्ठव,भाषाशैली,छन्दोलंकार योजना,प्रकृति-चित्रण योजना,रसनिष्पन्ति आदि का अनुशीलन किया गया है।

शोध प्रबन्ध के नवम् अध्याय के अर्न्तगत गंगा पर आधृत अन्य प्रकीर्ण साहित्य का अनुशीलन किया गया है। जिसमें गद्यकाव्य,चम्पू,नाटक आदि में गंगा विषयक विविध सन्दर्भो का शोधपूर्ण विवेचन किया गया है।

अन्त में शोध प्रबन्ध के उपसंहार में शोध निष्कर्षों का संक्षिप्त निरूपण किया गया है।

प्रथम

अध्याय

वैदिक वाङ्.मय में गंगा

प्रथम अध्याय

वैदिक वाड्.मय में गंगा-

भारतीय समाज में तो वेदों का समादर है, ही अन्यान्य देशवासी मनीषी भी वेदों की महत्ता स्वीकार करते है। यद्यपि इस सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण भिन्न है। भारतीयों की दृष्टि में वेद विद्वान् तथा धर्म के मूल है। उनका प्रमाण सर्वथा अकाट्य और पाश्चात्य है। उन्हें वस्तुतः साक्षात् ईश्वर का स्वरुप माना जाता है। पाश्चात्य विद्वान उनकी प्राचीनता के आधार पर भाषा विज्ञान की दृष्टिकोण्से उन्हें पर्याप्त महत्व देते हैं। पाश्चात्य विचारकों[1], चिन्तकों और प्रतिभा नण्डित मनीषियों ने वेद चतुष्टय और वेदान्त के दार्शनिक एवम् आध्यात्मिक महत्व को भूरि-भूरि प्रशंसा की है। भारतीय शास्त्रकारों में प्रायः सभी ने वेदों को स्वतः प्रमाण माना है।

वैदिक वाड्.मय बहुत विशाल है। इसके अर्न्तगत चार वेद (संहितायें) ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् ग्रन्थ आते हैं। इनमें ऋग्वेद सबसे प्राचीनतम है। इसकी रचना १५००-१००० बी०सी० के मध्य स्वीकार की जाती है। ऋग्वेद के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इस समय आर्यो की कर्मभूमि सप्त सैन्धव प्रदेश थी और सम्भवतः गंगा आर्यों की पूर्वी सीमा थी। अतः इसमें गंगा का उल्लेख नगण्य है। ऋग्वेद के अतिरिक्त समस्त वैदिक साहित्य में जिसे इतिहासकार उत्तर वैदिक साहित्य के नाम से जानते हैं तथा जिसकी रचना १००० - ५०० बी०सी० के मध्य हुई मानते है। ऋग्वेद की तुलना में गंगा और यमुना का उल्लेख अधिक बार मिलता है। सम्भवतः ऐसा इसलिये हुआ होगा क्योंकि इस समय आर्यो की कर्मभूमि सप्त सैन्धव के स्थान पर कुरु- पांचाल क्षेत्र हो गयी थी, अतः आर्य सप्त सैन्धव क्षेत्र की तुलना में गंगा-यमुना के मध्य भाग से अधिक परिचित हो चले थे।

1- Maxmular - India what can it teach us deusus Schoponhaur.

ऋग्वैदिक गंगा का स्वरूप -

वेदों में प्राचीनतम एवं प्रथित ग्रन्थ ऋग्वेद है। जो १० मण्डलों में १०२८ सूक्तों के रुप में संकलित है। ऋग्वेद के अध्ययन से प्रतीत होता है, कि आर्य इस समय मुख्य रुप से सप्त सैन्धव प्रदेश में निवास करते है। परिणाम स्वरुप वे इसी क्षेत्र में प्रवाहित होने वाली नदियों से परिचित थे, अतः उन्होने प्रमुख रुप से इसी क्षेत्र में प्रवाहित सात प्रमुख नदियों का विस्तृत और गरिमामय उल्लेख किया है। ये नदियां अविभाजित पंजाब से कुछ अधिक विस्तृत क्षेत्र में प्रवाहित थी। ऋग्वेद[1] में अफगानिस्तान की चार प्रमुख नदियों १. कुभा (काबुल) २. सुवास्तु (स्वात्) ३. क्रमु (कुर्रम) तथा ४. गोमती (गोमाल) के अतिरिक्त सिन्धु, सरस्वती, दृषद्वती (धग्गर) तथा शतुद्रि (सतजल), विपाशा (व्यास), परुष्णी (रावी), असिक्नी (चेनाव) और वितस्ता (झेलम) नदियों का उल्लेख प्राप्त होता है। सिन्धु और सरस्वती नदियों की महिमा का वर्णन इस ग्रन्थ में पठनीय एवं दर्शनीय है।

''डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी'' के अनुसार,'' वर्तमान काल में जो महत्व गंगा को प्राप्त है, वैदिक काल में वही महत्व सरस्वती को प्राप्त था।''[2]

अन्य मण्डलों के विपरीत ऋग्वेद के दशम् मण्डल में एक पूरा सूक्त ही सरिताओ के स्तवन में प्रयुक्त हुआ हैं। दशम् मण्डल के पचत्तरवें सूक्त 'नदी सूक्त' कहलाता है, जिसमें सिन्धु तीरस्थ किसी 'प्रैयमेध' नामक त्रषि ने अपनी सहायक नदियों से संचलित सिन्धु से प्रार्थना की है। इस सूक्त में अनेकानेक नदियों में गंगा का सर्वप्रथम उल्लेख आया है। सम्पूर्ण मन्त्र यत्र दृष्टिगोचर होता हैं।

इयं में गंगे! यमुने! सरस्वती ! शतुद्रि! स्तोमं सचत परुष्ठया।
असिक्त्या मरुद् वृधे! वितस्तया र्जीकाये! शृणुह्यासुवौयया।।

(ऋग्वेद - १०/७५/५)

१. ऋग्वेद - २/४१/१६

२. डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी ऋग्वैदिक भूगोल, १९८५ कानपुर, पृष्ठ १४३

ऋग्वेद में इसी एक स्थान पर गंगा का नाम स्पष्ट रुप से आया है किन्तु अधिकाशं विद्वान ऋग्वेद के प्रथम और अन्तिम मण्डल को भाषागत संरचना के आधार पर अर्वाचीन और नूतन मानते है। दसवें मण्डल के अतिरिक्त
" अधि वृबुः पणीनां वर्विष्टे मूर्धन्य स्मात्। उरुः कक्षो न गाड्.ग्यः।"

में गगांतीरोत्पन्न व्यक्ति के अर्थ में प्रयुक्त 'गाड.ग्य' शब्द से नदी का संकेत माना जा सकता हैं, पर यह स्पष्ट नहीं है।

ऋग्वैदिक काल में गंगा का महत्व -

यद्यपि गंगा और यमुना का उल्लेख सिन्धु की सहायक तथा सरस्वती आदि नदियों के साथ हुआ है तंथापि वैदिक कालीन सप्त सैन्धव प्रदेश की प्रधान सात नदियों के समान उन्हें उतना महत्त्व नही मिला जितना सरस्वती, शतुद्रि, परुष्णी, विपाशा, असिक्नी, वितस्ता और सिन्धु को।

वास्तव में ऋग्वैदिक काल में आर्यो का कार्यक्षेत्र प्रधानतया सप्त सैन्धव प्रदेश ही था। जिनका प्रसार अफगानिस्तान से लेकर सैन्धव प्रदेश तक था तथा गंगा आर्यो की पूर्वी सीमा थी जिससे वे पूर्ण रुपेण अनिभिज्ञ थे। ऋग्वेद[१] में गंगा का उल्लेख नगण्य है।

अतः ऋग्वैदिक गंगा को एक गौण नही के रूप में प्रस्तुत करते हुये डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी लिखते है कि -' लुडविग ने इसे आपगा से अभिन्न समझकर आपमार सरस्वती की (सहायक) से समीकृत करते है। यह समीकरण निराधार होने के कारण मान्य नहीं कहा जा सकता है। यह (गंगा) वर्तमान गंगा नदी से भिन्न नहीं है, किन्तु इसका आकार अवश्य परिवर्तित- परिवर्धित हो गया हैं।[२] प्राचीन भौगोलिक विशेषज्ञों के मतानुसार[३] यह सरिता हिमाद्रि पर्वत श्रेणियों से

---

१. ऋग्वेद - ०-७५-५
२. ऋग्वेद ६-४५/११ - "अधि वृषुः पणीनां वषिष्ठे मुर्धन्य स्यात्।
ऊरुः कक्षो न गाड्.ग्यः।।"
३. डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी - ऋग्वैरिदक भूगोल, १९८५ कानपुर पुष्ठ १५३

निकलकर थोड़ी दूर ही प्रवाहित होकर (वर्तमान हस्तिनापुर के समीप) पूर्वी समुद्र (आरावत) में गिरती थी।

वैदिक कालीन भौगोलिक स्थिति की चर्चा करते समय इस काल में इस बात का ध्यान रखना होगा[१] कि आधुनिक तथा वैदिक नदियों के नामों में साम्य होने पर भी यह नही कहा जा सकता है कि उनका प्रवाह मार्ग प्राचीन काल की भाँति वर्तमान में भी है, यह तो प्रसिद्ध है ही कि नदी घाटियों की स्थिति परिवर्तित होती रहती है।[२] इसी कारण भवभूति किसी स्थान की पहचान और मान्यता के लिये नदियों की अपेक्षा पर्वतों की अधिक पुष्ट प्रमाण मानते है। अतः सम्भव है कि अपने अल्प प्रवाह और सुदूर पूर्व स्थिति के कारण ऋग्वेद में गंगा को पर्याप्त महत्व न दिया गया हो।[३]

अथर्ववेद में गंगा -

२० काण्डों, ७३१ सूक्तों और ५६८७ मन्त्रों का विषद् संग्रह अथर्ववेद, वैदिक वाङ्.मय में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। वेदों में अन्यतम् अथर्ववेद एक भूयसी विशिष्टता से संचालित है, ऋग्वेदीय इत्यादि तीनों वेद आत्मिक और तात्कालिक फल देने वाले है, परन्तु अथर्ववेद ऐहिक फ़ल देने व प्रदान करने वाला भी हैं।[४]

प्राचीन वैदिक साहित्य में अथर्ववेद को निगद, ब्रह्म, अथर्व और छन्द भी कहा गया है। निगद नाम इसकी सरलता के कारण है, इसे निगद नाम से संज्ञित किया गया है। इसका ब्रह्मवेद नाम इसलिये पड़ा क्योंकि यज्ञ का अधिष्ठाता ब्रह्मा इसी वेद के साथ नियुक्त होता है। अथर्ववेद में ज्ञान-विज्ञान का भण्डार

---

१. डॉ० कामेश्वर प्रसाद - भारत का इतिहास, १६६३ पटना पृष्ठ ६५
२. डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी - ऋग्वैदिक भूगोल, १६८५ कानपुर पृष्ठ १५३,१५४
३. आचार्य बलदेव उपाध्याय -वैदिक साहिव्य और संस्कृति, १६७३ वाराणसी पृष्ठ ३६४
४. अथर्ववेद - ६-२४-१

समाहित है। परिवार की समृद्धि, ब्रह्म विज्ञान, प्रकृति-विज्ञान, क्रिया-योग, पुर्नजन्म, कर्म-सिद्धान्त, न्याय-योग, मोदन आदि जीवनोपयोगी सभी विषयों पर अथर्ववेद समुचित उपयोगी प्रकाश डालता है।

अथर्ववेद की रचना के समय आर्यो का पूर्वी भारत की ओर प्रसार प्रारम्भ हो चुका था। अब सप्त सैन्धव प्रदेश के स्थान पर कुरु पांचाल क्षेत्र उनकी कर्मभूमि हो चली थी। गंगा-यमुना का मध्य भू भाग (दोआब) उनके जीवन का अभिन्न अंग बन चुका था। अथर्ववेद में गंगा जल को एक महौषधि बताया गया है।

''हिमव्रतः प्रस्तवन्ति सिन्धौ समह संगमः।

आयोह मह्मं तेद्देवीर्ददन हृदद्योत भेषजम्।।''(सायण भाष्य का भाषानुवाद)

गंगा आदि नदियों के जल हिमालय पर्वत से बहते है (और उनका) समुद्र में समान रूप से संगम है। वह गंगाजल दिव्य जल है अतः मुझे हृदय के दाह को दूर करने वाला ओर प्रकाशमय बनाने वाला औषध (ददून्) प्रकार को प्रदान करें।

अथर्ववेद के अधोलिखित मंत्रों में गंगा एवं गंगाजल की प्रभविष्णु अभिव्यंजना विद्यमान है, जिससे गंगा गौरव स्वतः सुस्पष्ट होता है -

१. अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्

अपायुत प्रशास्तिभिरथा भवथ वाजिनो गावो, भवथ वाजिनीः।।[१]

-काण्ड १, प्रया० १, अनु० १, सूक्त ४-४

२. सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वावा नद्यः स्थनं

दत्त नस्तस्य भषेजं तेना वो भुनजायहै।।[२]

-काण्ड ६, प्रया० १३, अनु० ३, सूक्त २४

---

१. प्रस्तुत मंत्र में जिस भेषजीय जल की ओर संकेत है, वह जल गंगा का ही होना सम्भव है।

२. सिन्धुपत्नी तथा सिन्धुरात्री द्वारा यहां गंगा को ही संकेतित किया गया है।

३. शं ते सूर्य आतपतु शं वातो वातु ते हृदे।

शिवा अभि क्षरनतु त्वापो दिव्याः पयस्वतीः।।[१]

-काण्ड ८, प्रया० १८, अनु० १, सूक्त२-१४

४. तव यक्षं पशुपते अप्स्वन्तस्तुभ्यै।

क्षरन्ति दिव्या आपो वृधे।।[२]

-काण्ड ११८, सूक्त २/२४

५. ता अधरा दुदीचीराववृत्रन् प्रजानतीः पथिभिर्द्रेवयानैः।

पर्वतस्य वृषभस्याधि पृष्ठे नवाश्चरन्ति सरितः पुराणीः।।[३]

-काण्ड १२, सूक्त २-४१

६. आपः सप्त सुस्रुवुर्देवीस्ता नो युंचन्तूवंहसः।[४]

-काण्ड १४, सूक्त २-४५

ब्राह्मण ग्रन्थों में गंगा -

परवर्ती वैदिक वाड्.मय के अन्तर्गत ब्राह्मण ग्रन्थों में गंगा का उल्लेख मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थ प्रथम दृष्ट्या यज्ञ की विधि को विस्तार से वर्णन करते प्रतीत होते हैं। इसमें सन्देह वही है कि यज्ञ की इति कर्तव्यता बताने में इनका मुख्य योगदान है, परन्तु वेद मन्त्रों के उपर्युक्त अर्थ करने में जो सहायता इन ग्रन्थों से मिलती है। वह आश्चर्यजनक है, वेदागों की प्रथम रचना का मूलाधार यही ब्राह्मण ग्रन्थ है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में उपलब्ध भौगोलिक विवरण से स्पष्ट होता है कि इन ग्रन्थों का उदय स्थान कुरु- पांचाल प्रान्त तथा सरस्वती नदी का प्रदेश था। 'ताण्ड्य ब्राह्मण' में गंगा के पश्चिम में सारस्वत प्रदेश का अत्यन्त विशद और

---

१. 'दिव्यपय' केवल गंगा का ही है, अन्य नदियों का नहीं।
२. दिव्यजल का, जनकल्याणार्थ क्षरण करना गंगा का ही वैशिष्ट्य है।
३. यह वर्णन गोमुख से उद्भूत पुराण-नदी गंगा को ही संकेतित करता है।
४. हिमालय में गंगा की सात धारायें प्रसिद्ध है।

विस्तृत विवरण मिलता है, जिसमें बताया गया है कि सरस्वती नदी के लुप्त होने का स्थान 'विनशन' तथा पुनः उद्गम स्थल को 'लक्ष प्रास्तवण'[1] कहा गया है। यमुना के बहने के प्रदेश को 'कारपचव' नाम से पुकारा गया है।

सबसे महत्वपूर्ण संकेत कुरुक्षेत्र को प्रजा पति की वेदी मानना हैं। (एतावती वाव प्रजापतेर्वदियावत कुरुक्षेत्रमिति)

कुरुक्षेत्र को प्रजापति की वेदी मानने से स्पष्ट होता है कि यज्ञयाग की पूर्ण प्रतिष्ठा इसी क्षेत्र में हुई थी और इसी क्षेत्र में ब्राह्मण ग्रन्थों का संकलन हुआ, कुरुक्षेत्र के ब्राह्मण कालीन आर्यो की मुख्य कर्मभूमि हो जाने के कारण आर्य गंगा से परिचित हो चले थे। अतः ब्राह्मण ग्रन्थों में गंगा का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होने लगता हैं। यथा-शतपथ (१३-५-४-११), जैमिनीय ब्राह्मण (३-१८३) इन प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थों में शतपथ ब्राह्मण के अन्तर्गत गंगा की उत्पत्ति, महत्ता, पावनता और यज्ञिय क्रियाओं के सम्पादन हेतु उपादेयता विशेष रुप से व्यंजित है, जिस पर लुडविग, एरियन, मैक्रिण्डल प्रभृति पाश्चात्य विद्वानों का विचारपूर्ण अभिमत सर्वथा समीचीन प्रतीत होता है। तैत्तिरीय आरण्यक (२-१०) में गंगा का उल्लेख प्राप्त होता है। शतपथ ब्राह्मण १३/५/४/१० पर द्रष्टव्य महाभाष्य (१/१/६) योगिनी तंत्र (१-६,२-१,२-८,२-५) तैत्तिरीय आरण्यक (२-२०) का सन्दर्भ जिसमें गंगा का स्पष्ट उल्लेख है। एरियन ने मेगस्थनीज का हवाला देते हुये गंगा तथा उसकी सहायक नदियों का विस्तृत परिचय दिया है द्रष्टव्य -मैंक्रिडल प्रणीत एश्येण्ट इण्डिया पृष्ठ १६०।

उपनिषदों में गंगा वर्णन -

उपनिषद् वेदों के अन्तिम भाग है तथा तात्विक दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रतिपादक होने के कारण 'वेदान्त' नाम से सुविख्यात है। वास्तविक

---

१. ताण्डय - २५-१३-३

उपनिषदों की संख्या के विषय में पर्याप्त मतभेद है। 'मुक्तिकोपनिषद्' के अनुसार उपनिषदों की संख्या १०८ है, परन्तु आद्य-शंकराचार्य ने जिस १० उपनिषदों पर भाष्य लिखे हैं। वे प्राचीनतम् एवं प्रामाणिक माने जाते है, उनके नाम व क्रम इस प्रकार है -

> "ईश केन कठ प्रश्न मुण्ड माण्डूक्य तिन्तिरिः।
>
> ऐतरेयं च छान्दोगयं ब्रहदारण्यकं दश।।"

इनके अतिरिक्त कौषीतकि उपनिषद श्वेताश्वतर तथा मैत्रायणीय भी प्राचीन उपनिषदों के रुप में मान्य हैं, क्योंकि शंकराचार्य ने अपने ब्रह्म सूत्र भाष्य मे उपर्युक्त १० के अतिरिक्त इनका भी उल्लेख किया है।

उपनिषदों के अध्ययन से तत्कालीन भौगोलिक स्थिति पर जो प्रकाश पड़ता हैं, उससे प्रतीत होता है कि इनकी रचना मध्य देश के कुरु- पांचाल प्रदेश से विदेह प्रदेश के मध्य हुई थी। इस समय आर्य निवास से गान्धार नितान्त दूर पड़ने लगा था क्योंकि छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार किसी विज्ञ के निदेशानुसार ही मनुष्य गान्धार पहुँच सकता है।

उपनिषद् काल में वैदिक सभ्यता का प्रसार पूर्व दिशा की ओर होने लगा था। पं० बलदेव उपाध्याय के मतानुसार इसका एक सम्भाव्य कारण यह रहा होगा कि भौगोलिक स्थिति में परिर्वतन होने के कारण पूर्व सागर सूख गया तथा उसके स्थान पर गांगेय प्रदेश की ठोस भूमि ऊपर निकलकर विभिन्न प्रान्तों का स्वरुप धारण करने वाली होने लगी थी।[१]

इस विषय में एक सुन्दर आख्यायिका शतपथ ब्राह्मण (१-४-१-१०) में दी गयी है। जिसका साराशं है - 'विदेध माधव' वैश्वानर अग्नि को मुख में धारण किया जो धृतका नाम लेते ही उनके मुख से निर्गत होकर पृथ्वी पर आ

---

१. आचार्य बलदेव उपाध्याय - वैदिक साहित्य एवं संस्कृति १९७३, वाराणसी पृष्ठ संख्या ३७९

पहुँची। इस समय विदेध माधव सरस्वती के तट पर निवास करते थे। वह अग्नि पूर्व दिशा की ओर जलाता हुआ आगे बढ़ा तथा नदियों को जलाता गया किन्तु वह 'सदानीरा' नदी को नहीं जला सका, जो उत्तर गिरि (हिमालय) से बहती थी, अग्नि के द्वारा दग्ध न होने के कारण उस काल में ब्राह्मण उसके पार नही जाते थे।

छान्दोग्योपनिषद् में 'नदी समुद्र' दृष्टान्त द्वारा 'तत्वमसि' का उपदेश देते हुये कहा गया है हे सोम्य! ये पूर्व वाहिनी नदियाँ पूर्व दिशा में बहती है और पश्चिम वाहिनी नदियाँ पश्चिम दिशा को बहतीं है, वे समुद्र से समुद्र की ओर ही जाती है।[1]

पूर्व की ओर बहने वाली नदियों के रूप में स्पष्टतः गंगा-यमुना का वर्णन है, इस समय गंगा तट पर बसे हुये विशिष्ट नगरों से भी आर्य परिचित हो चले थे। कुरुओं की राजधानी 'आसन्दीवन्त' मध्य प्रदेश में पांचालों की राजधानी 'काम्पील (कपिल) तथा वरणावती (वरुणा) के तीरस्थ काशियों की राजधानी 'काशी' का उल्लेख अनेक बार प्राप्त होता है।

मुण्डकोपनिषद में गंगा का विस्तृत वर्णन मिलता है।

अतः समुद्रा गिरयश्च सर्वे स्यात्स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरुपाः।
अतश्च सर्वा औषधयो रसश्च येनैष भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा।।

मुण्ड०- २/१/६

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे स्तं गच्छति नामरुपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरुपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।

मुण्ड० - ३/२/८

इन मंत्रों में भी "सिन्धवः" तथा नद्य से गंगादि नदियों का ही अभिप्राय है।

---

१. "छान्दोग्य उपनिषद् - दशम काण्ड ११-११
इमाः सोम्य! नधः पुरस्तात्प्राच्यः स्पन्दन्ते।
पाश्चात्प्रतीच्यस्ताः समुद्रात् समुद्र मेवा पियन्ति।।"

समीक्षा-

गंगा वैदिक कालीन सप्त सैन्धव प्रदेश की पूर्वी सीमान्त नदी थी, जिसका पूर्व से पश्चिम की प्रमुख नदियों के साथ गंगा तटवासी जन (गाङ्.ग्य) के रुप में उल्लेख हुआ है। गंगा के लिये इस समय प्रयुक्त अन्य अभिधान जाह्नवी का भी ऋग्वेद में तथा शतपथ ब्राह्मण १३/४/५/११ के अतिरिक्त उपनिषद् ग्रन्थों में गंगा का उल्लेख हुआ हैं, यद्यपि गंगा और यमुना नदियों का उल्लेख सिन्धु की सहायक तथा सरस्वती आदि नदियों के साथ हुआ है, तथापि वैदिक-कालीन सप्त सैन्धव प्रदेश के प्रधान सात नदियों के समान इन्हे उतना महत्व नहीं मिला है, जितना सरस्वती, शुतुद्रि, परुष्णी, विपाशा, असिक्नी, वितस्ता, सिन्धु को।

गंगा का उद्गम मध्य हिमालय की १२८०० फीट ऊँचाई पर केदारनाथ के उत्तर में (३०̊ - ५६ फी० अ० ७९̊ -४५ फी० द०) अवस्थित गंगोत्री 'गोमुख' नाम की १६ मील लम्बी हिम कन्दरा से हुआ है। प्रारम्भ में २ गज चौड़ी १५ इंच गहरी भागीरथी नाम से अपनी सहायक जाह्वी एवं भिल्लांगना को मिलाकर प्रथम १८० मील पर्वतीय प्रबल प्रवाह के पश्चात टेहरी के नीचे देवप्रयाग में अलकनन्दा को आत्मसात् करती है। देवप्रयाग से ही इस संयुक्त तीव्र प्रवाह को गंगा कहा जाता है। हरिद्वार (गंगाद्वार) में गंगा के वेगपूर्ण प्रवाह का अवतरण मैदानी भाग में होता हैं, जहाँ से यमुना-संगम प्रयाग तक यह दक्षिण-पूर्वाभिमुख बहती हुई उत्तर में सरयू (घाघरा) राप्ती, गण्डकी तथा दक्षिण से सोन (शोण) का जल लेती हुई, राजमहल पहाड़ियों के पास दक्षिण को मोड़ लेकर १५५० मील का लम्बा मार्ग तय कर भागीरथी एवं हुगली जैसी शाखाओं में बँटकर पूर्वी सागर बंगाल की खाड़ी में विश्राम करती है। ऋग्वेद के आधार पर ज्ञात होता है, पूर्वी समुद्र आरावत के पास गंगातट पर आर्यो की बस्तियाँ कम बसीं थीं, वृणु आदि पणियों का ही इसके कछारों में निवास था।

द्वितीय

अध्याय

पौराणिक साहित्य में गंगा

द्वितीय अध्याय

पौराणिक साहित्य में गंगा-

पुराण, वैदिक तथा लौकिक संस्कृत वाड्.मय का मध्यवर्ती साहित्य है। पुराणों की भाषा से यह सुनिश्चित हैं कि इनका प्रणयन सम्भवतः महर्षि पाणिनि से पूर्व हुआ क्योंकि अष्टाध्यायी के नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन इनमें नहीं मिलता है।

प्राचीन भारतीय इतिहास को जानने का एकमात्र स्तोत्र पुराण ही है। यह बात और है कि अधिकाशं पाश्चात्य संस्कृतज्ञ पुराणों को प्रामाणिक नहीं मानते। उनकी दृष्टि में पुराण प्रबन्धकल्पना पर अधिक आश्रित हैं। उसमें यथार्थ इतिहास कम है। इस सन्दर्भ को लेकर प्रारम्भ से ही पाश्चात्य विद्वानों के दो दल रहे हैं।

प्रो० मैक्समूलर ने भारत में सही इतिहास न लिखे जाने का कारण बताते हुये कहा कि भारतीयों का जीवन के प्रति दृष्टिकोण वाले थे, फलतः उनके जरिये यह जीवन ही सत्य था, सब कुछ था परन्तु आत्मवादी भारतीयों के लिये यह जीवन एक मिथ्या प्रतिभास मात्र था स्वप्न था। सम्भवतः जीवन के प्रति इसी अनास्था के कारण भारतीयों ने तथाकथित इतिहास लिखा ही नहीं।

परन्तु प्रो० मैक्समूलर के मन्तव्य का विरोध अनेक पाश्चात्य मनीषियों ने ही किया है। पुराण- वाड्.मय के समालोचक प्रो० राजेन्द्र चन्द्र हाजरा महोदय ने पाश्चात्यों के इतिहास -विरोधी मत का न केवल खण्डन किया बल्कि राजतंरगिणी में उल्लिखित प्राचीन भारतीय इतिहास के स्त्रोतों की भी समीक्षा की।

महाकवि कल्हण स्वयं स्वीकार करते है कि उनकी राजतरंगिणी पूर्ववर्ती ऐतिहासिक कृति ''नीलमत पुराण'' पर आधारित है। नीलमत पुराण में प्राचीन कश्मीर राजवंशों का इतिवृत्त संकलित था। दुर्भाग्यवश यह कृति

अब उपलब्ध नहीं है।

नीलमत पुराण में अतिरिक्त कल्हण में प्राचीन इतिहास के जिन स्त्रोतों में उल्लेख किया है उनमें प्रमुख है- १. शिला शासनम् २. ताम्रशासनम् ३. प्रस्तरलेख ४. दानपत्रम् आदि।

पुराणों में वर्णित इतिहास के प्रतिलोगों की अनास्था का सम्भवतः सबसे बड़ा कारण हैं पुराणों का प्रतिपाद्य तथा उनकी प्रतिपादन शैली। पुराणकार के रूप में प्रसिद्धि एक मात्र महर्षि कृष्णद्वैपायन व्यास की हैं। तपः पूत ऋषि त्रिकालदर्शी होने के कारण भूत-भविष्य-वर्तमान तीनों का प्रकाशन करते थे। गोपित तथ्यों एवं अनुभूतियों को भी प्रकट कर देते है। भौतिकता से ग्रस्त संकीर्ण दृष्टिवाले पाश्चात्य विद्वानों को भारतीय ऋषियों का यह चमत्कार प्रायः समझ में नहीं आता उन्हें पुराण शब्द का व्युत्पत्ति निमित्तक वह अर्थ सम्भवतः विश्वसनीय नहीं लगा होगा, जिसमें पुरा अव्यय का अर्थ अतीत-अनागत दोनों बताया गया है।[1]

पुराणों की प्रतिपादन शैली भी इतिहास की तरह शुष्क तथा तथ्य मात्र पर्यवसायिनी नहीं हैं। पुराणों में भी पद-पद पर ललित काव्यांश हैं। फलतः उनमें उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष तथा अतिशयोक्ति आदि अंलकारों की भरमार हैं। ऐसे सन्दर्भों में पुराणकार का सही मन्तव्य समझने के लिये विवेक की आवश्यकता हैं। अन्यथा लोग "योजनो" की गणना से ही व्यामूढ़ हो उठते हैं।

पुराणों में प्रयुक्त अनेक शब्दों का अर्थ भी गूढ़ हैं। उदाहरणार्थ सहस्र तथा कोटि शब्द! इन्हें प्रायः लोग संख्यावाची मानते और समझते है परन्तु पौराणिक वाड्.मय में इन्हें पूर्ण तथा प्रायः के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। जब पुराणकार यह कहता है कि भीम की भुजाओं में दस हजार हाथियों का बल था, तो उसका अर्थ है कि भीम पूर्णतः दस हजार हाथियों के बराबर शक्तिसम्पन्न

---

१. पुरा अतीतानागतम् अणति कथयतीति पुराणम्।

थे। इसी प्रकार राम द्वारा पिता दशरथ की भी अवशिष्ट आयु ''ग्यारह हजार वर्ष'' भोगने का अर्थ है कि उन्होने अपनी पूर्णायु ''१२५ वर्ष'' के साथ ही साथ महाराज दशरथ की पूर्णायु के अवशिष्ट पूरे ग्यारवह वर्षो का भी भोग किया अर्थात् १३६ वर्ष तक जीवित रहे।

अतिश्योक्ति तथा तकनीकी शब्दों का वास्तविक अभिप्राय न समझने के कारण लोक प्रायः सम्पूर्ण पुराण-वाड्.मय को अतिरंजित, कपोलकल्पनाश्रित तथा अविश्वसनीय मान बैठते है, परन्तु इस समस्या का समाधान मिल जाने पर भी पुराण गूढ एवं जटिल ही ज्ञात होते है क्योंकि इनमें सूर्य, चन्द्रमा, पवन, अग्नि, पर्वतों, गंगा पृभृति नदियों तथा अन्यान्य तत्वों को व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है। आज जिन्हें हम प्रकृति के रूप में देखते हैं उन्ही को पुराणों में व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया हैं। ये व्यक्तित्व इतने जीवन्त है कि उन पर अविश्वास किया ही नहीं जा सकता।

यदि भीष्म राजा शान्तनु तथा गंगा के पुत्र है तो गंगा का व्यक्तित्व कैसे नकारा जा सकता है। निश्चय ही या तो नारी गंगा नदी है अथवा गंगा नामवाली अन्य कोई महिला! क्या गंगा इतनी जीवन्त है' यह एक समस्या है।

शिव की अर्धागिनी पार्वती हिमालय एंव मेना की पुत्री है। मैनाक पार्वती का भाई है। सूर्य, चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि, मंगल तथा पृथ्वी आदि ग्रह मात्र ही नहीं बल्कि जीवन्त व्यक्तित्व हैं। भारतीय देवशास्त्र से लेकर पुराणमिथकों तक इन व्यक्तियों का व्यवहारिक रूप हम पाते हैं। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इन 'मिथकों' का रहस्य क्या हैं यदि ये प्राकृतिक उपादान सचमुच इतने शाश्वत तथा जीवन्त हैं तो इनका व्यक्तित्व अब क्यों नहीं दृष्टि-गोचर होता।

इस प्रश्न का उत्तर किसी मूर्ख-तर्कवादी, प्रत्यक्षप्रमाणलोभी को नहीं समझाया जा सकता क्योंकि यह इतना सूक्ष्म विषय है कि इसमें प्रवेश करने के लिये महान् आस्था, अतीन्द्रिय ज्ञान तथा तपोबल की आवश्यकता हैं जो कि

निश्चय ही आज, विज्ञान के मद में ऐसे मूढ़ मानव के पास नहीं है।

चार्वाकमतानुयायी दार्शनिक ऐसे ही मूर्ख थे, जिन्हें अन्त तक शरीर तथा आत्मा का पार्थक्य समझ में नहीं आया। जैसे अग्निग्रस्त काठ को जलता देखकर मूर्ख व्यक्ति यह कहे कि " काठ जल रहा है" सत्य यह है कि जलती केवल आग है मात्र साहचर्य से यह भ्रान्ति उत्पन्न होती है। ठीक उसी प्रकार आत्मा से समन्वित शरीर को ही चार्वाक आत्मा मान बैठे जबकि शरीर से आत्मा सर्वथा पृथक् है।

सत्य वही नहीं है जो प्रत्यक्ष सिद्ध हो। सत्य वह भी होता है जो परोक्ष हो। आज के सूर्योदय की सत्यता तो प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध है, परन्तु कल होने वाला सूर्योदय भी, परोक्ष होते हुये भी उतना ही सत्य है आखिर क्यों इसलिये कि वह आप्त प्रमाण (Testimonial Knowledge) में सिद्ध है। सारे धर्म - ग्रन्थ, ऋषि मुनि, चिन्तक और विद्वान चूँकि यह कहते रहे हैं कि हर रात के बाद सूर्योदय होता है तथा हर दिन के बाद रात होती है, बस इतने मात्र से "कल का सूर्योदय" एक स्थापित सत्य हैं।

अतिभौतिक जगत् की सारी अनुभूतियाँ, जीवन-मरण का चक्र तथा देवशास्त्र विषयक सारी समस्यायें इसी शब्द प्रमाण से समुचित, सत्य तथा तर्कसंगत सिद्ध होती है। इसी आप्तप्रमाण के आधार पर हम पितरों को पिण्डदान देते हैं, मृतकों का श्राद्ध करते हैं। पाप से बचते हैं तथा पुण्य में प्रवृत्त होते हैं। इस संसार का सारा अतिभौतिक-सत्य आप्तप्रमाण के ही आधार पर स्वीकार्य सिद्ध होता है।

गंगा की पवित्रता, उसका नारीत्व, पत्नीत्व, मातृत्व अथवा देवीत्व भी उसी दृष्टि से निर्विवाद तथा स्वीकार्य है। योगशास्त्र के निष्णात अध्येता उसकी उर्निवार तथा अजेय शक्ति से पूर्ण परिचित हैं। योग बल से इस स्थूल (भौतिक) शरीर को सूक्ष्म बनाकर हजारों-लाखों वर्ष तक अशत रखा जा सकता हैं।

हमारे प्राचीन धर्मग्रन्थ बताते हैं कि वशिष्ठादि ऋषि इस कला में पारंगत थे। अष्टसिद्धि (अणिमा, महिमा, गरिमा आदि) तथा नवनिधि के अधिकारी हमारे ऋषि-मुनि अपने शरीर को इन्द्रजाल का केन्द्र मानते थे। इसे प्रकट करना, नष्ट कर देना, छोटी-बड़ी बना देना अथवा परकाया में प्रविष्ट करा देना अथवा कायाकल्प कर लेना-सब उनके लिये क्रीड़ा मात्र था। आज भी साधकों के लिये जीवन, मृत्यु, पुर्नजन्म तथा सृष्टि आदि की गूढ समस्यायें कोई माने नहीं रखतीं।

इस प्रकार आज की गंगा नदी यदि देवलोक से उतरी कोई देवांगना थी, हस्तिनापुर नरेश शान्तनु की पत्नी तथा महाव्रती भीष्म की माँ थी। तो इन दोनों सचाइयों में कोई अन्तर्विरोध है ही नहीं। आज वह वैसा ही अविश्वसनीय सत्य प्रतीत हो सकता जैसा कुछ वर्षो पूर्व ''चन्द्रतल पर मनुष्य का आरोहण '' था परन्तु विज्ञान की भी तो सीमायें है, वह उनसे आगे नहीं बढ़ सकता, परन्तु सृष्टि के असंख्य गूढ़ सत्य ऐसे हैं, जिन्हें विज्ञान छू भी नहीं सका है।

अस्तु यह प्रसंग अब यही समाप्त किया जा रहा है। प्रस्तुत अध्याय का मुख्य अभिप्राय है ''पौराणिक साहित्य में गंगा, तत्सम्बन्धित उपाख्यानों का सामजस्य। इस अध्याय में उन तथ्यों की भी समीक्षा की जायेगी जो मूर्ति-मती अर्थात् नारी रूप धारिणी गंगा से सम्बद्ध है तथा किसी ''उपाख्यान'' के अंश न होकर, सर्वथा स्वतन्त्र रूप से पुराणों में उल्लिखित हुये है। गंगा से सम्बद्ध कुछ ऐसे ही प्रमुख उपाख्यान क्रमशः प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

गौतमी गंगोपाख्यान -

प्राचीनकाल में महामुनि गौतम अपनी पत्नी अहल्या के साथ दक्षिण दिशा में स्थित ब्रह्मगिरि पर १० सहस्त्र वर्षो में सिद्ध होने वाली तपस्या में लीन थे। उसी समय निरन्तर सौ वर्ष तक वृष्टि नहीं हुई जिससे सर्वत्र हाहाकार मच गया। अनेक ऋषियों ने समाधि लगा ली।

करुणानिधि गौतम ने लोककल्याण के लिये कठिन तप

किया। षट्मास की तपस्या के बाद भगवान वरुणदेव प्रसन्न हुये, परन्तु गौतम की वर्षायाचना सुनकर उन्होंने कहा कि "मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ। वर्षा तो देवाधिदेव शंकर के अधीन है। आप कोई और वर माँग ले।"

जब ऋषि गौतम अपनी याचना पर अटल रहे तो वरुण ने कहा -महर्षि आप एक गर्त (गढ्ढा) खोदें, मैं उसे जल से भर दूँगा। वह कभी रिक्त नहीं होगा। पवित्र तीर्थ के रूप में पृथ्वी पर स्थिर रहेगा।[१] महर्षि ने हाथ से नाप-जोख कर एक सरोवर खोदा जो कि वरुणदेव की कृपा से जलमग्न हो गया। तदनन्तर उस तीर्थ में स्नान, दान, हवन, देवपूजन, तर्पण, तथा पितृ श्राद्धादि कर्मों का फल एवं माहात्म्य बताकर वरुणदेव अर्न्तधान हो गये।[२]

दुर्भिक्ष ग्रस्त यह प्रदेश एक बार पुनः लहलहा उठा। परन्तु एक बार कुछ ईर्ष्यालु ऋषि पत्नियों ने गौतम के शिष्यों को तथा कालान्तर में उनकी पत्नी, महासती अहल्या को भी दुर्वचन कह दिया साथ ही साथ ईर्ष्याग्रस्त उन ऋषि पत्नियों ने अपने पतियों से अहल्या की झूठी शिकायत भी कर दी " अहल्या कहती है कि मेरे पति की कृपासे यह सरोवर प्रकट हुआ है। भला तुम लोगों का अधिकार क्या है जल लेने का।[३]

---

१. इति सम्प्रथितस्तेन वरुणो गौतमेन वै।
उवाच वचनं तस्मै गर्तश्च क्रियतां त्वया।।५।।
इत्युक्ते च कृतस्तेन गर्तो हस्तप्रमाणतः।
जलेन पूरितस्तेन दिव्येन वरुणेन सः।।६।। (इति शिवपुराण अ० २४)

२. सविस्तर द्रष्टव्य - शिवपुराण, शतकोटिकद्र- संहिता, अध्याय २४ से ४२ तक ब्रह्मपुराण, अध्याय ३३ पद्मपुरा, अ० ३६ महाभारत, वनपर्व अ० ८५।

३. ताश्चैवमृषिपत्न्यस्तु क्रुद्धास्तां पर्यभर्त्सयन्।
परावृत्य गताः सर्वास्तूटजान् कुटिलाशयाः।।
स्वाभ्यग्रे विपरीतं च तद् वृतं निखिलं ततः।
दुष्टाशयाभिः स्त्रीभिश्च ताभिर्वे विनिवेदितम्।।
अथ तासां वचः श्रुत्वा भाविकर्मवशात्तदा।
गौतमाय च संक्रद्धाश्चांसस्ते परमर्षयः।।
विद्नार्थं गौतमस्यैव नानापूजोपहारकैः।
गणेशं पूजयामासुस्संक्रुद्धास्ते कुबुद्धमः।।

स्त्रियों के उपालम्भ से प्रभावित मूढ़ ऋषियों ने महर्षि गौतम पर ''गणपति'' प्रयोग किया। गणेश प्रत्यक्ष हुये। पहले तो उन्होने गौतम को निरापराध बताकर ऋषियों को समझाया परन्तु उनके न मानने पर तपः प्रभाव-वश उन्होने गौतम को सह स्थान छुड़ाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

एक दुर्बल गाय का माया रूप धारणकर गणेश महर्षि गौतम का क्षेत्र चरने लगे। गाय को देखकर कृपालु महर्षि ने एक हल्के तृण से गायको मारा, परन्तु तृण मात्र के प्रहार से गाय तत्काल मर गई। सारे ईष्यालु ऋषि एकत्रित होकर महर्षि गौतम को कदर्थित करने लगे।

सन्तप्त एवं दुखी गौतम पत्नी के साथ उस आश्रम से एक कोस दूर अपनी पर्णकुटी बनाकर पत्नी के साथ रहने लगे। पन्द्रह दिन बांद उन्होने पुनः आश्रम में लौटकर ऋषियों से अपनी गोहत्या का प्रायश्चित पूछा। ईष्यालु ऋषियों ने कहा कि पहले अपना पाप प्रसिद्ध करो। आश्रम में एक मास का व्रत तथा ब्राह्मणों सहित ब्रह्मगिरि की १०१ प्रदक्षिणा करो।[१]

ऋषियों ने एक और विकल्प बताया। वह यह कि गौतम अपने तपः प्रभाव से गंगा को प्रकट करें तथा उसमें स्नान कर पापमुक्त हों। एक करोड़ पार्थिव-लिंगों से शिव की उपासना करें।[२]

आर्जव तथा क्षमा की मूर्ति गौतम ने ऐसा ही किया। उन्होने ब्रह्मगिरि की परिक्रमायें की। उनके कठोर तप से शिव प्रकट हुये तथा उनकी निष्ठा तथा लोकोपकार-भाव देखकर उन्होने अपने विवाह में ब्रह्मा द्वारा दिये गये शेष

---

१. सविस्तार द्रष्टव्य - शिवपुराण गौतमव्यवस्था वर्णनम् अ. २५

२. अथवा त्वं समानीय गंगास्नानं समाचर।
पार्थिवानां तथा कोटिं कृत्वा देवं निषेवय।।५३।।
गंगायां च ततः स्नात्वा पुनश्चैव भविष्यसि।
पुरा दश तथा चैकं गिरेस्त्वं क्रमणं कुरु।।५४।।
शतकुम्भैस्तभा स्नात्वा पार्थिवं निष्कृतिर्भवेत्।
इति तैः ऋषिभिः प्रोक्तस्तभेत्योमिति तद्वचः।।५५।। शिव०अ० २५

गंगाजल को, महर्षि गौतम के अधीन कर दिया।[1]

स्त्री रूप धारिणी गंगा गौतम के समक्ष प्रकट हुई। उन्होंने कुटुम्बसहित गौतम को पापमुक्त किया तथा भगवान शिव की ही आज्ञावश कलियुग के २८वें वैवस्वत मन्वन्तर तक पृथ्वी पर स्थिर रहने का वचन भी दिया।[2]

भगवती गंगा के ही आग्रह से भगवान शिव ने भी उमा सहित ब्रह्मगिरि पर रहना स्वीकार किया। देवताओं ने गंगा को वचन दिया कि "कलियुगीन मानवों के स्नानादि से, उनका पाप- प्रक्षालित करने के कारण जब-जब आप मलिन होंगी तब उस मलिनता का नाश करने के लिये प्रति११वें वर्ष हम लोग इस तीर्थ में आयेंगें। हे देवि! जब गुरु सिंह राशि पर रहेगें तब तुम्हारे जल में त्रिकाल स्नान तथा शंकर -दर्शन हेतु हम देवगण रुका करेगें।[3]

प्रस्तुत उपाख्यान से स्पष्ट हो जाता है। कि वर्तमान नासिक तीर्थ के पास विद्यमान ब्रह्मगिरि वही प्राचीन पौराणिक स्थल है जहाँ पर आज त्रयम्बकेश्वर नामक ज्योर्तिलिंग तथा गौतमी गंगा विद्यमान हैं। शिवपुराण के ४२वें अध्याय में गौतमी गंगा का माहात्म्य बड़े विस्तार में वर्णित है।[4]

शिवपुराण का कथन है कि गौतमी गंगा के जल से रामेश्वर को स्नान कराने वाला व्यक्ति निश्चय ही जीवन्मुक्त हो जाता है।

---

१. शिव०अ० २६ श्लोक २२
२. त्वया स्थातव्यमत्रैव व्रजेद् यावत् कलियुगः।
   वैवस्वतो मुनुर्देवि! द्यूष्टाविंशत्तमो भवेत्।। शिव०२६/२६।।
३. यावत्सिंहे गुरुश्चैव स्थास्यामस्तावदेव हि।
   त्वयि स्नानं त्रिकालं च शंकरस्य च दर्शनम्।। शिव० २६/४७
४. शिवानुग्रहस्तत्र-गंगानाम्ना तु गौतमी।
   संस्थिता गौतमप्रीत्या पावनी शंकर प्रिया।।३७।।
   सा गंगा गौतमीनाम्ना लिंग त्रयम्बकमीरितम्।
   ख्याताख्यातं बभूवाथ महापातकनाशनम्।।५०।। शिव०अ० ४२।।

तं च गंगाजलेनैव स्नापयिष्यति यो नरः।

रामेश्वरं च सद्भक्त्या स जीवन्मुक्त एव हि।।

शिव० ४२/५०

सम्भवतः रामचरितमानसकार गोस्वामी तुलसी का भी संकेत गौतमी गंगा की ओर था, जब उन्होंने लिखा-

जे रामेश्वर दरसनु करिहइँ। ते तनु तजि मम लोक सिधरिहइँ।

जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहिं। सो सामुज्यमुक्ति नर पाइहिं।।

वस्तुतः गौतमी गंगा गोदावरी का ही पौराणिक नाम है। सम्भव है कि प्रति १२वें वर्ष गोदावरी तट पर आयोजित नासिक तीर्थ के ''महाकुम्भ पर्व'' की ही पृष्ठभूमि में शिवपुराणकार ने देवताओं का वचन उद्धत किया हो।

2. ऋषिकोपाख्यान-

शिवपुराण के अध्याय ५ से ७ तक नन्दिकेश्वर-माहात्म्य के साथ ऋषिका का उपाख्यान मिलता है, जिसमे ऋषिका के तपः प्रभाव से भगवती गंगा के नर्मदा में अवतरित होने का वर्णन किया गया है। संक्षेप में यह कथानक इस प्रकार है-

रेवा नदी के पश्चिमी तट पर स्थित कर्णिका नामक पुरी में ब्राह्मण-दम्पती रहते थे। उनके दो पुत्र थे। वृद्ध ब्राह्मण ने काशीवास करते हुये प्राण त्याग दिये। पुत्रों ने पिता की विधिवत् अन्त्येष्टि सम्पन्न की। कुछ दिन बाद आसन्न-मृत्यु ब्राह्मणी ने भी सम्पत्ति पुत्रों में बाँट दी और कहा कि -''बेटा सुवाद! मैं काशी में ही प्राण त्यागना चाहती थी जो अब सम्भव नहीं दीखता। तुम मेरी अस्थियाँ गंगा में प्रवाहित कर देना।[1]

मृत्यु के अनन्तर सुवाद अपनी माँ का अस्थिकलश लेकर

१. शिव पुराण ५/२८ (नन्दिकेश्वरमाहात्मये ब्राह्मणीमरणवर्णनम्)
ममास्थीनि त्वया पुत्र। क्षेपणीयान्यतन्द्रितम्
गंगाजले शुभं ते द्य भविष्यति न संशयः।।

काशी चल पड़ा। बीस योजन चलते ही रात हो गई। फलतः सुवाद ने रात एक ब्राह्मण के घर बिताई। वहाँ उसने गृहपति द्वारा गाय दुहने का दृश्य देखा। दूधसे अतृप्त बछड़े को गृहपति पीट रहा था।[१]

बछड़े की प्रताड़ना देखकर गाय रो रही थी। गृहपति के चले जाने पर गाय और बछड़े ने बातें की तथा अपने पूर्वजन्मों के दुष्कर्मवश पशुयोनि में आने की चर्चा की।

क्रुद्ध गाय ने क्रूर ब्राह्मन से निरपराध बछड़े को पीटने के लिये बदला लेने का संकल्प किया। उसने बच्चे से कहा -" भले ही मुझे ब्रह्महत्या का पाप मिले, परन्तु कल प्रातः मैं इस ब्राह्मण का नाश कर दूँगी।"

सुवाद ने गाय और बछड़े की बाते अद्योपान्त सुनी थी। उसी प्रातः घटने वाली घटना के सन्दर्भ में बड़ा कौतूहल हुआ। प्रातः ब्राह्मण तो कहीं चला गया। उसके पुत्र ने दोहनार्थ बछड़े को खोल दिया। उसने भी अतृप्त बछड़े द्वारा उछल-कूद मचाने पर उसे निर्दयता पूर्वक पीटना प्रारम्भ कर दिया। फलतः क्रुद्ध गाय ने उसके उदर में सींग भोंक कर उसे मार डाला। पुत्र हत्या का समाचार सुनकर गृहपति ने हत्यारिणी गाय का अर्गलामुक्त कर दिया तथा उसे पीट-पीटकर घर से बाहर कर दिया।

ब्रह्महत्या के कारण श्वेतवर्ण गाय काले रंग की हो गई। दर्शक आश्चर्य चकित हो उठे इस परिवर्तन से। **सुवाद** भी विस्मित होकर गाय के पीछे चल पड़ा। गाय भ्रमण करती हुई नर्मदा तटवर्ती **नन्दिकेश्वरतीर्थ** पहुँची। उसने नर्मदा में तीन गोते लगाये और पुनः श्वेत वर्णा हो **गयी।**

---

१. वत्सं कीले स्वयं बद्धुं यत्नं चैवाकरोत्तदा।
ब्राह्मणस्य गृहस्वामी मुनयो! दुग्धलालसः।।४।।
वत्सो पि कर्षमाणश्च पादे वै पादपीडनम्।
चकार ब्राह्मण्श्चैव कष्टं प्राप्तश्च सुब्रता।।५।।
तेन पादप्रहारेण स द्विजः क्रोधमूर्च्छितः।
वत्सं ताडयामास कूपैः दृढ़तरं तदा।।६।। **शिव अध्याय ६**

यह दृश्य देखकर सुवाद श्रद्धाभिभूत हो उठा। उसने स्वयं उस तीर्थ में स्नान किया। नन्दिकेश्वर की अर्चना की और पुनः काशी की ओर चल पड़ा, तभी मार्ग में उसे एक युवती ने सुवाद से कुशलक्षेम पूछा और उसकी यात्रा का अभिप्राय जानकर कहा कि "वैशाख शुक्ल सप्तमी को भगवती गंगा स्वयं इस तीर्थ में आया करतीं हैं।" आज ही वह शुभ दिन हैं। तुम अपनी माँ की अस्थियाँ यहीं प्रवाहित करो।[1]

वस्तुतः वह युवती स्वयं भगवती गंगा थी। सुवाद ने उनकी आज्ञा से माँ की अस्थियाँ नर्मदा (गंगा) जल में प्रवाहित कर दी और आश्चर्य जनक दृश्य देखा कि उसकी माँ दिव्य रुप धारणकर, उसे आशी प्रदान करती हुई शिवलोक जा रही है।[2]

गंगा सप्तसती की अर्न्तकथा -

वैशाख शुक्ल सप्तमी को गंगा कैसे नर्मदा में अवतरित हुई यह प्रसंग भी अत्यन्त रोचक हैं। नर्मदा तट पर ऋषिका नामक एक बाल विधवा तपस्विनी तरुणी निवास करती थी। वह पार्थिव शिवलिंग बनाकर कठोर तप करती थी।

एक बार एक मूढ बालक कामान्ध असुर वहाँ आया और ऋषिका के रुप- सौन्दर्य पर व्यामोहित होकर उसे प्रलोभन देने लगा। परन्तु ऋषिका ने उसका तिरस्कार कर शिवाराधना में स्वयं को अधिक लीन कर दिया।

---

१. वैशाखे चैव सम्प्राप्ते सप्तम्यां च दिने शुभे।
सुते पक्षे सदा गंगा ह्यायति द्विजसत्तम।।६०।।
अधैव सप्तमी या सा गंगारुपास्ति तत्र वै।
इत्युक्त्वान्तर्दधे देवी सा गंगा मुनिसत्तम्।।६१।। शिव० अ० ६

२. निवृत्तश्च द्विजः सो पि मात्रस्थ्यर्घ स्ववस्त्रतः।
क्षिपेद्यावन्तत्र तीर्थे सार्वाच्चत्रयभूत्तदा।।६२।।
दिव्यदेहत्वमापन्ना स्वमाता च व्यदृश्यत।
धन्या सि कृतकृत्यो सि पवित्रं च कुलं त्वया।।६३।। शिव०अ०६

मूढ़ ने भयंकर रूप धारणकर बल्पूर्वक ऋषिका का अपहरण करना चाहा। भयभीत ऋषिका शिवलिंग से चिपट गई और त्राण हेतु शिव स्तुति करने लगी। उसकी चीत्कार से भूतभगवान शिव प्रकट हो गये और त्रिशूल के प्रहार से दुष्ट दानव का वध कर दिया। भगवान् शिव ने अमोध दर्शन के फलस्वरुप ऋषिका को वर देना चाहा। ऋषिका ने कहा -"प्रभो! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो इसी पार्थिव-लिंग में आप सदैव निवास करें।"[1]

भगवान शिव ने ऋषिका का न्विेदन स्वीकार कर लिया। नन्दिकेश्वर का आविर्भाव जानकर ब्रहमादि देवों के साथ भगवती गंगा भी साधवी ऋषिका को वर देने हेतु वहाँ आई।[2] गंगा ने कहा -" हे साध्वि! तुम केवल एक दिन (वैशाख शुक्ल सप्तमी) मेरे पास व्यतीत करने का वचन दो।"

ऋषिका ने भगवती गंगा का प्रस्ताव मान लिया। तभी से उस पार्थिव लिंग (नन्दिकेश्वर) में भगवान शिव तथा नर्मदा में भगवती गंगा निवास करने लगी। विशेषकर वैशाख शुक्ल सप्तमी को नर्मदा में गंगा का पारमार्थिक निवास होता है।

शिव और गंगा का साहचर्य शाश्वत हैं। जहाँ शिव हैं, वहाँ गंगा हैं और जहाँ कहीं भी गंगा हैं, वहीं शिव हैं।

---

१. अथं तं मुढनामानं दैत्येन्द्र कायविहृवलम्।
चकार भस्मसात् सद्यः शंकरो भक्तवत्सलः।।१६।।
ततश्च परमेशानो कृपादृष्ट्या विलोक्य ताम्।
वरं ब्रूहीति चोवाच भक्तरक्षणदक्षधीः।।१७।।
स्वपादयोः परां भक्तिं देहि में हृयनपायिनीम्।
अयमेव वरो नाथ! किमन्यदधिकं हृयतः।।२२।।
अन्यदाकर्णय विभो! प्रार्थनां में महेश्वर।
लोकानामुपकारार्थमिह त्वं संस्थितोभव।।२३।।

२. एतस्मिन् समये गंगा साध्वीं तां स्वर्धुनी जगौ।
ऋषिकां सुप्रसन्नात्मा प्रशंसतो च तद्विधिम्।।२८।। शिव० अ०७

3. अनसूयोपाख्यान[1] -

दक्षिण दिशा में चित्रकूट के समीप कामदनामक एक महावन में ब्रह्मा के पुत्र महामुनि अत्रि अपनी साध्वी पत्नी महासती अनसूया के साथ दीर्घकाल तक महान् तप करते रहे। एक बार उस महाबन में सौ वर्षों का भयावह अकाल पड़ा। जल अन्न के अभाव में प्राणी भूखों मरने लगे।

महासती अनसूया की प्रार्थनावश प्राणियों के कल्याण हेतु महर्षि अत्रि ने पद्मासन बाँध, प्राणायाम द्वारा वायु को ब्रह्माण्ड में स्थिर कर स्वयं को शिव में लीन कर दिया। पतिब्रता अनसूया भी शिव की पार्थिव प्रतिमा बनाकर मानस उपचारों से शिव को प्रसन्न करने लगीं।

अनसुया तथा अत्रि के अद्भुत तप से प्रसन्न होकर भगवान् शिव गंगा-सहित प्रकट हुये। समस्त देवगण तो अत्रि की प्रंशसा कर अपने धाम को लौट गये परन्तु भगवान शंकर महर्षि अत्रि के ध्वान-वश अपने सम्पूर्णाश से वहीं रह गये। शंकर को स्थिर देखकर गंगा भी देवलोक नहीं जा सकी।

मतास्ते च तदा तत्र गंगा न गिरिशं बिना।
गंगा मद्भजनप्रीता साध्वी धर्मविमोहिता।।

शिव अ०३ श्लोक सं० ३५

गंगा की प्रतिज्ञा के अनुसार -" मैं पतिपरायण अनसूया का उपकार करके ही जाऊँगी। अनावृष्टि ५४ वर्षो तक बनी रही। महर्षि अत्रि पूर्ववत् तपस्या में लीन रहे। अनसूया ने भी वर्षा न होने की अवधि तक अन्न-जल न ग्रहण करने की प्रतिज्ञा कर ली।

अकस्मात् एक दिन समाधि से जागकर महर्षि ने पत्नी से जल माँगा। पतिव्रता अनसूया हाथ में कमण्डलु लेकर जलान्वेषणार्थ चल पड़ी। तभी

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य-शिवपुराण अ० ३ (अनसूयात्रितपोवर्णनम्) वाल्मीकि रामायण अयोध्या सर्ग ११७ तथा आध्यात्म अयोध्या सर्ग ६।

उन्होंने मार्ग में अनिन्ध सौन्दर्य सम्पन्ना नारीवेषधारिणी गंगा को देखा और परिचय पूछा।[1]

देवी गंगा ने कहा - हे शुचिस्मिते ! मैं गंगा हूँ। तुम्हारे शिवार्चन से सन्तुष्ट होकर यहाँ आई हूँ।[2] अनसूया के प्रार्थना करने पर माँगगाँ उन्ही द्वारा खोदे गये एक गर्त में जल रूप में स्थिर हो गई। उन्होने महर्षि अत्रि को भी दर्शन देने की प्रतिज्ञा की। अनसूया वही पवित्र गंगाजल अपने पिपासु पति को पिलाने के लिये ले गयी और उन्हें गंगा का दर्शन भी कराया। महर्षि अत्रि ने भगवती गंगा का स्तवन किया और उनसे उसी वन में स्थिर रहने की अभ्यर्थना की। गंगा ने कहा- हे देवि! यदि तुम अपने शंकरार्चन का एक वर्ष का पुण्य-फल मुझे अर्पित कर दो, तो मैं तुम्हें यहाँ पर स्थिर रहने का व निवास करने का आश्वासन देती हूँ।

ततस्सोवाच तां गंगागम्यते स्वस्थलं मया।
इत्युक्ते पुनः साध्वी तामुवाच सरिद्वराम्।।३८।।

ऋषिश्चापि तथोवाचं त्वया स्थेयं सरिद्वरे।
सानुकूला भव त्वं हि सनाथान् देवि नः कुरु।।४१।।

---

१. किं करोमि क्व गच्छामि कुतो नीयेत् वै जलम्।
इति विस्मयमापन्नां तां गंगा हि ददर्श सा।।३।।
तामनुव्रजती यावत् साव्रवीच्च सदा हिताम्।
गंगा सरिद्वरा देवी बिभ्रती सुन्दरां तनुम्।।४।।
का त्वं कमलपत्राक्षि! कुतो वा त्वं समागता।
तथ्यं ब्रुहि कृपां कृत्वा साध्वि सुप्रवदा सती।।७।। शिव अ० ४

२. इत्युक्ते च तया तत्र मनिपत्न्या मुनीश्वराः।
सरिद्वरा दिव्यरुपा गंगा वाक्यमथाब्रबीत।।८।।

अहं गंगा समायाता भजनात्ते शुचिस्मिते।
वशीभूता ह्यहं जाता यदीच्छसि वृणीष्व तत्।।१०।। शिव अ० ४

तदीयं तदृवचनं श्रुत्वा रम्यं गंगा सरिद्वरा।
प्रसन्न मनसा गंगा नसूयां वाक्यमब्रबीत्।।४२।।

शंकरार्चनसम्भूतं फल वर्षस्य यच्छसि।
स्वामिनश्च तदा स्थास्ये देवानामुपकारणात्।।४३।।

अनसूया ने शिवार्चन तथा पति सेवा कर वर्षभर का पुण्यफल देकर भगवती गंगा को अपने आश्रम में स्थिर बना दिया। अनसूया के पतिव्रत से प्रभावित शम्भु भी उसी पार्थिव-लिंग में प्रकट हो गये और अत्रि तथा अनसूया की प्रार्थनावश वह भी ''अत्रीश्वर'' के रुप में वहीं पार्वती-सहित स्थिर हो गये।

गंगा की वही धारा कामद महावन में मन्दाकिनी के नाम से कालान्तर में विख्यात हुई।[१] शिवपुराण- प्रोक्त इसी मन्दाकिनी गंगा का माहात्म्य गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में प्रस्तुत किया है-

चित्रकूटगिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भांति सुपासू।।
सैलू सुहावनु काननु चारु। करि केहरि मृग विहग विहाऊ।।
नदी पुनीत प्रदान वरदानी। अत्रि-प्रिया निज तपबल आनी।।
सुरसरिधार नउँ मन्दाकिनी। जो सब पातक -पोतक-डाकिनि।।

(अयोध्याकाण्ड)

---

१. प्रसन्ना च तदा गंगा प्रसन्नश्च शिवस्तदा।
उभौ तो च स्थितौ, तत्र यत्रासीहषिसत्तमः।।५५।।
अत्रीश्वरश्च नाम्नासीदीश्वरः परदुः खहा।
गंगा सापि स्थिता तत्र तदा गर्ते थ मायया।।५६।।
तद्दिनं हि समारभ्य तत्राक्षयजलं सदा।
हस्तमात्रे हि तद्गर्ते गंगा मन्दाकिनी त्यभूत।।५७।। शिव० अ० ४

4. कुमारोपाख्यान[1] -

शिवपुराण के विभिन्न खण्ड़ों तथा अन्यान्य पुराणों में कुमारोपाख्यान का विस्तृत सन्दर्भ मिलता है। तारकासुर के अत्याचार को पीड़ित देवगण भगवान् विष्णु के नेतृत्व में शंकर की शरण में गये। देवाधिदेव उस समय देवी पार्वती के साथ सुरत विहार में सर्वात्मना लीन थे। देवों की प्रार्थना से द्रवीभूत शंकर ने, पार्वती से शीघ्र लौटने का वचन देकर, देवों को दर्शन दिया, उनकी व्यथा सुनी और उदास मन से कहा -" देवगण ! भक्तिव्यता को कोई मिटा नहीं सकता।"

भगवान शिव ने अपना स्खलित रेतस् पृथ्वी पर गिरा दिया। यह देखकर देवताओं ने कपोतरूप धारणकर अग्नि को यह अमोध -दीर्घ ग्रहण कर लेने को कहा। देवोपकार -हेतु अग्नि ने वैसा ही किया परन्तु दीर्घपान करते ही वह असह्य उष्मा से दग्ध होने लगा। देवर्षि नारद के कहने से अग्नि ने वह अमोध रेतस् माघमास में प्रयागतीर्थ में विद्यमान गंगा के प्रवाह में प्रवाहित कर दिया। सप्तर्षियों की पत्नियां उसी समय गंगास्नानार्थ आई। तपोबल के कारण देवी अरुन्धती के अतिरिक्त अन्य छहों ऋषिपत्नियों ने शीतार्त होकर अग्नि की शरण ली तो उनके रोमकूपों से शिव के वीर्यकण उनके गर्भाशय में प्रविष्ट हो गये।

अपनी पत्नियों को अग्नि के साहचर्य से गर्भवती जानकर उनके पतियों ने उन्हें जब त्याग दिया तो वे सब हिमालय पर तप करती हुई उस गर्भ को वहीं त्यागकर शान्ति को प्राप्त हुई परन्तु हिमालय भी उस दिव्य रेतस् की उष्मा न सह सका उसने उसे गंगा प्रवाह में गिरा दिया। गंगा ने भी उस अमोध वीर्य को धारण करने में असमर्थ हो उसे सरकण्डों के वन में स्थिर कर दिया।[२]

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य - शिवपुराण, कुमार खण्ड अ०२, अ०५ तथा कैलाश संहिता अ०११, वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, सर्ग ३७, वामन पुराण अ०५७ तथा ५८, कुमार सम्भव, सर्ग ११

२. द्रष्टव्य- शिव० कुमार खण्ड अ०४, श्लोक २५ से ५१ तक

उसी शरवन में शिव के अमोध वीर्य से एक तेजस्वी कुमार उत्पन्न हुआ। छहों कृत्तिकाओं ने उसे स्तनपान कराकर हृष्ट-पुष्ट बना दिया। इस प्रकार स्वनदी गंगा के पश्चिमी तट पर गंगापुत्र कुमार का जन्म हुआ।[१]

भगवान शिव का वही अमोध वीर्य, अग्नि, गंगा, कृत्तिकाओं[२] तथा शरवण द्वारा यथावसर धारण किया गया तथा कालान्तर में कुमार, कार्तिकेय, षडानन तथा गुह आदि संज्ञाओं से विख्यात हुआ। देवसेना का सेनापतित्व स्वीकार कर उसने दुर्घर्ष तारकासुर का वध किया।

महाकवि कालिदास प्रणीत कुमार सम्भव महाकाव्य के ११वें सर्ग में गंगा द्वारा कुमार को अमृतमय स्तनपान कराने का सन्दर्भ मिलता है। कुमार को देखकर गंगा कृन्तिका तथा अग्नि के आनन्दाश्रु छलक पड़ने का भी वर्णन मिलता है। सातवें श्लोक में कुमार हेतु तीनों में विवाद छिड़ने का भी संकेत स्पष्ट है।

शिवपुराण के कुमार खण्ड (अ० ५ श्लोक १३) में कुमार को स्पष्टतः गंगा का पुत्र बताया गया है।

तदा दृष्टवा च गागेयं ययौ प्रमुदितः शिवः।
अन्यैस्समेतो हरिणा ब्रह्मणा च सुरर्षिणा।।

इसी अध्याय के ४३-४६ संख्यक श्लोकों के अभिप्रायानुसार कुटिलादेवी[३] (गंगा) के गर्भ में रहने के कारण शिशु को ''कुमार'' कृत्तिकाओं का

---

१. गंगादिवपि निक्षिप्य वह्निद्वारा तदेशतः।
तत्समाहृत्य शनकैः स्तोके स्तोकमितस्ततः।।
शिववाणवीय संहिता, पूर्वखण्ड अ०३० श्लोक ३३

२. गंगाया स्वर्गंणाम्बाया कृत्तिकानां तद्यैव च।
विशाखेन च शाखेन नैगमेयेनं चावृतः।।
शिववाणवीय संहिता, उत्तरखण्ड अ०३१ श्लोक ७१

३. कुटिल (टेढी-मेढी) गतिः से बहने के कारण गंगा ''कुटिला'' कही गयी इसीलिये कुमार को कौटिल्य कहा गया- तमिन्द्रः प्राह कौटिल्यम्। वामनपुराण ५८/१०४

स्तनपान करने के कारण कार्तिकेय गौरी के सम्बन्ध से स्कन्द, शंकर के सम्बन्ध से गुह, अग्नि के सम्बन्ध से महासेन तथा शरवण में उत्पन्न होने के कारण शारद्वत कहे जाने की बात प्रमाणिक सिद्ध होती है। ८४,८५ वें श्लोक में कुटिला (गंगा) द्वारा अपने पुत्र कुमार के लिये १० गण दिये जाने की भी चर्चा मिलती है।

5. कुटिलोपाख्यान[1]-

वामन पुराण अध्याय ५१, श्लोक १ से १६ तक शिवपुराण[२] वापवीय संहिता, पूर्वखण्ड अ०१७ महाभारत भीष्मपर्व अ०१६ तथा वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड, सर्ग ३५ आदि में गंगा को गिरराज हिमालय तथा मेना की कन्या बताया गया है।

मेना तथा हिमवान् की तीन कन्यायें थी। ज्येष्ठा रागिणी, मध्यमा कुटिला[३] तथा कनिष्ठा काली। पैदा होने के ६ वर्ष बाद ही उन तीनों ने तप करना प्रारम्भ कर दिया। देवताओं ने उन देवोपम सौन्दर्यवाली कन्याओं को देखा। तदनन्तर आदित्यों तथा वसुओं द्वारा मध्यमा कन्या, चन्द्रकिरणों के समान गौरवर्णा कुटिला विधाता के पास ले जाई गई। देवों ने ब्रह्मा से पूछा- प्रभो! क्या वह कन्या महिषासुरहन्ता पुत्र को उत्पन्न करने योग्य है?

ब्रह्मा ने कहा,'' यह तपस्विनी शार्वरेतस् को धारण करने में समर्थ नहीं है, इसे मुक्त कर दो।'' प्रजापति के इस निर्णय से कुद्ध होकर कुटिला ने जब उनका प्रतिवाद किया तब कुपित ब्रह्मा ने कुटिला को जलमयी हो जाने का शाप

---

१. वामनपुराण अ० ४१

२. मेना हिमवतः पत्नी मैनाकं क्रौंचमेव च।
गौरी गंगा च सुषुवे भंवागाश्लेषपावनीम्।। शिवपुराण १७/५०

३. शुभांगी पद्मपत्राक्षी नीलकुचितमूर्द्धजा।
श्वेतमाल्याम्बरधरा कुटिलानाम चापरा।। वामन पुराण ५१/३०

दे दिया।[१]

ब्रह्मा के शाप -प्रभाव से हिमाचल-सुता कुटिला जलमयी सरिता बनकर ब्रह्मलोक को जल-प्लावित करने लगी। तब उसका रौद्र वेग देखकर विधाता ने ऋक्, यजुषु, सामन् तथा अथर्व मंत्रों के बन्धन में दृढ़तापूर्वक बाँधा। इस प्रकार बन्धनग्रस्त होकर वह कुटिला गंगा ब्रह्मा के जटा-जूट में स्थिर हो गई।

6. गांगेयोपाख्यान[1]-

इक्ष्वाकुवंशी नरेश महामिष ने सहस्र अश्वमेध तथा सौ वाजपेय यज्ञों से देवराज इन्द्र को परितुष्ट किया। एक बार वह सत्यवान् धर्मशील, चक्रवर्ती नरेश ब्रह्मलोक गया। वायुवेग से उड़े उनके वस्त्र देखकर समस्त देवों ने सिर नीचे झुका दिया परन्तु राजर्षि महाभिष निरशंक भाव से गंगा को देखते रहे। देवधुनी भी महाभिष को प्रेमसंगत जानकर मुग्धभाव से उन्हें निहारती रहीं। गंगा तथा

---

१. अथोचुर्दवताः सर्वाः किंन्त्वियं जनयिष्यिति।
पुत्रं महिषहन्तारं ब्रह्मन्! व्याख्यातुमर्हसि।।
ततो ब्रवीत् सुरपतिः नेयं शक्ता तपास्विनी।
शार्वधार्यतुं तेजो वराकी मुच्यतांत्वियम्।।
ततस्तु कुटिला क्रुद्धा ब्रह्माणं प्राह नारद।
तथा यतिष्ते भगवन्! यथा शार्वं सुदूर्धरम्।।
धारयिष्याम्यहं तेजस्तभैव श्रृणु सप्तम्।
तपसाहं सुतप्तेन समाराध्य जनार्दनम्।।
यथा हरस्य मूर्धानं नमयिष्ये पितामह।
तथा देव करिष्यामि सत्यं सत्यं मयोदितम्।।
ब्रह्मोवाच!!
यस्माद् मद्वचनं पापे! न श्रान्तं कुटिले त्वया।
तस्यान्मच्छायानिर्दग्धा सर्वा आपो भविष्यति।।
इत्येवं ब्रह्मणा शप्ता हिमवद्दुहिता मुने।
अपांमयी ब्रह्मलोकं प्यावयामास वेगिनी।। वामन पुराण अ० ५१

२. देवी भागवत, स्कन्ध २ अध्याय ३, महाभारत

महाभिष के इस मनुष्योचित निर्लज्ज प्रणयव्यवहार से क्षुब्ध होकर ब्रह्मा ने दोनों को मृत्युलोक में अवतरित होने का शाप दे दिया।[१]

इस घटना के पूर्व ही एक और घटना घटी। धर, ध्रुव, सोम आदि आठों वसु एक दिन वन-विहार के उद्देश्य से महर्षि वशिष्ठ की अनुपस्थिति में, उनके आश्रम पहुँचे। वहाँ घौः नामक वसु ने अपनी पत्नी के आग्रहवश वशिष्ठ की होमधेनु नन्दिनी का अपहरण कर लिया। आश्रम लौटने पर विदित-वृतान्त महर्षि ने प्रमादी वसुओं को भी मर्त्यलोक में जन्म लेने का शाप दे दिया।[२] वसुओं द्वारा क्षमा याचना करने पर वशिष्ठ ने कहा कि सात वसु तो जन्म लेते ही मृत्यु का वरणकर शापमुक्त हो जायेगें, परन्तु नन्दिनी का अपहरण करने वाला यह घौः नामक वसु प्रभूत काल तक पृथ्वीलोक में रहेगा।[३]

अब बेचारे अष्टवसुओं को चिन्ता हुई कि पृथ्वीलोक पर जन्म लेने के लिये वे किसे अपना माता-पिता बनायें। वे सन्तप्त मन से यही सोचते आ रहे थे कि उन्होने मार्ग में ब्रह्मशापिता गंगा को देखा और निवेदन किया कि वह उनकी जननी बनने की कृपा करें।[४]

---

१. दृष्टवा तौ प्रेमसंयुक्तौ निर्लज्जौ काममोहितौ।
ब्रह्मा चुकोप तौ पूर्ण शशाप च रुषान्वितः।।२०।।
मर्त्यलोकेषु भूपालः! जन्म प्राप्य पुनर्दिवम्।
पुण्येन महता विष्टस्त्वमवाप्स्मसि सर्वथा।।२१।। देवी भागवत

२. वारुणिश्चापि विज्ञाय ध्यानेन वसुभिर्हताम्।
वसुभिर्ये हृता धेनुर्यस्मान्यामवमन्य तै।।३५।।
तस्मात्सर्वे जनिष्यन्ति मानुषेषु न संशयः।
एवं शशाप धर्मात्मावसून्तान्वारुणिः स्वयम्।।३६।। देवी०

३. येनेयं विहृता धेनुर्नन्दिनी मम् वत्सला।
तस्माद् धौर्मानुषे देहे दीर्धकालं वसिष्यति।।४०।। देवी०

४. ते शप्ताः पथिगन्छन्तीं गंगां दृष्ट्वा सरिद्वराम्।
अचुस्तां प्रणतासर्वे शप्तां चिन्तातुरां नदीम्।।४०।।
भविष्यामि मो कथं देवि! वयं देवाः सुधाशनाः।
मानुषाणां च जठरे चिन्तेयं महती हि नः।।४१।।
तस्मात् त्वं मानुषी भूत्वा जनयास्मान् सरिद्वरे।।४२।। देवी० अध्याय ३

इस प्रकार अष्टवसुओं के साथ अभिशप्त गंगा की संगति बैठ गयी। कालान्तर में इक्ष्वाकुबंशी राजर्षि महाभिष चन्द्रवंशी सम्राट प्रदीप के पुत्र शान्तनु के रूप में अवतरित हुये। भगवती गंगा ने वसुओं के कल्याणार्थ और अपने शाप निवारण हेतु शान्तनु को महाभिष ही मानकर उनका पत्नीत्व ग्रहण किया परन्तु उन्होने शान्तनु से यह प्रतिज्ञा स्वीकार करा ली कि वह तभी तक उनके साथ रहेगी। जब तक वह गंगा का कोई ''विप्रय'' नहीं करेगें।[१]

यथावसर गंगा ने सातों वसुओं को क्रमशः जन्म दिया और जन्म देते ही उन्हें अपनी धारा में डाल दिया। पत्नी के इस नृशंस व्यवहार से शान्तनु विस्मत एवं क्षुब्ध तो हुये परन्तु गंगा की प्रतिज्ञा से डर कर उन्होंने प्रतिरोध नहीं किया।

परन्तु धौः नामक आठवें वसु के जन्म लेने पर राजा शान्तनु का पितृहृदय सन्तप्त हो उठा और उन्होने गंगा को पुत्र हत्या करने से विरत किया। राजा द्वारा यह अप्रिय कार्य करते ही गंगा ने सारा रहस्य समझाते हुये शान्तनु का साथ छोड़ दिया। गंगा ने कहा- राजन् आपके इस देवोपम पुत्र को युवावस्था में लौटा दूँगी। यह माँ के अभाव में नहीं रह सकता।[२] अधोलिखित श्लोकों

---

१. वाग्वन्धेन नृपश्रेष्ठ! वरिष्यामि पतिं किल।
श्रृणु मे समयं राजन् वृणोभिं त्वां नृपोत्तम्।।१२।।
यच्च कुर्यामहं कार्य शुभंवा यदि वा शुभम्।
न निषेध्या त्वया राजन् न वक्तव्यं तथा प्रियम्।।१३।।
यदा च त्वं नृपश्रेष्ठ न करिष्यसि मे वचः।
तदा मुक्ता गमिष्यामि यथेष्टं देशमारिषम्।।१४।। देवी० अध्याय ४

२. सप्तमें च हते पुत्रे राजा चिन्तापरो भवत्।
किं करोभ्यद्य वंशो में कथं स्यात्सुस्थिरोभुवि।।
सप्त पुत्रा हता नूनयनया पारूपया।।२३।।
न वारयामि वेदद्य सर्वथेयं जले क्षिपेत्।
भविता वा न वा चाग्रे संशयो यं ममद्भुतः।।२५।।
ततः काले यदा जातः पुत्रो यमष्टयोवसः।
तं दृष्ट्वा नृपतिः पुत्रं तामुवाच पतन् पदे।।२८।।

में मातृतुल्या गंगा के स्वरुप का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

गंगा मां वै विजानीहि देवकार्यार्थमागताम्।
वसवस्तु पुरा शप्ता वसिष्ठेन महात्मना।।

सप्त मे वसवः प्रजायुक्ताः शापाहषेस्तुते।
कियन्तं कालमेको यं तव पुत्रो भविष्यति।।

गंगादत्तमियं पुत्रं गृहाण शान्तनो! स्वयम्।
वसुं देवं विदित्वैनं सुखं भुंड्क्ष्व सुतोद्भवम्।।

दास्यामि यौवनप्राप्तं पालयित्वा महीपते।
न मातृ रहितः पुत्रो जीवेन्न च सुखी भवेत्।।

(देवी पुराण)

पुत्र के साथ गंगा अर्न्तधान हो गई। दुखी चित्त राजा शान्तनु घर लौट आये। युवावस्था होने पर देवी गंगा ने स्वयं उस पुत्र को पिता तक पहुँचाया। राजा ने हस्तिनापुर में महान् उत्सव किया और देवव्रत नामक गंगापुत्र को यौवराज्य प्रदान किया। यही गंगापुत्र देवव्रत कालान्तर में कुरुवंश का महान् पुरुष भीष्म पितामह बना। भीष्म ५८ वर्ष की अवस्था में स्वेच्छा से कुरुक्षेत्र में ब्रह्मलीन हुये।[1]

---

१. सविस्तरम् द्रष्टव्य - श्री मद्भागवत पुराण, स्कन्ध ६ अ० २२, अग्नि-पुराण अ० २७८ तथा हरिवंशपुराण, हरिवंश सर्ग अध्याय ३२।

7. सपत्न्युपाख्यान्-

देवी भागवत्[1] तथा ब्रह्मवैवर्तपुराण[2] में लक्ष्मी, गंगा तथा सरस्वती को भगवान विष्णु की पत्नियों के रूप में प्रस्तुत किया गया हैं। इन तीनों ने सोतिया डाह के कारण परस्पर अभिशप्त होकर ही भारतवर्ष में क्रमशः पद्मा, भागीरथी तथा सरस्वती नदी के रूप में अवतार लिया।

देवीभागवत की कथा के अनुसार एक दिन वस्त्रालंकार-भूषिता गंगा अपने अप्रियतम नारायण को मन्दस्मित एवं कटाक्ष से विलासपूर्वक देख रहीं थीं। इस दृश्य को देखकर देवी लक्ष्मी को तो कोई व्यथा नहीं हुई परन्तु ईर्ष्या अमर्ष में डूबी सरस्वती सपत्नी के इस सौभाग्य से जल-भुन उठीं। लक्ष्मी के अनेकशः समझाने पर भी वह स्वामी को विषाक्त वचनों से उपालम्भ देती हुई[3] गंगा को शाप देने के लिये तत्पर हो गयी। सरस्वती ने कहा-

> हे निर्लज्जे! हे सकामे स्वामिगर्व करोषि किम्?
> अधिकं स्वामिसौभाग्यं विज्ञापयितुमर्हसि,
> मानचूर्ण करिष्यामि तवाद्य हरिसन्निधौ।
> किं करिष्यति ते कान्तो ममैवं कान्तवल्लभे।।

सरस्वती ने गंगा को नदी बनकर मृत्युलोक में अवतीर्ण होने का शाप दिया चूँकि गंगा और सरस्वती के कलह में लक्ष्मी काष्ठवत् खडी रहीं, सरस्वती का पक्ष उन्होंने नहीं लिया- फलतः सरस्वती ने उन्हें भी वृक्ष तथा (गंगा

---

१. सविस्तार दृष्टव्य- देवी भागवत, स्कन्ध ६ अध्याय ६ श्लोक १ से ६७ तक तथा अ०७ श्लोक १ से २२ तक।
२. ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ६ एवं ७।
३. ज्ञातं सौभाग्यमधिकं गंगाया ते गदाधर।
कमलायां च तत्तुल्यं न च किंचिन्मयि प्रभो।।
किं जीवनेन मे त्रेव दुर्भगायाश्च साम्प्रतम्।
निष्फलं जीवनं तस्या या पत्युः प्रेमवंचिताः।।
त्वां सर्वे सत्वरुपं च ये वदन्ति मनीषिणः।
ते च मूर्खा न वेदज्ञा न जानन्ति मतिं तव।। देवी० ६/६

की) सरवीभूता नदी बनने का शाप दिया।[1] सरस्वती के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध होकर गंगा ने भी उन्हें नदी बनकर मृत्युलोक में उतरने का शाप दिया।[2]

पत्नियों के परस्पर कलह एवं शाप विनिमय के अनन्तर ही नारायण पुनः उनके पास आये। उन्होने क्रोधान्ध सरस्वती को हृदय से लगाकर प्रसन्न किया परन्तु अपने बहुभार्यत्व का दोष अब उनको पीड़ित करने लगा। स्त्री का पुंवद्भाव स्त्री की वाचालता, स्त्री की दुष्टता आदि दोष नारायण को व्यथित करने लगे फलतः उन्होने मन ही मन एक पत्नी व्रत पालने का संकल्प किया। लक्ष्मी को अपनी अर्धागिनी स्वीकार कर उन्होने गंगा तथा सरस्वती को क्रमशः शिव तथा ब्रह्मा की पति बनने का आदेश दिया।

यशः कीर्तिविहीनो यो जीवन्नपि मृतो हि सः।
वह्वीनां च सपत्नीनां नैकत्र श्रेयसे स्थितिः।।

एकभार्यः सुखं नैव बहुभार्यः कदाचन।
गच्छ गंगे! शिवस्थानं ब्रह्मस्थानं सरस्वति।।

अत्र तिष्ठतु मदृगेहे सुशीला कमलालया।
सुसाध्यायस्य पत्नी च सुशीला च पतिव्रता।।

देवी० ६/६/६४,६५,६६

---

१. इत्येव मुक्त्वां गंगायाः केशं ग्रहीतुमुद्यता।
वारयामास तां पद्मां मध्यदेशं समाश्रिता।।
शशाप वाणी तां पद्मां महाबलवती सती।
वृक्षरूपा सरिद्रूपा भविष्यसि न संशयः।। देवी० ६/६/३१,३२

२. जानन्तु सर्वे ह्युभयोः प्रभावं विक्रमे सति।
इत्मेवमुक्त्वा सा देवी वाण्यै शापं ददाविति।।
सरित्स्वरुपा भवतु सा या त्वां च शशाप ह।
अधोलोकं सा प्रयातु सन्ति यत्रैव पापिनः।। देवी० ६/६/३६,४०

नारायण ने शापग्रस्त अपनी पत्नियों को अवतरण का मर्म समझाया। उन्होंने लक्ष्मी से कहा कि तुम अपनी एक कला से पृथ्वी पर राजा धर्मध्वज की अयोनिसंभवा कन्या बनो। वहाँ मेरे अंश से उत्पन्न शंखचूड़ नामक असुरेन्द्र तुम्हारा वरण करेगा। भाग्यदोष से तुम्हें वृक्षभाव तुलसी तथा नदीभाव[१] (पद्‌मानदी) भी धारण करना पड़ेगा। शापावधि पूर्ण होने पर तुम पुनः पूर्णांश से मेरी पत्नी बन सकोगी।

इसी प्रकार नारायण ने गंगा को भी अपने अंश से उत्पन्न समुद्र तथा राजा शान्तनु का पत्नीत्व ग्रहण करने को कहा। सरस्वती को भी नदी तथा ब्रह्मा की पत्नी बनने का निर्देश दिया।

देवीभागवत के स्कन्ध ६ अध्याय ७ में विष्णुपत्नियों के पश्चाताप तथा स्वामिवियोगजन्य व्यथा का विस्तृत वर्णन भी मिलता है। लक्ष्मी गंगा और सरस्वती बारी-बारी से अपने को निर्दोष बताती हुई स्वामी से कृपालु होने का निवेदन करती हैं, जिसके प्रत्युत्तर में नारायण कहते हैं कि कलियुग के पाँच सहस्त्र वर्ष बीतने पर तुम सब पुनः मेरे पास लौट सकोगी।[२] "गंगा मृत्युलोक में पाँच सहस्र वर्ष तक रहेगी" देवी भागवत के इस उपर्युक्त मन्तव्य का समर्थन महाप्राज्ञ चाणक्य ने भी किया है। सन्दर्भ इस प्रकार है -

कलौ दश सहस्राणि हरिस्त्यजति मेदिनीम्।
तदर्धं जाह्नवीतोयं तदर्धं ग्रामदेवता।।

चाणक्य ११/४

---

१. मुँगेर के आगे गंगा दो भाँगों में बँट जाती हैं। एक धारा तो भागीरथी (हुगली) के नाम से कलकत्ता होती हुई समुद्र की ओर बढ़ती है और दूसरी पद्‌मा के नाम से वर्तमान बांग्लादेश होती हुई सागर से मिलती हैं। उपर्युक्त सन्दर्भ में सम्भवतः इसी पद्‌मा को संकेतित किया गया है।
२. कलेः पंचसहस्रे च गते वर्षे च मोक्षणम्।
युष्माकं सरिताचैव मद्‌गृहे वागमिष्यथ।। देवी० ६/७/२१

देवी भागवत के नवम् स्कन्द के ८वें अध्याय में गंगादि नदियों के पृथ्वी पर अवतीर्ण होने तथा सरस्वती, भागीरथी आदि संज्ञा प्राप्त करने का रमणीय वर्णन मिलता हैं।[१] सरस्वती शब्द की व्युत्पत्ति तो अत्यन्त सार्थक प्रतीत होती है-

सरो वाप्याचं स्त्रोतस्तु सर्वभैव हि दृश्यते।
हरिः सरस्वान् तस्येयं तेन नाम्ना सरस्वती।।

8. सगरोपाख्यान -

देवीभागवत स्कन्ध ६ के ११वें (श्लोक ४ से ७५ तक तथा १२वें अध्याय (श्लोक १ से ७६ तक) में सूर्यवंशी नरेश सगर के अभिशप्त पुत्रों के मोक्षार्थ गंगा के पृथ्वी पर अवतरित होने का विस्तृत वर्णन मिलता है। राजा भगीरथ का विष्णुपद-स्त्रोत तथा गंगा का काण्वशाखोक्त ध्यान भी इसी प्रसंग में वर्णित है।

सगरोपाख्यान श्रीमद्भागवत आदि अन्य अनेक पुराणों में भी वर्णित है। वाल्मीकि रामायण के गंगोपाख्यान में भी यह कथा वर्णित है। सूर्यवंशी सम्राट सगर की दो पत्नियाँ थीं- शैव्या तथा वैदर्भी। शैव्या के गर्भ से असमंजस नामक परम रुपवान् कुमार पैदा हुआ। वैदर्भी ने भूतभावन शिव की कृपा से गर्भ धारण किया। किन्तु समय आने पर उसने एक विशाल मांस पिण्ड को जन्म दिया। वैदर्भी के अत्यन्त आर्तनाद करने पर शिव ब्राह्मण वेश में प्रकट हुये और उन्होंने उसी तेजस्वी मांस पिण्ड को साठ हजार खण्डों में विभक्त कर दिया । वे माँस पिण्डही पुत्र रूप में परिणत हो गये।[२]

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य - देवी० ६/८
२. शम्भुर्ब्राह्मणरूपेण तत्समीपं जगाम ह।
चकार संविभज्यैतत्पिण्डंषष्टिसहस्रधा।।
सर्वे बभूबूः पुत्राश्च महाबलपराक्रमाः।
ग्रीष्ममध्याह्नमार्तण्डप्रभापुष्टकलेवराः।। देवी० ६/११/८,६

महाराज सगर के यज्ञाश्व का अन्वेषण करते हुये, उनके साठ हजार पुत्र महर्षि कपिल की रोषाग्नि में भस्म हो गये। अपने भाइयों के उद्धारार्थ असंमजस तथा उसके पुत्र अंशुमान ने घोर तप किया। अंशुमान के पुत्र भागीरथ ने अपने दुर्घर्ष तप से भगवान् कृष्ण को प्रसन्न किया। फलतः कृष्ण ने गंगा को पृथ्वी पर प्रेषित किया।[१]

इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण की आज्ञा से गोलोकवासिनी गंगा धराधाम पर अवतीर्ण हुई और उन्होनें सगर पुत्रों का उद्धार किया। उद्धार की यह दिव्य भक्ति भगवत कृपा का ही परिणाम थी।[२]

महाभारत के खिलभाग (हरिवंश पुराण) में भी भागीरथ द्वारा गंगा को पृथ्वी पर उतारने की कथा संक्षेप में वर्णित हैं। प्रायः समस्त पुराणों में गंगावतरण प्रसंग एक ही रूप में प्रस्तुत किया गया है।[३]

9. गोलोकोपाख्यान -

श्रीमद्देवीभागवत् में (स्कन्ध९, अ०१२) गंगोत्पत्ति का

---

१. तपश्चकारा संमजो गंगानयनकारणात्।
लक्षवर्ष तपस्तप्त्वा ममार कालयोगतः।।
अंशुंमास्तस्य तनयो गंगानयनकारणात्।
तपः कृत्वा लक्षवर्ष्रं ममार कालयोगतः।
भगीरथस्तस्य पुत्रो महाभागवतः सुधीः।।
वैष्णवो विष्णुभक्तश्च गुणवानूजरामराः।
तपः कृत्वा लक्षवर्ष गंगानयनकारणात्।
ददर्श कृष्णं ग्रीष्मस्य सूर्यकोटिसमप्रभम्।।
।। श्री भगवानुवाच।।
भारतं भारतीशापाद् गच्छ शीध्रं सुरेश्वरि।
सगरस्य सुतान् सर्वान् पूतन् कुरु ममाज्ञया।। देवी० ९/११/११-१४

२. त्वत्स्भशवायुना पूता यास्यन्ति मम मन्दिरम्।
बिभ्रतो मम मूर्तीश्च दिव्यस्यन्दनगामिनः।।
गंगाया वातस्पर्शेन नश्यतीति श्रुतौ श्रुतम्। देवी ० ९/११/२१/२३

३. द्रष्टव्य - हरिवंश पुराण (हरिवंशपर्व) अध्याय १५

एक अन्य कथानक भी मिलता है। कार्तिकी पूर्णिमा की, रात्रि में जब राधा एवं कृष्ण गो-गोप-गोपियों के साथ महारास में लीन थे, उस समय शंकर एवं विरंचि सहित समस्त देवगण वहाँ उपस्थित हुये। उसी समय कृष्णविषयक संगीतशास्त्र की अधिष्ठात्री सरस्वती ने मनोहर तालपूर्वक वीणातंत्री पर गायन प्रारम्भ किया। सरस्वती के गायन से सन्तुष्ट देवों ने उन्हें विविध उपहार प्रदान किये।[१]

सरस्वती के बाद भगवान शिव ने ब्रह्मा की आज्ञावश रासोत्सव-संगीत आरम्भ किया। उस गीत को सुनकर देवगण चित्रलिखित से रह गये, मूर्छित हो गये। बड़ी कठिनाई से जब उन्हें चेतना प्राप्त हुई तो देखा कि रासोत्स-स्थल पर जलमात्र शेष है। राधा-कृष्ण वहाँ नहीं है।

राधा एवं कृष्ण के अप्रत्याशित एवं असह्य वियोग में समस्त गो, गोपी तथा देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर विलाप करने लगे। तब ध्यानस्थ ब्रह्मा ने उन्हें समझाया कि विश्व के उद्धारार्थ ही राधा एवं कृष्ण तीर्थरूप मे परिवर्तित हो गये है।

ब्रह्मासहित समस्त देवगण भगवान् का स्तवन् करने लगे कि वह अपना भी विग्रह प्रकट करें। तब अर्न्तयामी प्रभु ने आकाशवाणी की - "यदि शंकर वेदमर्मी विरोधी तंत्रशास्त्र की संरचना करने का संकल्प करें तो मैं स्वयं को प्रकट करुँ।[२] आकाशवाणी का मर्म समझकर भगवान् शिव ने हाथ में वही

१.तुष्टो ब्रह्मा ददौ तस्यै रत्नेन्द्रसारहारकम्।शिवो मणीन्द्रसारं तु सर्वब्रह्माण्डदुर्लभम्।।
कृष्णः कौस्तुभरत्नचं सर्वरत्नात्परं वरम्।अमूल्यरत्ननिर्वणं हारसारं च राधिका।।

२.मूर्ति द्रष्टुं च सुव्यक्तां यदीच्छथ सुरेश्वराः।करोतु शम्भुस्तत्रैवं मदीयं वाक्यपालनम्।।
स्वयं विधातस्त्वं बह्ममन्नाज्ञां कुरु जगद्गुरुम्।कर्तु शास्त्रविशेषंच वेदांगसुमनोहरम्।।
अपूर्वमंत्र निकटैः सर्वाभीष्टफलप्रदैः। सतोत्रैश्च निकटैः ध्यानैर्युतं पूजाविधिक्रमैः।
मन्मंत्रकवचस्तोत्रं कृत्वा यत्नेन गोपनम्। भवन्ति विमुखा येन जनानां तत् करिष्यति।।
सहस्रेषु शतेष्वेको मन्मंत्रोपासको भवेत्। जना मन्मंत्रपूताश्च गमिष्यन्ति च मत्पदम्।।
अन्यथा न भविष्यन्ति सर्वे गोलोकवासिनः। इदं कर्तु महादेवः करोति देवसंसदि।
प्रतिज्ञां सुदृढां सद्यः स्ततो मूर्ति च दृक्ष्यति।।

देवी ६/१२/६३ -७०

तीर्थजल (गंगाजल) लेकर राधामंत्र से युक्त वेद का अविरोधी तंत्रशास्त्र प्रणीत करने का संकल्प किया। शिव के ऐसा करते ही भगवान् कृष्ण राधा के साथ प्रकट हो गये। इस प्रकार श्री कृष्ण स्वयं गोलोकसंभूत द्रवमयी गंगा है -

स एव द्रवरुपा सा गंगा गोलोकसंभवा।
राधाकृष्णागंसम्भूता भुक्तिमुक्तिफलप्रदा।।
स्थाने स्थाने स्थापिता सा कृष्णेन च परमात्मना।
कृष्ण स्वरुपा परमा सर्वब्रह्माण्डपूजिता।।

10. प्रेयस्युपाख्यान[1] -

देवी भागवत मे लक्ष्मी, सरस्वती, गंगा तथा तुलसी को हरिप्रिया बताया गया हैं। इसी पुराण के नवम् स्कन्ध में १३वें अध्याय में गंगा को श्रीकृष्ण की प्रेयसी बताते हुये उन्हें श्री हरि के पादपद्म से उत्पन्न चित्रित किया गया है।

गंगा के रुप-सौन्दर्य का एक जीवन्त वर्णन इस प्रसंग में मिलता है। वह नवयौवन-सम्पन्न, समस्त अलंकारों से युक्त, शरत्कालीन मध्याह्न-पंकज के समान हास्ययुक्त, तपकांचन-वर्णा तथा शरदिन्दुसमप्रभा हैं। गंगा शुद्ध सत्वस्वरूपा हैं। उनकी प्रभा के दर्शनमात्र से नमन और मन अतिशय स्निग्ध होते हैं। उनका नितम्ब दीन तथा कठिन, अत्युत्कृष्णवस्त्रावृत है। पयोधर - युगल उन्नत, कठिन एवं वर्तुल हैं। नेत्रयुगल अति मनोहर, अपांग-विलोकन वक्रिय तथा कबरी बन्धन मालतीमाला भूषित है। भाल चन्दनबिन्दु-भूषित तथा सीमान्त सिन्दूरमण्डित हैं। गंगा के कपोलों पर कस्तूरी की पत्र रचना है। उनके होठों ने बंधूक जैसी रक्तवर्णता धारण की हैं। दन्तपंक्तियों में सुपक्व दाडिम बीज-श्रेणी स्थापित हैं। तथा उन्होने नीबी- पर्यन्त अग्निविशुद्ध वस्त्र-युगल धारण कर रखा है।

---

१. सविस्तार द्रष्टव्य - देवीभागवत ९/१३/८-१४

ऐसी ही रुपलावण्यवती गंगा एक बार रतिलाभ की आकांक्षा से श्रीकृष्ण के पार्श्व में बैठकर परमानन्द -पूर्वक उनके मुखचन्द्र का पान कर रही थीं। नवसमागम लाभ के आनन्द के उनका मुखकमल प्रफुल्लित हो उठा, सर्वांग रोमाचित हो गया और मूर्छित हो उठीं।[१]

स्नेह प्रेम के ऐसे ही मार्मिक अवसर पर श्रीकृष्ण की प्राणबल्लभा राधिका प्रिय के समीप आई। गंगा का स्वरुप देखते ही राधा ईर्ष्या-अमर्ष से ग्रस्त हो उठीं और कृष्ण से उनका परिचय पूछा।[२]

श्री राधा ने गंगा के प्रति कृष्ण का अनुराग प्रत्यक्ष देखकर उन्हे अनेक उलाहने दिये। उन्होने पूर्वकाल में विरजा नामक गोपांगना, शोभा, प्रभा, शान्ति तथा क्षमा नामक गोपांगनाओं के साथ सवैर विहार करने के उपालंभ कृष्ण को दिये। मामिनी राधा ने कृष्ण की लम्पटता तथा राठता के लिये उन्हें अनेकशः भंर्त्सित किया।[३]

राधा का अपने प्रति कोपभाव जानकर कृष्ण प्रेयसी गंगा तत्क्षण जलरूप में परिवर्तित हो गई। यह रहस्य जानकर कोपनशीला राधा ''चुकुल'' द्वारा उन्हें पी लेने को उद्यत हुई। तब भयभीत गंगा भगवान कृष्ण के चरणकमलों

---

१. सा सकामा कृष्णपार्श्वे समुवास सुलज्जिता।
वाससा मुखमाच्छाय लोचनाभ्यां विभोर्भरवम्।।
निमेषरहिताभ्यां च पिबन्ती सततं मुदा।
प्रफुल्लवदना हर्षान्नवसंगमलालसा।।
मूर्छिता प्रभुरूपेण पुलकांकित विग्रहा।
एतस्मिन्नन्तरे तत्र विद्यमाना च राधिका।। देवी० ६/१३/१५-१७

२. केयं प्राणेश! कल्याणी सास्मिता त्वन्मुखाम्बुजम्।
पश्यन्ती सस्मितं पार्श्वे सकामा बक्रलोचना।।
मूर्छा प्राप्नोति रुपेण पुलकांकितविग्रहा।
वस्त्रेण मुखमाच्छाद्य निरीक्षन्ती पुनः पुनः।। देवी० ६/१३/४५-४६

३. एतत्ते कथितं सर्व किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।
त्वद्गुणं चैव बहुशो न जानामि परं प्रभो।।

में प्रविष्ट हो गयी।[1]

गंगा के विलीन होते ही सारा गोलोक शुष्क हो उठा। तब ब्रह्मा एवं शम्भु सहित समस्त देवगण गंगा के प्रकटनार्थ भगवान की प्रार्थना करने लगे। श्रीकृष्ण ने गंगा के प्रति राधा का कोप वर्णित करते हुये उन्हें ब्रह्मा को अर्पित कर दिया। श्रीकृष्ण के आदेशवश ब्रह्मा ने श्री राधा को समझाया कि गंगा तो उनकी "कन्या" के समान है। उसे सपत्नी मानकर कोप करना उचित नहीं है -

गंगा त्वदशसम्भूता प्रयोश्च रासमण्डले।
मुवयोः द्रवरुपा सा मुग्धयोः शंकरस्वनात्।।

कृष्णांशा च त्वदंशा च त्वत्कन्यासद्दशी प्रिया।
त्वन्मंत्रगृहणं कृत्वा करोतु तव पूजनम्।।

ब्रह्मा के सदुपदेश से जब राधा की भ्रान्ति नष्ट हुई तब गंगा श्रीकृष्ण के पादागुष्ठ से प्रकट हुई।ब्रह्मा तथा शिव ने उन्हें क्रमशः कमण्डलु तथा जटाजूट में धारण किया। ब्रह्मा ने गंगा को "राधामंत्र" का उपदेश भी दिया। मंत्र के साथ ही साथ स्त्रोत्र, कवच, पूजाविधान तथा ध्यान भी बताया।[2]

---

१. गंगा रहस्यं विज्ञान योगेन सिद्धियोगिनी।
तिरोभूय सभामध्ये स्वजलं प्रविवेश सा।।
राधा योगेन विज्ञाय सर्वत्रा वस्थितां च ताम्।
पानं कर्तु सभारेभे गण्डूषात् सिद्धयोगिनी।।
गंगा रहस्यं विज्ञान योगेन सिद्धयोगिनी।
श्रीकृष्णचरणाम्भोजे विवेश शरणं ययौ।। देवी० ६/१३/८०-८२

२. ब्रह्मणो वचनं श्रुत्वा स्वीकार च सस्मिता।
बहिर्बभूव सा कृष्णपादांगुष्ठनगाग्रतः।।११६।।
तत्तोयं ब्रह्मणा किंचित् स्थापितं च कमण्डलौ।
किंचिछधार शिरसि चन्द्रार्धकृतशेखरः।।१२०।।
गंगायै राधिकामंत्रं प्रददौ कमलौद्भवः।
तत्स्तोत्रं कवचं पूजा विधानं ध्यानमेव च।।१२१।। देवी० ६/१३

गंगा के प्रकटनार्थ पितनी अवधि तक ब्रह्मादि देवगण गोलोकधाम में रहे उसी अवधि में एक वैकुण्ठ को छोड़कर सारा ब्रह्माण्ड जलमग्न रहा (अर्थात् प्रलय हो गई) गंगा को अर्पित करते हुये कृष्ण ने ब्रह्मा से कहा कि अब आप नई सृष्टि करें।

गत्वा सृष्टिं कुरु पुनः ब्रह्मलोकादिकं भवम्।
स्वब्रह्माण्डं विरचय पश्चाद् गंगा प्रयास्यति।।३०।।

तत्रैव सा गता गंगा चाज्ञया परमात्मनः।
निर्गता विष्णुपादाव्यात् तेन विष्णुपदी स्मृता।।

देवी० ९/१३/१३५

11. नारायणोपाख्यान -

देवी भागवत (स्कन्ध ९ अ०१४ श्लोक१-२३ तक) में गंगा का नारायण के साथ गान्धर्व विवाह वर्णित किया गया हैं। गोलोकधाम में गंगा को प्राप्तकर ब्रह्मा नारायण के पास गये और कहा - प्रभो! गंगा राधा एवं कृष्ण से उत्पन्न हैं जैसे पुरुषमात्र प्रकृति से उत्पन्न हैं तथा स्त्रीमात्र प्रकृति रुपा हैं, दोनों में कोई भेद नहीं उसी प्रकार आप और गंगा भी एकरुप हैं।

ब्रह्मा ने कहा- हे प्रभो! जो पुरुष उपस्थित कन्या का वरण नहीं करते। लक्ष्मी उन्हें छोड़कर चली जाती है।[१] अतः आप गंगा को गान्धर्व

१. उपस्थितां स्वयं कन्यां न गृहणति च यः पुमान्।
तं विहाय महालक्ष्मी रुष्टा याति न संशयः।।
यो भवेत् पण्डितः सोपि प्रकृतिं नावमन्यते।
सर्वे प्राकृतिकाः पुंसः कामिन्यः प्रकृते कलाः।।
एकागं चैव स्त्री पुंसोर्यथा प्रकृतिपुरुषौ।
इत्मेवमुक्त्वा धातां तां तं समर्प्य जमाम सः।।
गान्धर्वेण विवाहेन तां जग्राह हरिः स्वयम्।
नारायणः करं धृत्वा पुष्पचन्दनचर्चिताम्।।

विधि से अपनी परिणीता बनाइये।

धाता का आदेश स्वीकार कर नारायण ने गंगा को अपनी अर्धांगिनी बनाया। इस प्रकार लक्ष्मी, सरस्वती, गंगा तथा तुलसी रमापति की ये चार पत्नियाँ हुई।

देवीभागवत के दूसरे स्कन्ध के तृतीय एवं चतुर्थ अध्यायों में तथा नवें स्कन्ध के ६ से १४ संख्यक अध्यायों में गंगा- सम्बन्धी प्रभूत आख्यान वर्णित किये गये हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख उपाख्यानों का सार- संक्षेप ऊपर प्रस्तुत किया गया है।

12. भोगवती उपाख्यान -

गर्गसंहिता के वृन्दावन खण्ड में तृतीय अध्याय के ३१ श्लोकों में भोगवती गंगा का उपाख्यान सनन्द एवं नन्दराज के वार्तालाप के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

द्वापर में श्रीकृष्ण के धराधाम पर उतरने से पूर्व ही गोलोक में हरि ने यमुना को बृज मण्डल में उतरने की आज्ञा दी। विरजा तथा ब्रह्मद्रवा गंगा भी यमुना में लीन होकर पृथ्वी पर उतरीं। आगे बढ़ने पर गंगा तो ब्रह्मलोक का भेदन करती हुई हिमालय पर और यमुना कलिन्द पर्वत पर आरूढ़ हुई। तभी से यमुना को कलिन्दजा अथवा कालिन्दी कहते हैं। बृजमण्डल को पवित्र करती हुई यमुना प्रयाग में गंगा में लीन होकर क्षीर-सागर जा पहुँची। उन्होने गंगा के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की -

हे गंगे! त्वन्तु धन्यासि सर्वब्रह्माण्डपावनी।
कृष्णपादाब्जसंभूता सर्वलोकैकवन्दिता।।२२।।
उर्ध्व यामि हरेर्लोकं गच्छ त्वमपि हे शुभे।
त्वत्समानं हि दिव्यं न च भूतं न भविष्यति।।२३।।

सर्वतीर्थमयीं गंगा तस्मात्वां प्रणमाम्यहम्।

यत किंचिदवा प्रकथितं तत्समस्व सुमंगले।।२४।।

गर्गसहितां वृन्दावन खण्ड

यमुना की विनम्रता का उत्तर गंगा ने भी प्रशंसापूर्ण वचनों से दिया और अपने पाताल में प्रवेश करने की बात कही -

अंह यास्यामि पातालं श्रीकृष्णस्याज्ञया शुभम्।

त्वद् वियोगातुराहं वै यानं कर्तुं न च क्षमा।।२८।।

यूथी भूत्वा भविष्यामि श्रीकृष्णरासमण्डले।

यत् किंचिन्मे प्रकथितं तत् क्षमस्व हरिप्रिये।।२६।।

गर्गसंहिता वृन्दाव खण्ड

इस प्रकार यमुना से पुनः मिलने का संकल्प करती हुई गंगा भोगवतीपुरी के वन में भोगवती गंगा नाम से अवस्थित हुई जिस गंगा के जल को महादेव-सहित शेष जी अपने शीश पर सदैव धारण करते हैं।[१]

13. नरनारायणोपाख्यान -

वामनपुराण (अध्याय २ श्लोक३५-४८ तक) में गंगा सम्बन्धी एक रोचक आख्यान वर्णित हैं।

प्राचीनकाल में ब्रह्मा और शंकर में यह दुर्विवाद छिड़ा कि "आपकी उत्पत्ति मुझसे हुई है।" इस विवादसे कुद्ध होकर अमर्षशील शिव ने नरबाग्र से पुरुषवादी ब्रह्मा का शिरच्छेद कर डाला। वह छिन्न मस्तक शंकर काम करतल पर ही गिरा और तेजी से चिपक गया। सहशीश शंकर के करतल से छूटता

---

१. सापि भोगवतीनाम्ना बभौ भोगवतीवने।
यज्जलं त्रिनयनः शेषो मूर्ध्ना विभर्ति हि।।

ही नहीं था।

दुखी शिव एक दिन पर्यटन करते हिमवान् पर्वत पर नर-नारायण के आश्रम में पहुंचे और बोले- हे भगवन् ! मैं महाकापालिक हूँ, मुझे भिक्षा दीजिये।

शंकर की याचना सुनकर धर्मपुत्र नर-नारायण बोले - हे महेश्वर ! अपने त्रिशूल से मेरी वाम भुजा का ताडन करो। नर-नारायण का प्रस्ताव मान जैसे ही शिव ने त्रिशूल से आधात किया वैसे ही जल की तीन धारायें फूट पड़ी। एक धार तो "आकाश गंगा" रूप में प्रतिष्ठित हुई। दूसरी पृथ्वी पर गिरी जिसे महर्षि अत्रि ने मन्दाकिनी के रूप में प्राप्त किया और तीसरी धारा भयानक दिखाई पड़ने वाले ब्रह्मा के कपाल पर गिरी जिससे कपाल-मोचन भी हुआ और एक कवच सन्नद्ध शिशु भी पैदा हुआ।[1]

उपाख्यानों का सामंजस्य -

यह एक विचारणीय महत्वपूर्ण प्रश्न है कि गंगा-सम्बन्धी इन उपाख्यानों की संगति कैसे बैठाई जाये, इस सन्दर्भ में कठोप निषद् का यह मन्तव्य ही समाधान प्रस्तुत करता है -

"नेषा तर्केण मतिरापनेमा।"

गंगा के मानवी रूप के सन्दर्भ में अध्यायारम्भ में ही कुछ तथ्य प्रस्तुत किये गये हैं। इन गूढ़ समस्याओं का समाधान पाने के लिये भारतीय देवशास्त्र का तात्विक अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। हमारे पूर्वजों ने अपनी

---

१. त्रिशूलाभिहतान्मागति् तिस्तो धारा विनिर्ययुः।
एका गगनमाक्रम्य स्थिता ताराभिमण्डिता।।
द्वितीयान्यपतद् भूमौ तां जग्राह तपोधनः।
अत्रिस्तस्मात् समुद्भूतौ दुर्वासाः शंकरांशतः।।
तृतीयान्यपतद्धारा कपाले रौद्रदर्शने।
तस्मात् शिशुः समभवत् सन्नद्धकवचो युवा।।

तपशक्ति से ब्रह्माण्डके गूढातिगूढ रहस्यों को भी ''हस्तामलक'' के समान प्रत्यक्ष देखा है। आत्म विधा के तो वे विशेषज्ञ ही थे। शरीर को स्थूल या सूक्ष्म बनाना, जीवन-मरण, परकायाप्रवेश जैसे दुरधिगम विषय भी भारतीय मनीषियों के लिये साधारण रहे हैं।

गंगा का वैयक्तिक स्तर पर मानवी रूप सम्भव न भी हो तो काव्यशैली के आयाम में इस तथ्य की सच्चाई पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया जा सकता। जड़ पर चेतन का आरोप-भारतीय कविता का एक प्रधान वैशिष्ट्य रहा हैं। कालिदास की समूची काव्यसृष्टि जड़ में चेतन का दर्शन करती हैं। पेड़ से गिरते पीले पत्तों में आँसू देखना अथवा नाचते मयूर के कलाप में नायिका के केश-कुन्तलों को देखना कालिदास के लिये एक साधारण सी बात हैं।[१]

गंगा का मानवीकरण भी उसी प्रशस्त भारतीय काव्यदृष्टि का परिणाम है। गंगा ने भारतीय संस्कृति, धर्म एवं समाज का निर्माण किया हैं। वह भारत के उत्थान -पतन की मूक साक्षी रही है। वह सच्चे अर्थो में एक जीवन्त नारी है। उसका नारी रूप कभी वात्सल्यमयी जननी का है, तो कभी स्नेह कातर प्रेयसी का और कभी समर्पिता अर्धांगिनी का।

पौराणिक उपाख्यानों में गंगा को जीवन्त नारी की दृष्टि से देखा गया है। इसी दृष्टि के कारण गंगा की जीवनचर्या ने लम्बे उपाख्यानों के रूप धारण कर लिया क्योंकि मानवी बनते ही गंगा एक भौतिक जलप्रवाह नहीं रह जाती बल्कि वह नानाप्रकार के जीवन-भोगों में आबद्ध एक सांसारिक प्राणी का रूप धारण कर लेती है। वह कभी दैवी शक्ति से ओत-प्रोत देवता के रूप मे पृथ्वी पर उतरती है। अपने भक्तों पर कृपा करने के लिये तो कभी अष्टवसुओं की कातरता का सदय बनकर, उन्हें जन्म देने के लिये शान्तनु की पत्नी बन जाती है। कभी अपनी

---

१. द्रष्टव्य- शाकुन्तलम् ४ अंक तथा उत्तरमेघ

सपत्नियों से अभिशप्त होकर प्रिय-वियोग का दुख भोगती है तो कभी किस महान् ऋषि की तपश्चर्या से प्रभावित होकर उस पर कृपालु बन जाती है।

"इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थमुपबृंहयेत्" की परम्परा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। जिस तथ्य को वेद अपने गूढ मंत्राक्षरों से सर्वसाधारण को नहीं समझा पता उसी तथ्य को पुराण सरल कथानकों द्वारा समझाने का यत्न करता है। वेद तो "पिबाम सोमममृता अभूम" कहकर छुट्टी पा लेता है। परन्तु इसकी पूरी प्रक्रिया वैदिक कर्मकाण्ड अथवा गरुड़ पुराण का प्रेतकल्प समझने के बाद ही हृदयस्थ हो पाता हैं, सम्भव है कि गंगा के सार्वभौम स्वरूप की स्थापना के ही लिये पुराणकारों ने इन गंगोपाख्यानों की सृजना की हों क्योंकि यह सारी विसंगति केवल अश्रद्धालु अथवा तर्कश्रियी के लिये हैं। एक आस्थावान् भारतीय के लिये तो गंगा देवता भी हैं, मानवी भी हैं, सदानीरा नदी भी हैं। उनके तीनों रूपों में एक विलक्षणा सामंजस्य हैं, तारतम्य हैं, विश्वसनीयता हैं। गंगोपाख्यानों की सच्चाई पर अविश्वास किया ही नहीं जा सकता।

पौराणिक उपाख्यानों में वर्णित गंगा के अनेक रूप हमने देखे हैं। वे रूप देश काल एवं व्यक्ति की सीमा के बन्धन के कारण एक दूसरे से पृथक हैं। परन्तु उन समस्त रुपों में गंगा का नारीत्व अक्षुण्णा रूप से अनुस्यूत है। फलतः पुराणों के विविध स्वतन्त्र प्रंसगों में गंगा के "नारीत्व" का भी विश्लेषण किया गया है। यह विश्लेषण उपाख्यानों में साकार नहीं हो सका कथानुरोधवश परन्तु जब गंगा नारी है। तो स्वाभाविक है कि नारीधर्म का प्रत्येक सत्य उन पर भी चरितार्थ होगा। पुराणकार ने आश्चर्य जनक रूप से इस समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है।

अगले कुछ अनुच्छेदों में विविध पुराण-प्रसंगों के माध्यम से गंगा के "नारीत्व" के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डाला जा रहा है।

1. गंगा का रजस्वलात्व -

देवी भागवत (६/१२/३ से ७ तक) में पवित्रता की दृष्टि से समुद्रगामिनी नदियों को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। जो समुद्र में नहीं गिरतीं, वे अल्पपवित्र है। इस दृष्टि से गंगा सर्वाधिक पवित्र है। श्रावण तथा भाद्रपद महीने गंगा के रजः काल है। फलतः इन महीनों में गंगा स्नान प्रशस्त नहीं माना जाता।

।।व्यास उवाच।।

श्रृणु राजन् प्रवक्ष्यामि तीर्थानि विविधानि च।
येषु तीर्थेषु देवीनां प्रशस्तान्यायनानि च।।

नदीनां जाह्नवी श्रेष्ठा यमुना च सरस्वती।
नर्मदा गण्डकी सिन्धु गोमती तमसा तथा।।

कावेरी चन्द्रभागा च पुण्या वेत्रवती शुभा।
चर्मण्वती च सरयूस्तापी साभ्रमती तथा।।

एताश्च कथिता राजन् अन्याश्च शतशः पुनः।
तासां समुद्रगाः पुण्याः स्वल्पपुण्या ह्यनब्धिगाः।।

समुद्रगा नान्ताः पुण्याः सर्वदौधवहास्तु याः।
मासद्वयं श्रावणादौ ताश्च सर्वा रजस्वलाः।।

2. गंगा की सखियाँ -

शिवपुराण के पार्वती खण्ड, अध्याय५, में ''जाह्नवीयूथ वर्णन'' में मिलता हैं। इस सन्दर्भ में बताया गया हैं कि गंगा का यूथ (जत्था या

टोली) १६ देवांगनाओं का हैं।

उनके नाम इस प्रकार है।

तदानीं दिव्यनार्यश्च षोडशारं समाययुः।
तौ दम्पती च सन्द्रष्टुं महादरपुरस्सरम्।।

सरस्वती च लक्ष्मीश्च सावित्री जाह्नवी तथा।
अदितिश्च राची चैव लोपामुद्राप्यरुन्धती।।

अहल्यां तुलसी स्वाहा रोहिणी च वसुन्धरा।
शतरुपा च संज्ञा च रतिरेताः सुरास्त्रियः।।

गर्ग संहिता के गोलोक खण्ड अध्याय चार में गंगा-यमुना आदि आठ सख्यिों का एक यूथ वर्णित किया गया है। इनके नाम हैं गंगा, यमुना, रमा, मधु-माधवी, विरजा, ललिता, विशाखा, और माया।

गर्ग संहिता के ही गिरिराज खण्ड (अध्याय २) में बताया गया है कि जाह्नवी आदि सखियों के ८,१६ तथा ३२ संख्या वाले यूथ बारी-बारी से गोवर्धन पर्वत पर आये।

3. गंगा का पुर्नजन्म-

पौराणिक सन्दर्भ बताते है कि गंगा ने विविध देवकायों को पूर्ण करने के लिये बार-बार अवतार लिया है। गर्ग संहिता (गोलोक खण्ड अध्याय३) में ब्रह्मा के पूछने पर नारायण अपने द्वापर-युगीन अवतरण की बात बताते हुये कहते हैं कि गंगा ही द्वापर में मेरी पत्नी ''मित्र वृन्दा'' होगी।

।।श्री भगवानुवाच।।

वसुदेवस्य देवक्यां भविष्यामि परः स्वयम्।
रोहिण्यां मत्कत्नाशेषो भविष्यति न संशयः।।

श्रीः साक्षाद् रुक्मिणी भैष्मी शिवा जाम्बवती तथा।
सत्या च तुलसी भूमौ सत्यभामा वसुन्धरा।।

दक्षिणा लक्ष्मणा चैव कालिन्दी विरजा तथा।
भद्रा हीर्मित्रवृन्दा च जाह्नवी पापनाशिनी।।

रुक्मिण्यां कामदेवश्च प्रद्युम्न इति विश्रुतः।
भविष्यति न सन्देहस्तस्य त्वं च भविष्यसि।।

4. गंगा का आयुष्य -

विभिन्न पौराणिक सन्दर्भो में गंगा के आयुष्य के सन्दर्भ में अलग-अलग बातें कही गई हैं।

एक प्रंसग तो अनन्तकाल तक गंगा के धराधाम में बने रहने का अनुमोदन करता है। जब तक पृथ्वी पर तुलसी की पूजा होगी, आकाश में गुरु नक्षत्र रहेगा, स्वर्ग में कल्पबृक्ष तथा समुद्र में वाडवाग्नि तब तक गंगा भी भारतीय भागीरथ के रथ की लीक में रहने को बचनबद्ध हैं।[१]

शिवपुराण में भगवान शिव २८ वें काल तक गंगा को पृथ्वीलोक में रहने का निर्देश देते हैं।[२]

देवीभागवत के दो सन्दर्भो में कलि के पाँच सहस्र वर्ष बीतने तक गंगा के पृथ्वी पर रहने की बात कही गई हैं।[१]

१.यावद्धरण्यां तुलसी प्रपूज्यते गुरुर्नभःस्थो दिवि कल्पपादयः।
यावत्समुद्र वडवानलश्च वसामि तावत्तव चक्ररवाते।।

२.त्वया स्थातव्ययत्रेव व्रजेद्यावत्कलिर्युगः। वैवस्वतो मनुर्द्रेवि! ह्यष्टाविंशत्तमो भवेत्।।
शिव० अ० २६ श्लोक २६

३.कलेः पंचसहस्रे च गते वर्षे च मोक्षणम्।युष्माकं सरिताचैव मद्गेहे चागमिष्यथ।।
देवी ६/७/२१

कलेः पंचसहस्रं च वर्ष स्थित्वा च भारते। जग्मुस्ताश्च सरिद्रूपं विहाय श्री हरेःपदम्।।
देवी ६/८/१०

चाणक्यनीतिदर्पण के एक श्लोक में भी गंगा का आयुष्य ५००० वर्ष बताया गया है -

कलौ दश सहस्राणि हरिस्त्यजति मेदिनीम्।
तदर्ध जाह्नवीतोयं तदर्ध ग्रामदेवताः।।

5. गंगा का व्यक्तित्व -

प्रायः समस्त उपाख्यानों में गंगा के मानवी रूप का अनिन्द्य रूप-लावण्य वर्णित किया गया हैं। ये वर्णन गंगा के स्त्रियोचित सौन्दर्य के प्रमाणभूत हैं। देवी भागवत के एक प्रसंग में गंगा की इसी रूपच्छवि को अंकित किया गया है। इस वर्णन के अनुसार गंगा नवयौवन-सम्पन्ना, सर्वाभरणभूषिता, शरत्कालीन, मध्याहन- पद्म् के समान आनन वाली, मुस्कानयुक्त तथा अत्यन्त मनोहर हैं। उनके शरीर का रंग पिघले हुये सुवर्ण की तरह हैं। वह शरदिन्दु के समान दीप्ति वाली है।

गंगा की मुख श्री अत्यन्त स्निग्ध है। वह स्वयं भी अति स्निग्धस्वभावा, शुद्ध सात्विक प्रकृति वाली हैं। उनका श्रोणिभाग पीन एवं कठोर है। नितम्ब भाग मनोहर हैं। उनके पयोधरमुगल अत्यन्त वर्तुल, पीन, उन्नत एवं कठोर है। उनके नेत्रयुगल चारुता सम्पन्न, कटाक्ष-मण्डित है। उनकी पदगति रमणीय है। उनका कबरी-भार धुंधराला तथा मालती-माला से अंलकृत हैं। उनके ललाट पर ललित सिन्दूर बिन्दु हैं।[1] बीच-बीच में चन्दन बिन्दु भी हैं, उनके कपोलों पर कस्तूरी-पत्र अंकित है। उनका अधरोष्ठ बन्धूक-पुष्प के आकार वाला तथा सुन्दर है। उनकी दन्त-पक्तियाँ पके दाडिम-बीज के समान समुज्वल हैं। गंगा अग्नि में पवित्रित तथा नीवीयुक्त वस्त्रद्वय को धारण किये हुये है।

6. गंगा विग्रह का अंकन -

अवान्तरयुग में इन्हीं पौराणिक विवरणों के आधार पर

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य- देवी भागवत् स्कन्ध ६ अ० १३

गंगा के श्री विग्रह की मूर्तियों एवं चित्रों में अवधारणा भी की गई। मकरवाहिनी के रूप में गंगा की तथा कूर्मवाहिनी के रूप में यमुना की मानव- आकृतियाँ भारत के विभिन्न अंचलों में निर्मित की गई।

मकरवाहिनी गंगा का रूपवर्णन कुमार सम्भव (७,४२) तथा विष्णुधर्मोन्तर पुराण (३/५२/६ एवं ७) में मिलता है।[१]

गंगा तीर्थो के सन्दर्भ में प्रस्तुत गंगा मन्दिरों की अनेक मकरवाहिनी गंगा-मूर्तियाँ अत्यन्त प्राचीन हैं। मथुरा, सागर, प्रयाग, आदि के संग्रहालयों में गंगा की ऐसी अनेक मूर्तियाँ आज भी सुरक्षित हैं।

गुप्तकालीन मन्दिरों की चौखटों पर प्रायः मकरवाहिनी गंगा तथा कूर्मवाहिनी यमुना की मूतियाँ अंकित मिलती हैं। जबलपुर में तिगवा के विष्णु मन्दिर में गर्भगृह की चौखट पर ऐसी ही भव्य मूर्तियाँ निर्मित हैं। मध्यप्रदेश के ही नागोद राज्य में भूमरा के शिवमन्दिर में भी मकरवाहिनी गंगा की मूर्ति अंकित है।[२]

गंगा का भौतिक स्वरूप एवं माहात्म्य -

प्रस्तुत अध्याय में गंगा के भौतिक स्वरूप का विवेचन किया जा रहा है। पर्वत, प्रपात, वन, उपवन आदि की ही तरह नदी भी सृष्टि के प्रारम्भ बिन्दु से ही प्रकृति का एक अविच्छेय अंग रही है। भारत, चीन, यूनान,

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य - विश्व सभ्यता का इतिहास पृ० ३३८, डॉ० उदयनारायण राय
२. गंगा सम्बन्धी मूर्तियों एवं चित्रों का सविस्तार वर्णन द्रष्टव्य-
क- स्टडीज इन इण्डियन ऑर्ट, पृ० २११ डॉ० बासुदेवशरण अग्रवाल
ख- भारतीय कला के कुछ मांगलिक प्रतीक पृ० १६२, विमल मोहिनी श्रीवास्तव का शोध प्रबन्ध
ग- दि यक्षाज भाग २ पृ० ७०, कुमार स्वामी
घ- दि ऑर्ट ऑफ इण्डिया प्र०२२१, शिवरायमूर्ति
ड़- मेम्वायर्स ऑफ आर्क्योलोजिकल सवे ऑफ इण्डिया
च- शालमंजिका पृ०६८, डॉ० उदयनारायण राय

मिश्र, बेबिलोनिया एवं मोसोपोटामिया प्राचीन विश्व की ये ६ संस्कृतियाँ सर्वमान्य रही हैं। इनमें से अन्तिम दो तो नाम शेष है। परन्तु अन्य चार संस्कृतियों के प्राचीन रूप आज भी उन देशों में क्षत-विक्षत अथवा अक्षत रूप में विद्यमान हैं।

भारतीय संस्कृति का स्वरुप हिमालय और गंगा से जुड़ा रहा हैं, परन्तु भारतीय धर्म, संस्कृति तथा वाड्मय में गंगा का मूल्यांकन विलक्षण रीति से किया गया हैं। गंगा के प्रति जो शाश्वत दृष्टि मनश्चक्षु ऋषियों -महर्षियों की रही है। वह अन्य नदियों के प्रति ठीक उसी रूप में उपलब्ध नहीं होती।

गंगा की दैवी उत्पत्ति भी उसी दृष्टि का एक मानक बिन्दु है। भारत की हजारों नदियाँ, पर्वतों, सरोवरों अथवा प्रपातों से उद्भूत हैं। एकमात्र गंगा ही स्वर्गलोक से उतरी हैं इसीलिये उसे सिद्धसिन्धु (शिशुपालवध प्रथम सर्ग) स्वर्णनदी, विवुधापगा, सुरनदी, निलिम्पनिर्झरी (शिवताण्डव स्त्रोत) आदि कहा गया है।

हिमालय के विविध शृंगो एवं उपत्यकाओं में गतिशील गंगा का भैतिक रूप विवेचित करने से पूर्व अपेक्षित है कि उसके दैवी-उद्भव पर पुराण दृष्टिका आंकलन कर लिया जाये।

गंगा का दैवी उद्भव -

1. हरिवंश पुराण -

(भविष्य पर्व अ०१७) में कहा गया है कि परमेश्वर के जलमय विग्रह से ही सोम उत्पन्न हुआ। इस धारासलिल से अभिषिक्त शिव भतेश पद पर अधिष्ठित हुये। वह धाराजल स्वभावतः नाद उत्पन्न करने के कारण ''नदी'' कहा गया । वही (परमेश्वर विग्रहभूता) नदी ब्रह्मलोक को पवित्र कर जब गगन से ''गो'' अर्थात् पृथ्वी पर आई तथा सात धाराओं में फैली तो उसे गंगा ख्याति प्राप्त हुई।

सोमात् सोमः समुत्पन्नो धारासलिल विग्रहात्।
ययाभिषिक्तो भूतानामधिपत्ये महेश्वरः।।२३।।

अभिषिच्य च भूतेशं कृत्वा कर्म स्वभावतः।
नदतिस्म तदा नादं तेन सा ह्युच्यते नदी।।२४।।

सा ब्रह्मलोकं संभाव्य अभिभूय सहस्रधा।
गां गता गगनाद् देवी सप्तधा प्रससार च।।२५।।

इमं लोकममुं चैव भावयन् क्षरसंभवम्।
सहस्रधा च राजेन्द्र! वसुधां च पुनः पुनः।।२६।।

2. देवी भागवत -

स्कन्ध ६ अ० ३४ में गंगा के दैवी रुप का अनेकशः व्याख्यान किया गया है। "गंगागर्भ" की परिकल्पना से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। गंगा के जलप्रवाह से चार हाथ आगे तक का तटभाग गंगागर्भ कहा जाता है। इसमें नारायण का नित्यवास होता है। इस नारायण क्षेत्र में प्राणत्याग करने वाला व्यक्ति मुक्त हो जाता है। नारायण क्षेत्र में दान देने वाला व्यक्ति "तीर्थ-प्रतिग्राही" कहा जाता है। ऐसे व्यक्ति कुम्भीपाक नरक के भागी होते हैं।[१]

नदीनां जाह्नवी श्रेष्ठा यमुना च सरस्वती।
नर्मदा गण्डकी सिन्धुर्गोमती तमसा तथा।।

- ६,१२,४

---

१. प्रवाहमवधिं कृत्वा यावद्धस्तचतुष्टयम्।
तत्र नारायणः स्वामी गंगागभन्तिरे वसेत्।।
तत्र नारायण क्षेत्रे मृतो याति हरेः पदम्।
वाराणस्यां बदयां च गंगासागर संगमे।।

तीर्थानां च यथा गंगा पवित्राणां शिवो यथा।
एकादशीब्रतानां च पुष्पाणां तुलसी यथा।।

- ६,३०,१२८

पुरुषाणां यथा विष्णुः गृहाणां च यथा रविः।
नदीनां तु यथा गंगा मुनीनां कश्यपो यथा।।

3. श्रीमद् भागवत–

स्कन्द ५ अध्याय १७ में गंगोत्पत्ति का अत्यन्त विस्तृत एवं जटिल वर्णन उपलब्ध होता है। इस सन्दर्भ में कहा गया हैं कि गंगा भगवान त्रिविक्रम के वाम पादांगुष्ठनख से निकलकर घुलोक में गिरंती है। वहाँ से ध्रुवलोक विष्णुपद तथा ध्रुवलोक से चन्द्रमण्डल में आती हैं चन्द्रमण्डल से चतुधारा के रूप में आगे बढ़ती है।[1]

निम्नगानां यथा गंगा देवानामच्युतो यथा।
वैष्णवानां यथा शम्भुः पुराणानामिंद तथा।।

- १२.१३.१६

क– सीता गंगा –

ब्रह्मलोक से केसंराचल (सुमेरू) होती हुइ गन्धमादन शिखरों पर फैलती है।

ख– अलकनन्दा गंगा–

हेमकूट होती हुई भारत में जाती है।

ग– चक्षुगंगा–

केतुमाल होती हुई पश्चिम समुद्र में गिरती है।

---

१. द्रष्टव्य भागवत - अध्याय ६/३४

घ- भद्रा गंगा-

श्रृंगवान् पर्वत से निकलकर उत्तर कुरु को प्लावित करती हुई उत्तर सागर में गिरती हैं।

4. गर्ग संहिता -

गिरिराज खण्ड श्लोक ६ में भी गंगा को श्रीकृष्ण के चरणकमल से उत्पन्न स्वीकार किया गया है-

अंसख्यब्रह्माण्ड्यतेर्गोलोकाधिपतेः प्रभोः।
पुनः पादाब्जसम्भूता गंगा त्रिपथगामिनी।।

5. नारद पुराण -

नास्ति गंगासमं तीर्थु, नास्ति मातृसमो गुरुः।
नास्ति विष्णुसमो देवः, तपो नानशनात्परम्।।

6. नृसिंह पुराण -

गंगा तु प्रथमं पुण्या यमुना गोमती पुनः।
सरयू सरस्वती च चन्द्रभागा चर्मण्वती।।

- ६६.२

7. स्कन्द पुराण-

नदीनां च यथा गंगा पादपानां च चूतकः।
तद्वत्तवं तिर्यग्योनीनां भविष्यसि न संशयः।।

- ८.१०

विष्णु पुराण में गंगा -

विष्णु पुराण का एक सुभाषित सर्वविदित हैं जिसमें पवित्र पावन भूमि को देवताओं के लिये भी स्पृहणीय बताया गया हैं। स्वर्ग के देवता भी

यह गीत गाते हैं कि भारत भूमि में जन्म लेने वाले व्यक्ति धन्य हैं।

''गायन्ति देवा क्लिगीतकानि धन्यास्तु ते भारतभूमि भागे।

स्वर्गावपर्गास्पदमार्गभूते, भवन्ति, भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।।

द्वितीय अंश ३ अध्याय २४

यहाँ विष्णु पुराण में गंगा की महत्ततापर प्रकाश डाला गया है।

गंगा गंगेति यैर्नाम योजनानां शतेष्वपि।

स्थितै रुच्चारितं हन्ति पापं जन्मत्रयार्जितम्।।

द्वितीय अंश, अध्याय ८,१२३

जिस गंगा का गंगा-गंगा ऐसा नाम सौ योजन की दूरी से उच्चारण किये जाने पर (जीव के) तीन जन्मों के संचित पापों को नष्ट कर देता है।

गगां शतद्रुं यमुना विपाशां,

सरस्वती नैमिषगोमती वा।

तत्रावगाझार्चनमादरेण,

कृत्वा पितृणां दुरितानि हन्ति।

तृतीयाशं १४अध्याय श्लोक ८

''द्वादश वार्षिक्यामनावृष्टयां विश्वामित्रकलत्रापत्यपोषणार्थ।

चाण्डा प्रतिग्रहपरिहरणाय च जाह्नवी तीरन्यग्रोधे मृगमांसमनुदिनं बबन्ध।।

चतुर्थ अंश अध्याय ३/२३

एकबार बारह वर्ष तक अनावृष्टि हुई तब उस समय विश्वामित्र ऋषि के पत्नी और पुत्रों ने पोषणार्थ तथा अपनी चाण्डालता को छुड़ाने के लिये वह गंगा जी के तट पर एक वट वृक्ष पर प्रतिदिन मृग का माँस बाँध आता था।

जब सगर को मालूम हुआ कि उसके समस्त पुत्र महर्षि

कपिल के तेज से दग्ध हो गये है तो सगर पुत्रों द्वारा खोदे हुये मार्ग से अंशुमान कपिल जी के पास पहुंचा और भक्तिपूर्वक तथा विनम्र होकर निवेदन किया तब भगवान कपिल ने उससे कहा,''बेटा जा इस धोड़े को ले जाकर अपने दादा को देदो और तेरी जो इच्छा हो वही वर माँले तेरा पौत्र गंगा जी को स्वर्ग से पृथ्वी पर लायेगा। जो इस प्रकार है -

अथैनं भगवानाह ।।२५।।

गच्छैनं पितामहायाश्वं प्रापम वरं वृणीष्व च पुत्रक पौत्रश्च ते।

स्वर्गाद्गंगा भुवमानेष्यत इति।।

चतुर्थ अंश अध्याय ४/२५-२६

जब अंशुमान ने कपिल ऋषि से कहा कि मुझे ऐसा वर प्रदान कीजिये जिससे मेरे अस्वगर्य पितृगण को स्वर्ग की प्राप्ति हो तब भगवान बोले-

''तदाकर्ण्य तं च भगवानाह उक्तमेवैतन्मयाद्य।

पौत्रस्ते त्रिदिवागंगा भुवमानेष्यतीति।।

चतुर्थअंश अध्याय ४/२८

तब अंशुमान से दिलीप और दिलीप से भगीरथ हुआ, जिसने गंगा जी का स्वर्ग से पृथ्वी पर लाकर उनका नाम भागीरथी कर दिया। इसका वर्णन इस श्लोक मे दृष्टिगोचर होता है।

दिलीपस्य भगीरथः योडसौ गंगा स्वर्गादिहानीय

भागीरथी संज्ञा चकार।

चतुर्थ अंश अध्याय ४/३५

अमावसु के भीम, भीम के काञ्चन काञ्चन के सुहोत्र और सुहोत्र के जह्नु नामक पुत्र हुआ, जिसने अपनी सम्पूर्ण यज्ञशाला को गंगाजल से आप्लाबित देख क्रोध से रक्त नेत्र हो भगवान यज्ञ पुरुष को परम समाधि के

द्वारा अपने में स्थापित कर सम्पूर्ण गंगा जी को पी लिया था। तब देवर्षियों ने इन्हें प्रसन्न कर और गंगा जी को इनके पुत्री भाव को प्राप्त करा दिया इसका वर्णन अधोलिखित श्लोक में वर्णित है -

तथामावसोर्भीमनामा पुत्रोऽभवत्। भीमस्य काञ्चनः काञ्चनात्सुहोत्र,
तस्यापि जह्नुः। योऽसौ यज्ञवाटमखिलं गंगाम्भसा प्लावितमवलोक्य।
क्रोध संरक्त लोचना भगवन्तं यज्ञ पुरुषमात्मनि परयेण समाधिना,
समारोप्याखिलामेव गंगामपिबत्। अथैनं देवर्षयः प्रसादयामासुः।
दुहितृत्वे चास्य गंगामनयन्।।

चतुर्थ अंश सप्तम अध्याय २-६

इस प्रकार विष्णु पुराण में भी गंगा के महत्व का बड़ा ही मनोहर वर्णन प्राप्त होता है।

गंगा की सर्वदेवमयता -

पिछले अनुच्छेदों में गंगा की दैवी उत्पत्ति एवं उसकी श्रेष्ठता एवं पवित्रता पर यावच्छक्य प्रकाश डाला गया है। अब इसी सन्दर्भ में गंगा की "सर्वदेवमयता" पर भी विचार कर लेना समीचीन होगा। भारत के प्राचीन धर्मशास्त्रीय बाङ्.मय में गंगा का जो विराट एवं सार्वभौम रूप अंकित किया गया हैं। वह सम्भवतः, ईश्वरतत्व के अनन्तर सर्वाधिक महनीय हैं।

गंगा स्वयं तो एक देवता हैं ही परन्तु उनका देवतूव भी विराट हैं, असीम हैं। गंगा की सर्वदेवमयता, बृहत्ता एवं महिमशालिता के प्रमाण संस्कृत-वाङ्.मय में पदे-पदे उपलब्ध होते है। कुछ महत्वपूर्ण व्याख्येयांश प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

1. गोरूपिणी -

गो पूजा के सन्दर्भ में भारतीय कर्मकाण्ड विधि में गाय को गंगा माना गया है -

आवाहयाम्यहं देवीं त्रैलोक्येषु च मातरम्।
यस्याः शरणमन्विष्टं सर्वपापैः प्रमुच्यते।।

त्वं देवी त्वं जगन्माता त्वमेवासि वसुन्धरा।
सावित्री त्वं च गायत्री गंगा त्वं च सरस्वती।।

तृणनि भक्षसे नित्यममृतं सुबसे प्रभो।
भूतप्रेत पिशाचांश्च पितृदैवतमानुषान्।।
सर्वान् तारमसे देवि! नरकात् पाप संकटात्।।[१]

2. दुर्गा रूपिणी गंगा -

देवी भागवत १०,१३,६४ में देव समूह द्वारा भगवती के स्तवन-क्रम में उन्हें गंगा कहा गया है -

चण्डमुण्ड
नमस्ते विजये गंगे! शारदे विकचानने।।[२]

3. तीर्थ रूपा गंगा -

सर्वरत्नमयो मेरूः सवश्चिर्यमयं नभः।।
सर्वतीर्थमयी गंगा सर्वदेवमयो हरिः।।

महाभारत, शान्ति (गजेन्द्र मोक्ष श्लोक ५१)

सकतीर्थोद्रितोयेषु गंगायां तु पुनः पुनः।

---

१. द्रष्टव्य - अन्त्येष्टिश्राद्धप्रकाश - पं० चतुर्थीलाल गौढ़, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
२. देवी १२-५-६,१०,११ मे गंगा का आनन्दजननी दुर्गा का नवाँ रूप माना गया है।
भागीरथी मृर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि।
त्रिलोकवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी।।

सर्वतीर्थमयी गंगा सर्वदेवमयो हरिः।।

सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वधर्मो दयापरः।।

नृसिंह पुराण ६६,४०

4. राधारूपिणी गंगा -

देवीभागवत ६.८५.४६-५० में राधा एवं दुर्गा के चरित्र वर्णन-प्रसंग में राधा को गंगा कहा गया हैं।

नमः सास्वतीरूपे नमः सावित्रि शंकरि।

गंगापद्मावतीरुपे वष्ठि मण्डलचण्डिके।।

5. गायत्री रूपा गंगा -

देवी भागवत् १२.६ में गायत्री के अष्टोत्तर सहस्र नाम (१००८) सन्दर्भ में उसे अनेकशः गंगा कहा गया हैं। नाम क्रम के अनुसार वे पर्याय इस प्रकार है -

गंगा, गोविन्दचारणाक्रान्ता, जाह्नवी, जह्नुतनया, त्रिस्तोता, भागीरथी, बदरिकाश्रमनिवासिनी, व्योममध्यस्था, वायुमण्डलमध्यस्था, विष्णुपत्नी, वसुदोहिनी, भोगेवती, भिषग्वरा, षढमुखप्रियकारिणी, सप्तर्षिमण्डलगता, सोममण्डलवासिनी, मुकुन्दपदविक्रमा, नारायणप्रियां, नरकलेशशमनी, निर्मला, नित्यशुद्धा, नन्दा, नर्मदा, नलिनी, नीला, नृनुता, नारायणपदोद्भवा, नदीरूपा, पावनी, ब्रह्माण्डवहिरन्तःस्था, लोकविश्रुता।[1]

---

१. देवी० १२-५-१७-१८ में पुनः कहा गया है -
गंगा यमुना चैव विपाशा च सरस्वती।
सरयूर्देविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा।।
गंडकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि।
त्वमेवासि.........................।।

6. कृष्णरूपिणी गंगा-

श्रीमद्भागवत १०.३१ के विभूतियोग में श्रीकृष्ण स्वंय को गंगा से समीकृत करते हैं-

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्तोतसामस्मि जाह्नवी।।

7. विष्णु रूपिणी गंगा -

श्रीमद्भागवत ८.४ १७ से २५ में गजेन्द्र मोक्ष सन्दर्भ में भगवान विष्णु गंगा को अपने स्वरुपांश रूप में प्रस्तुत करते हैं।

8. गंगा शिव स्वरूपा -

शिवपुराण रुद्रसंहिता युद्ध खण्ड अध्याय २ शलोक ३४ से ५४ तक में शिवविभूति -वर्णन के क्रम में भगवान शिव को गंगा से समीकृत किया गया है -

सत्यलोको सिलोकानां सरितां द्युसरिद्भवाम्।।

अव विस्तारमय से इस प्रंसग को यहीं समाप्त किया जा रहा है। यदि गंगा की दिव्यता, श्रेष्ठता, पवित्रता एवं सार्वभौम विराटता की ही तरह उसके महात्म्य का प्रसंग उठाया जाये तो एक बृहत्काम स्वतन्त्र अध्याय की सामग्री मिल सकती है। वेद-संहिताओं, पुराणों, आर्षकाव्यों, स्त्रोतों एवं काव्यादि ग्रंथों में गंगा के माहात्म्य का अत्यन्त विस्तृत विवेचन हुआ है।

गंगा तटी धर्म, तीर्थ, नगर एवं मेले -

उपर्युक्त विभिन्न पौराणिक सन्दर्भो से सुस्पष्ट है कि गंगा समस्त धर्म तीर्थो में मूर्धन्य है। अग्नि पुराण में पतित पावनी गंगा को सर्वश्रेष्ठ

धर्मतीर्थ इन शब्दों में घोषित किया गया है।

नास्ति विष्णु समं ध्येयं तपो नानशनात्परम्।

नास्त्यारोग्यसमं धन्यं नास्ति गंगासम सरित्।।

अर्थात् भगवान के समान कोई आश्रय नहीं, उपवास के समान तप नहीं, आरोग्य के समान कोई सुख नहीं ओर गंगा के समान कोई जल तीर्थ नहीं है।

इसी प्रकार कूर्मपुराण में भी धर्म तीर्थ के रूप में गंगा की महत्ता को यह कहकर प्रतिपादित किया गया है कि इसकी उपस्थिति मात्र से तपोवन का आभास शाधकों को होने लगता है।

सत्र गंगा महाभागा स देशस्तत्तपोवनम्।

सिद्ध क्षेत्रं तु तञ्ज्ञेयं गंगातीरं समाश्रितम्।।

गंगा विश्व के समस्त तीर्थो में श्रेष्ठ तीर्थ, नदियों में उत्तर नदी तथा सम्पूर्ण महापतिकियों को मोक्ष प्रदान करने वाली हैं। जैसा कि कहा गया है -

तीर्थानां तु परं तीर्थं नदीनामुत्तमा नदी।

मोक्षदा सर्वभूतानां महापातकिनामपि।।

गंगा की पावनता तथा तीर्थमयता को ध्यान में रखते हुये अनेक धर्म तीर्थ रूप नगर इसके दोनों तटों पर अविस्थित हैं। जिनमें देवप्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वार, (गंगाद्वार या मायापुरी) गढ़मुक्तेश्वर, सोरो, कम्पिल, फारूर्खाबाद, फतेहगढ़, शिवराजपुर, कानपुर, मिर्जापुर, वाराणसी, पाटलिपुत्र, कलकत्ता आदि धर्म तीर्थ नगर उल्लेखनीय है।

इन विभिन्न धर्म तीर्थो में विभिन्न धार्मिक पर्वो जैसे मकरसंक्रान्ति, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, मौनिअमावस्या, सोमवती अमावस्या, हरशायिनी एकादशी, पूर्णिमा आदि पुण्यतिथियों पर पौराणिक महात्म्य के अनुसार जनसमुदाय

के द्वारा गंगा स्नान कर पावन जल भगवन शंकर अथवा विष्णु प्रतिमाओं पर अभिषेकार्थ चढ़ाया जाता हैं। आवाल बृद्ध इन गंगा तटीय नगरों के तीर्थ मेलों में लाखों की संख्या में आकर देश की सांस्कृतिक एकता का उत्तम निदर्शन प्रस्तुत करते हैं। इस दृष्टि से गंगा तटीय कुम्भ मेले सम्पूर्ण संसार में सुविख्यात हैं। हरिद्वार और प्रयाग के कुम्भ पर्वो पर भारत के कोने -कोने से असंख्य नर-नारी कुम्भ पर्व में आकर गंगा स्नान का पुण्य लाभ अर्जित करते है और अपने आप को मोक्ष प्राप्ति का पात्र मान लेते हैं।

समीक्षा-

उपर्युक्त विवेचन के अनुसार हम कह सकते हैं कि पौराणिक साहित्य में गंगा के स्वरुप एंव महत्व की प्रभविष्णु व्यंजना पायी जाती है। अनेक पौराणिक उपाख्यानों- गौतमी गंगोपाख्यान, ऋषिकोपाख्यान, गंगासप्तशती आख्यान, अनसूयोपाख्यान, कुमारोपाख्यान, कुटिलोपाख्यान, गांगेयोपाख्यान, भोगवतीउपाख्यान, नरनारायणोपाख्यान आदि में गंगा का नैसर्गिक स्वरूप महत्ता पावनता, दिव्यता, वर्णित हैं।

इन उपाख्मानों में गंगा मात्र नदी न होकर सचेतन, देवी स्वरूपा, निरूपति हैं कहीं कहीं इन उपाख्मानों में गंगा का मानवीकरण विभिन्न क्रियाओं एवं गतिविधियों में प्रस्तुत हैं तो कहीं गंगा की सखियों के उल्लेख के साथ इसकी लौकिकता पुर्नजन्म लौकिक व्यक्तित्व अंकित हैं, तो कहीं गंगा की पारलौकिकता सहित अचिन्त्य चरित्र चित्रित किया गया है।

विभिन्न पुराणों में जहां गंगा की दैवी उत्पत्ति रूपायित हैं वहीं इसका लौकिक दृष्टि से धार्मिक तीर्थ के रूप में सांस्कृतिक अभ्युदय भी विभिन्न तीर्थो के मेलों के रूप में निरुपित किया गया हैं। समासतः सम्पूर्ण पौराणिक साहित्य में गंगा का स्वरुप एवं महात्म्य अद्‌भुत रूप में चित्रित हैं। जिसमें इसके धर्म तीर्थों एवं मेलों के माध्यम से भारत का पुरातन सांस्कृतिक गौरव उजागर होता हैं।

तृतीय

अध्याय

रामायण एवं महाभारत
में अंकित गंगा

तृतीय अध्याय

रामायण एवं महाभारत में अंकित गंगा-

आदिम ऐतिहासिक महाकाव्यों में वाल्मीकि कृत रामायण का अद्वितीय स्थान है, जिसमें 'रामकथा के माध्यम से हिन्दू संस्कृति के एक आदर्श दर्शन का निरुपण किया गया है। पौराणिक काल में गंगा के जिस दैवीय 'पतित पावनी' स्वरूप की रचना हुई है रामायण मेंउस धारणा को और अधिक पुष्टि मिली है। इस समय गंगा का स्थान समस्त नदियों में सर्वोच्च तथा दैवीय सत्ता से ओत-प्रोत हो चला था।

महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामकथा में त्रिपथगामिनी गंगा का सुन्दर चित्रण किया हैं। रामायण बालकाण्ड के सर्ग २।३०।५ में मिथिलापुर जाते हुये रामलक्ष्मण मुनि विश्वामित्र के साथ उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ गंगा और सरयू का संगम है जिसे उन्होंने वहाँ देखा।[1]

१. सर्ग ३५ बालकाण्ड में वर्णन है कि - श्री रामचन्द्र जी और लक्षमण जी सहित सब मुनि हंस सारको से सुशोभित पुण्य सलिला जाहन्वी के दर्शन कर बहुत हर्षित हुये।[2]

२. श्री राम विश्वामित्र से कहते हैं - हे भगवान मैं त्रिपथगा गंगा जी का वृतान्त सुनना चाहता हूँ कि वे किस प्रकार तीनों लोकों को लाँघकर समुद्र में मिलतीं हैं।[3]

३. इस प्रकार श्रीराम के प्रश्न करने पर महर्षि विश्वामित्र गंगा की वृद्धि एवं जन्म की कथा कहानी आरम्भ करते हैं।

---

१. बालकाण्ड सर्ग २३, श्लोक ५ में गंगा वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है-
"तौ प्रयातों महातीर्थो दिव्यां त्रिपथगां नदीम्।
ददृशाते ततस्तत्र सरम्वाः संमगे शुभे।।५।।
२. बालकाण्ड सर्ग ३५ श्लोक ७ में गंगा इस प्रकार वर्णित है-
तां दृष्टवा पुण्य सलिलां हसं सारस सेविताम्।
वभूबुर्मनमः सर्वे मुदिताः सह राधवाः।।७।।
३. बालकाण्ड सर्ग ३५ श्लोक ७।

४. धातुओं की खान हिमालय नामक पर्वत के दो कन्यायें हुई जो पृथ्वी पर सौन्दर्य की दृष्टि से अद्वितीय थी।

५. इन कन्याओं की माता का नाम मेना है जो मेरुपर्वत की सुन्दर लड़की और हिमालय की पत्नी है।

६. हिमालय की बड़ी बेटी का नाम गंगा और छोटी का नाम उमा पड़ा।

७. हिमालय की ज्येष्ठ बेटी त्रिपथगा "गंगा" को जब देवता मिलकर निज कार्य सिद्धि के लिये माँग कर ले गये।

८. हिमालय ने भी तीनों लोको को पवित्र करने वाली गंगा की तीनो लोकों की भलाई के लिये माँगने वाले को दे देना चाहिये, अपना यह धर्म समझकर देवताओं को दे दिया।

६. तीनों लोकों का हित चाहने वाले देवता-गण भी गंगा को पाकर और कृतार्थ होकर चले गये।

१०. हे राम! यह तीनों लोकनमस्कृता गंगा और देवी उमा प्रसिद्ध हिमालय की बेटियाँ है।

११. हिमालय की बेटी रमणीय और पापनाश कराने वाले जल से बहने वाली और सुरलोक को जाने वाली यह सुर नदी गंगा नदी है।

बालकाण्ड के सर्ग ४२ में अपने पितरों के तर्पण की आँकक्षा रखे हुये भागीरथी की उग्र तपस्या से प्रसन्न ब्रह्मा भागीरथ से कहते है कि-

१. हिमालय की ज्येष्ठा पुत्री गंगा बड़ी वेग से पृथ्वी पर अवतरण करेगी, तब इसके प्रबल वेग को सम्हालने की सामर्थ्य शंकर जी के अतिरिक्त किसी अन्य देव में नहीं है।

२. सर्ग ४३ में गंगा अवतरण के निमित्त भागीरथ शिव जी अर्थात् भगवान शंकर की उपासना करते है। शंकर के प्रसन्न होने पर गंगा अवतरण की कथा का वाल्मीकि कृत रामायण में अत्यन्त मनोरम वर्णन हैं।

३. तब सब लोकों के द्वारा अभिनन्दनीय गंगा नदी रूप धारण कर दु:सह वेग के साथ शंकर के मस्तक पर गिरती हुई परम दुर्घरा गंगा विचार करती है कि वे अपने वेग के साथ बहाकर महादेव को भी पाताल ले जायेगी किन्तु गंगा के इन अभियान भरे विचारों को जानकर महादेव अत्यन्त क्रुद्ध हो जाते हैं। गंगा को अपने जटारूपी गुफा में ही छिपाये रखते हैं। हिमालय के साम और जटारुपी गुफा युक्त शिवजी के पवित्र मस्तक पर गंगा गिरी किन्तु अनेकानेक प्रयत्नों के उपरान्त भी वे देवाधिदेव शिवशंकर की जटाओं से न निकल सकी।

४. हे रघुनन्दन! गंगा को पृथ्वी पर न देख महाराज भागीरथ ने पुनः कठोर तप के द्वारा शंकर को प्रसन्न किया।

५. प्रसन्न होने पर शंकर जी ने श्री गंगा को हिमालय पर्वत स्थित बिन्दुसार छोड़ा, छोड़ते ही गंगा जी की सात धारायें हो गयी।[१]

वाल्मीकि रामायण के सर्ग ४४ में भागीरथ के अनुरोध पर अवतरित गंगा द्वारा राजा सागर के ६० हजार पुत्रों के तर्पण का वृतान्त है।

गंगा को साथ लिये भागीरथ उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ उनके पूर्वज भस्म हुये थे जैसे ही उनका गंगाजल से स्पर्श हुआ उसी क्षण वे ब्रह्मलोक जा पहुँचे और वहाँ से आर्शीवाद देते हुये बोले-

हे राजन! जब तक संसार में समुद्र का जल रहेगा तब तक सगर के पुत्र देवताओं की भाँति स्वर्ग में विराजेगें।

यह गंगा तुम्हारी ज्येष्ठ पुत्री होगी और तुम्हारे ही नाम (भागीरथी) के नाम से विख्यात होगी।

गंगा, त्रिपथगा, भागीरथी आदि इनके नाम होगें। इसीप्रकार वाल्मीकि जी अनेक स्थानों पर अपने ग्रन्थ में अनेक रुपों में गंगा का वर्णन करते है-

अयोध्याकाण्ड के सर्ग ५२ में रामवनगमन के समय गंगा

---

१. रामायण, बालकाण्ड सर्ग ४३ श्लोक ४२

पार करने का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है।[1] अयोध्याकाण्ड के ही सर्ग ३६ में भरत द्वारा गंगा पार करने का वर्णन भी उल्लेखनीय हैं। उत्तरकाण्ड के सर्ग ४६ में सीता त्याग के उद्‌देश्य से लक्ष्मण जी सीता को गंगा के तट पर ही छोड़ते हैं जहाँ वाल्मीकि आश्रम भी है।

इस प्रकार हम देखते है कि रामायण कालीन गंगा तात्कालिक व्यक्तियों के दैहिक एवं दैविक जीवन में अपना उत्कृष्ट स्थान रखती थी, वाल्मीकि अपने ग्रन्थ में सीता के द्वारा गंगा को सम्बोधित प्रार्थना में लिखते हैं- " ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता। यक्ष्ये प्रमुदिता गंगे सर्वकाय समृद्धिनी।।"

वाल्मीकि रामायण[2] में त्रिपथगा गंगा का काव्यात्मक चारुचित्रण निम्नलिखित पद्यों में दृष्टव्य है।

तत्र त्रिपथगां दिव्यां शीततोयाम शैवलाम्।
ददर्श राघवो गंगा रम्यामृषि निषेविताम्।।१२।।

गंगा तट के निकटस्थ ऋषि आश्रमों से अप्सराओं के लिये कल्याणकारिणी गंगा विशेष रूप से आकर्षण का विषय है।

आश्रमैरविदूरस्यैः श्रीमद्‌भिः समलंकृताम्।
कालेऽप्सरोभिर्दृष्टाभिः सेविताम्भोहृदां शिवाम्।।१३।।

देवदानव, गन्धर्व-किन्नर, नाग-मिथुनों से सेवित गंगा इस प्रकार उल्लिखित है-

देवदानवगन्धर्वैः किन्नरैरुपशोभिताम्।
नाग गन्धर्वपत्नीभिः, सेवितां सततं शिवाम्।।१४।।

आकाश गंगा के रूप में इस देवनदी का उल्लेख इन

---

१. रामायण, अयोध्या काण्ड सर्ग ५२ श्लोक ८५
२. वाल्मीकि रामायण का गंगोपाख्यान (बालकाण्ड अध्याय ३५ से ४४ तक गीताप्रेस संस्करण) तो प्रख्यात है ही, किन्तु उससे पृथक् गंगा के अनेक सन्दर्भ रामायण में विद्यमान हैं। चित्रकूट-यात्रा के सन्दर्भ में राम श्रृंगवेरपुर में प्रथम बार गंगा दर्शन करते हैं। यह वर्णन अत्यन्त जीवन्त एवं काव्यमय है।

शब्दों में द्रष्टव्य है-

देवीक्रीऽशताकीर्णा देवोधानयुतां नदीम्।
देवार्थमाकाशगतां विख्यातां देवपद्मिनीम्।।१५।।

गंगा का नैसर्गिक काव्यात्मक चित्रण निम्नांकित पद्यों में अत्यन्त हृदयावर्णक हुआ है-

जलाघाताट्टहासोग्रां फेननिर्मलहासिनीम्।
क्वचिद् वेणीकृतजलां क्वचिदावर्तशोभिताम्।।१६।।

क्वचिद् स्तिमितगंभीरां क्वचिद् वेगसमाकुलाम्।
क्वचिद् गम्भरीनिर्घोषां क्वचिद् भैरवनिः स्वनाम्।।१७।।

देवसंघाप्लुतजलां निर्मलोत्पलसंकुलाम्।
सदामत्तैश्च विहगैरभिपन्नायनिन्दिताम्।।१६।।

क्वचिदतीरेरूहैर्वृक्षैर्मालाभिरिव शोभिताम्।
क्वचित् फुल्लोत्पलच्छन्नां क्वचित् पद्मवनाकुलाम्।।२०।।

क्वचित्कुमुदखण्डैश्च कुड्मलैरूपशोभिताम्।
नानापुष्परजोध्वस्तां समक्षमिव च क्वचित्।।२१।।

व्यपेतमलसंधातां मणिनिर्मलदर्शनाम्।
दिशागजैर्वनगजैर्मत्तैश्च वरणारणैः।।२२।।

देवराजोपवाह्यश्च संनादितवनान्तराम्।
प्रमदामिव यत्नेन भूषितां भूषणोत्तमैः।।२३।।

फलपुष्पैः किसलमैर्वृर्ता गुल्मैर्द्विजैस्तथा।
विष्णुपादच्युतां दिव्यायपापां पापनाशिनीम्।।२४।।

शिशुमारैश्च नक्रैश्च भुंजगैश्च समन्विताम्।
शंकरस्य जटाजूटाद् भृष्टां सागरतेजसा।२५।।

समुद्रमहिषीं गंगां सारसक्रौञ्चनादिताम्।
आससाद महाबाहुः श्रृंगवेरपुरं प्रति।।२६

तामूर्मिकलिलावर्तामन्ववेक्ष्य महारथः।
सुमंत्रब्रवीत् सूतमिहैवाद्य वसामहे।।२७।।

अविदूरादयं नद्या बहुपुष्पप्रवालवान्।
सुमहानिंगदीवृक्षो वसामोऽत्रैव सारथे।।२८।।

उपर्युक्त पद्यों में आदिकवि द्वारा गंगा का जो नैसर्गिक लालित्यपूर्ण चित्रण किया है, उसमें गंगा की अलौकिक रम्य छटा प्रभावशालिता, लोक कल्याणकारिता अभिव्यंजित है। इस चारु काव्यात्मक वर्णना में गंगा का शिवत्व, लोकमातृत्व, पावनत्व पूर्णतः प्रकट होता हैं। अतः गंगा का मूल स्वरुप, व्यापक प्रभाव तथा अनुपम वैशिष्ट्य इन छन्दों से व्यक्त होता है।

काव्यगत गंगा की उत्पत्ति-

प्रायः प्राचीन आर्य साहित्य काव्य रूप में ही संकलित

हुआ है। वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, पुराण और रामायण तथा महाभारत उत्कृष्ट संस्कृतकाव्य के अद्वितीय उदाहरण है। वैदिक वाड्.मय में सरस्वती और सिन्धु का जो मनोहारी वर्णन मिलता हैं। वह काव्य की दृष्टि से हृदय को गद्‌गद् करने वाला है यथा -

दिवि स्वनो यतते भूग्गोपर्यन्तं शुष्ममुदियर्तिभानुना।।

अम्रादिव प्रस्तनयन्ति वृष्टयः सिन्धुर्यदेति बृषभो न रोरूवत्।।[१]

किन्तु इसके विपरीत वैदिक साहित्य में गंगा का वर्णन गौण है। इसका प्रमुख कारण यह है कि तत्कालीन आर्य सप्तसैन्धव प्रदेश में निवास करते थे और उनका परिचय अत्यन्त स्वल्प था। एक दूसरा कारण यह हो सकता है कि इस समय गंगा पूर्व में एक छोटी जल धारा रही हो जो हस्तिनापुर के समीप पूर्वी समुद्र 'अरावत' में मिल जाती होगी।[२] किन्तु शनै-शनै यह समुद्र पूर्व में खिसकता गया होगा और ठोस गांगेय प्रदेश का उदय हुआ, क्योंकि उत्तर वैदिक काल में आर्य साहित्य में गंगा का अधिक वर्णन मिलता हैं। क्योंकि इस समय आर्यो का कार्यक्षेत्र कुरु पांचाल प्रदेश हो चला था और वे गंगा-यमुना दो आब की उपजाऊ मिट्टी से परचित हो चले थे।

पौराणिक काल में तो इस नदी ने तत्कालीन ऋषियों के हृदय को जीत ही लिया। उन्होने गंगा से प्रभावित होकर उसके दैवीय स्वरुप का निरूपरण किया। हिमालय की गोद से निकल कर एक विशाल भूभाग को धन-धान्य से सम्पन्न कर उनके पशुओं के लिए विस्तृत चारागाह उपलब्ध कराने वाली गंगा उनके लिये एक साधारण नदी नहीं थी अपितु वह विष्णु से उत्पन्न तीनों लोकों के लिये नमस्कृत्य हो गयी, भविष्यपुराण में गंगा महात्म्य का वर्णन काव्य का अनुपम उदाहरण हैं -

---

१. ऋ० वे० १०-७५-३

२. डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी- ऋग्वेदिक भूगोल १९८५ कानपुर पृ० १५३

यत्फलं जायते पुंसां दर्शनात् परमात्मनः।

तद्भवे देव गंगाया दर्शनेन भक्तिभावतः।।[1]

कर्म पुराण में गंगा का वर्णन भी काव्य की दृष्टि से अनुपम है-

तीर्थानां परमं तीर्थ नदीनां परमानदी।

मोक्षदासर्वभूतानां पापोपहत चेतसाम्।।[2]

इस प्रकार पौराणिक काल में गंगा धर्म का आधार स्तम्भ बन चुकी थी। ऋषियों ने उसकी स्तुतियों ओर उसके देवीय स्वरूप के निरुपण में उत्कृष्ट काव्य की रचना की।

पुराणों में जिस गंगा को जो पवित्र पतित-पावन देवीय आभायुक्त स्वरुप मिला वह रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य युग में अपने सर्वोच्च स्तर पर पहुंच गया। गंगा तट पर अपना आश्रम बनाने वाले महर्षि वाल्मीकि तो गंगा पर अपना सर्वस्व निछावर करते प्रतीत होते है। उन्होंने अपने महाकाव्य रामायण में गंगा का जो वर्णन किया है। अपनी उपमाओं ओर हृदयग्राही प्रकृति चित्रण के कारण वह अनूठा बन पड़ा है।

तां दृष्टा पुण्य सलिलां हंस सारस सेविताम्।

वभूबुर्मुनयः सर्वेमुदिताः सहराधवाः।[3]

वाल्मीक रामायण में सीता गंगा को सम्बोधित करते हुये प्रार्थना करती है -

ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता।

यक्ष्ये प्रमुदिता गंगे सर्वकाम समृद्धिनी।।[4]

---

१. भविष्य पुराण
२. कर्मपुराण ३७-३३
३. रामायण, बालकाण्ड, सर्ग ३५ श्लोक ७
४. रामायण, अयोध्याकाण्ड सर्ग ५२ श्लोक ८५

अपने महाकाव्य में वाल्मीकि जी गंगा को अनके विशेषणों से सुशोभित करते हुये गंगा का काव्य में वर्णन करते है यथा-

१. गंगापुण्य नदी (बाल० ३५-७)

२. शिवा (अयां० ५०२६)

३. मुनिसेविता गंगा (बाल० ३५-७)

४. गंगा लोकपावनी (बाल० ३५-१८)

५. लोक नमस्कृता (बाल० ३५-१२)

६. अपापा पापनाशिनी (अयो० ५०-२४)

इसप्रकार वाल्मीकि ने अपने महाकाव्य के बालकाण्ड में गंगावतरण का जो वर्णन किया है। वह काव्य की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं।

वाल्मीकि कृत रामायण की भांति वेद व्यास कृत महाभारत नामक महाकाव्य भी गंगा की काव्यगत उत्पत्ति की दृष्टि से उत्कृष्ट स्थान रखता है। महाभारत के अनुसाशन पर्व का २६ वां अध्याय तो पूरा का पूरा गंगा महात्म्य को समर्पित है। उसे भूलोक में तात्कालिक फल देने वाली और अनेकानेक तप-नियम-संयम तथा कर्मकाण्डों से अधिक फल देनेवाली पतित पावनी के रूप में निरुपित किया गया है।

महाभारत की सबसे अनुपम देन है, गंगा का मानवीय रूप में निरुपण सम्भव पर्व के अध्याय ६६,६७,६८ में शान्तनु की प्रेयसी के रूप में गंगा का जो काव्यमय वर्णन हैं। वह भरत के नाट्य शास्त्र की नायिका के वर्णन को भी मलिन करने वाला प्रतीत होता है यथा-

सर्वानवद्यां सुदतीं दिव्याभरण भूषिताम्।

सूक्ष्माबरधरामेकां पयोदर समप्रभाम्।।[1]

इस प्रकार स्पष्ट होता है। कि पौराणिक ग्रन्थों में जिस

---

१. महाभारत, सम्भव पर्व ६७/२८

काव्यगत गंगा की उत्पत्ति हुयी, महाकाव्य युग में वह अधिक पुष्ट और पल्लिवित हुई।

काव्यगत गंगा का स्वरूप -

महर्षि वाल्मीकि तथा वेद व्यास ने अपने महाकाव्यों में गंगा के जिस स्वरुप का वर्णन किया है। वह एक ऐसी नदी का हैं, जो देवलोक की अमूल्य निधि है और लोक कल्याण की भावना से इस मृत्युलोक पर अवतरित हुई। विष्णु से उत्पन्न, शिव की जटाओं में विश्राम पाती त्रिपथगा गंगा पुण्य फल देनेवाली, ऐहिक तथा पारलौकिक लाभ प्रदान करने वाली तथा सनातन् धर्म का मेरुदण्ड हैं। वेद व्यास जी लिखते है।

सर्वकृत युगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरेऽपि कुरु क्षेत्र गंगा कलियुगे स्मृता।।[1]

महर्षि वाल्मीकि भी गंगावतरण का वर्णन करते हुये गंगा को लोक पावनी[2] तथा लोकनमस्कृता[3] बताते है, इस प्रकार महाकाव्य काल में गंगा का स्वरूप पूर्णतः दैवीय हो चुका था। वह अपने चमत्कारिक प्रभावों के कारण तात्कालीन ब्राह्मण धर्म की एक प्रमुख अंग बन चुकी थी। प्रत्येक ब्राह्मण धर्मालम्बी अपने जीवन में कभी न कभी गंगा स्नान की अभिलाषा रखने लगा था। इस प्रकार गंगा अपने दैवीय स्वरुप के कारण तात्कालिक देव मण्डल में एक विशिष्ट स्थान बना चुकी थी।

काव्यगत गंगा वर्णन का प्रभाव-

महाकाव्यों में गंगा का जो दैवीय वर्णन किया गया, उसका भारतीय जीवन पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ा। वैदिक काल में जो गंगा आर्यो के लिये एक गौण नदी थी। वह महाकाव्य काल तक भारतीय संस्कृत की केन्द्र बिन्दु

---

१. महाभारत, आरण्यक पर्व ८५-८६
२. रामायण, बालकाण्ड ३५-१८
३. रामायण बालकाण्ड ३५-१२

बन चुकी थी। कालान्तर में यह महाकाव्य जनश्रुति के रूप में और अपने प्रमुख देवता के रूप में प्रतिष्ठित होने के कारण जन-जन के लिये आदर और श्रृद्धा के केन्द्र बने। रामकथा और कृष्ण कथा का सम्पूर्ण भारत में नाना रूपों में प्रचार प्रसार होने के कारण साथ-साथ गंगा महात्म्य भी जन-जन में प्रसारित हुआ।

भारतीय इतिहास में मध्यकाल संक्रमण काल माना जाता है। इस काल में वन आक्रान्ताओं द्वीपों ने सम्पूर्ण भारत को पद-दलित किया। जिससे आक्रान्त सामान्य भारतीय हिन्दू अवतारवाद का आश्रय ले भगवान से अपनी समस्या समाधान हेतु अवतार की सम्भावना की कल्पना करता हुआ स्वयं को ढाढ़स दे कर धार्मिक प्रतीकों के रूप में अपने बहुदेवगढ़ को अपना सम्बल बनाये रखा फलस्वरुप गंगा, गीता और रामायण के रुप में तत्कालीन नये धार्मिक आधारों का उदय हुआ।

वर्तमान काल में सामान्य हिन्दु धर्मालम्बी के लिये गंगा का वही महत्व है। जो मुसलमानों के जीवन हज को प्राप्त है। गंगा के वर्तमान पतित, पावनी, परम पवित्र, अमरत्व प्रदायक, मोक्षदायक, तात्कालिक फल प्रदान करने वाली तथा लौकिक एवं पारलौकिक पुण्य फल देनेवाले स्वरुप का मूलाधार इन्ही महाकव्यों में गंगा के महत्व को निरूपित करते हुये जवाहर लाल नेहरु लिखते है-

The Ganga.......... India's Shore.

महाभारत में गंगा वर्णन-

महाभारत आर्य संस्कृति का एक महान् ग्रन्थ एवं अमूल्य रत्नों का अपार भण्डार है। भगवान वेदव्यास स्वयं लिखते है कि -'इस महाभारत में मैने वेदों के रहस्य और विस्तार, उपनिषदों के सम्पूर्ण सार इतिहास-पुराणों के उन्मेष और निमेष, चातुर्वण्य विधान, पुराणों के आशय, ग्रह, नक्षत्र, तारा, आदि के परिणाम न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, दान, पाशुपत, तीर्थो, पुण्यदेशो, नदियों, पर्वतो, वनों तथा समुद्रों का भी वर्णन किया हैं। अतएव महाभारत महाकाव्य हैं। गूढ़ार्थमय

ज्ञान, विज्ञान शास्त्र है, धर्मग्रन्थ है, राजनीतिक दर्शन है, आर्य जाति का इतिहास हैं, कर्मयोग दर्शन हैं, धर्मग्रन्थ हैं, राजनीतिक दर्शन हैं, आध्यात्म शास्त्र हैं और सर्वार्थ साधक तथा सर्वशास्त्रसंग्रह है।

उपनिषद् ऋषि की भी इतिहास पुराण को पंचमवेद बताकर महाभारत की सर्वोपरि महत्ता स्वीकार करते हैं "इतिहासः पंचमो वेदानां वेदः।।"

महाभारत की रचना निश्चय ही वाल्मीकि कृत रामायण की अपेक्षा अर्वाचीन है, वाल्मीकि रामायण एक ही व्यक्ति द्वारा रचित कृति है, जबकि महाभारत अनेक ऋषियों द्वारा संकलित रचना प्रतीत होती हैं। महाभारत और गंगा का बड़ा ही घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। रामायण में गंगा एक दैवी और प्राकृतिक रूप नदी के रूप में उल्लिखित हैं, जबकि महाभारत में गंगा ग्रन्थ का एक मानवीय किन्तु दैवीय आभायुक्त नायिका भी है।

महाभारत में संकलित कथा के एक प्रमुख धीरोदात्त नायक भीष्म गंगा के पुत्र हैं। इस प्रकार महाभारत में गंगा अपनी एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह करती है। गंगा के महत्व को प्रदर्शित करते हुये महर्षि वेदव्यास लिखते हैं -

सर्वकृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गंगा कलियुगे स्मृता।।

महाभारत में सर्वत्र गंगा का विशद वर्णन उपलब्ध होता है यथा -

सम्भवपर्व के ९६ वें अध्याय में वशिष्ठ जी के शाप से ग्रस्त वसु गंगा से अनुरोध करते हुये कहते है - हे गंगे! महर्षि वशिष्ठ ने अपनी धेनु की चोरी से कुपित हो हमें श्राप दिया हैं कि तुम लोग मनुष्य योनि में जन्म लो अतः उन ब्रहमवादी महर्षि के शाप को टाला नहीं जा सकता। हम चाहते हैं कि आप

ज्ञान, विज्ञान शास्त्र है, धर्मग्रन्थ है, राजनीतिक दर्शन है, आर्य जाति का इतिहास हैं, कर्मयोग दर्शन हैं, धर्मग्रन्थ हैं, राजनीतिक दर्शन हैं, आध्यात्म शास्त्र हैं और सर्वार्थ साधक तथा सर्वशास्त्रसंग्रह है।

उपनिषद् ऋषि की भी इतिहास पुराण को पंचमवेद बताकर महाभारत की सर्वोपरि महत्ता स्वीकार करते हैं "इतिहासः पंचमो वेदानां वेदः।।"

महाभारत की रचना निश्चय ही वाल्मीकि कृत रामायण की अपेक्षा अर्वाचीन है, वाल्मीकि रामायण एक ही व्यक्ति द्वारा रचित कृति है, जबकि महाभारत अनेक ऋषियों द्वारा संकलित रचना प्रतीत होती हैं। महाभारत और गंगा का बड़ा ही घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। रामायण में गंगा एक दैवी और प्राकृतिक रूप नदी के रूप में उल्लिखित हैं, जबकि महाभारत में गंगा ग्रन्थ का एक मानवीय किन्तु दैवीय आभायुक्त नायिका भी है।

महाभारत में संकलित कथा के एक प्रमुख धीरोदात्त नायक भीष्म गंगा के पुत्र हैं। इस प्रकार महाभारत में गंगा अपनी एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह करती है। गंगा के महत्व को प्रदर्शित करते हुये महर्षि वेदव्यास लिखते हैं -

सर्वकृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गंगा कलियुगे स्मृता।।

महाभारत में सर्वत्र गंगा का विशद वर्णन उपलब्ध होता है यथा -

सम्भवपर्व के ९६ वें अध्याय में वशिष्ठ जी के शाप से ग्रस्त वसु गंगा से अनुरोध करते हुये कहते है - हे गंगे! महर्षि वशिष्ठ ने अपनी धेनु की चोरी से कुपित हो हमें श्राप दिया हैं कि तुम लोग मनुष्य योनि में जन्म लो अतः उन ब्रहमवादी महर्षि के शाप को टाला नहीं जा सकता। हम चाहते हैं कि आप

पृथ्वी पर मानव पत्नी होकर हमें अपने पुत्ररूप में उत्पन्न करो ताकि हमें मानुषी स्त्रियों के उदर में प्रवेश न करना पड़े। वसुओं के अनुरोध पर तथास्तु कहकरगंगा जी बोली, पृथ्वी लोक पर ऐसा कौन सा श्रेष्ठ पुरुष है जो तुम लोगों का पिता होगा। वसुगण बोले- पृथ्वी लोक पर प्रदीप के पुत्र शान्तनु लोक विख्यात साधु पुरुष है। वे ही हमारे जनक होगें। तब गंगा जी ने कहा हे निष्पाप देवताओं! जैसा तुम कहते हो वैसा ही मेरा विचार है।

९७वें अध्याय में शान्तनु तथा गंगा के मिलन का वर्णन करते हुये लिखा है- राजाओं में श्रेष्ठ शान्तनु हिंसक पशुओं और जंगली भैसों को मारते हुये चारणों से सेवित गंगा तट पर अकेले विचरण करते थे।।२६।।

महाराज जनमेजय! एक दिन उन्होने एक परमसुन्दरी नारी देखी, जो अपने तेजस्वी शरीर से ऐसी प्रकाशित हो रही थी। मानो साक्षात् लक्ष्मी ही दूसरा शरीर धारण करके आ गयी हो।।२७।।

उसके सारे अंग सुन्दर तथा निर्दोष थे। दाँत तो और भी सुन्दर थे। वह दिव्य आभूषणों से विभूषित थी। उसके शरीर पर महीन साड़ी शोभा पा रही थी और कमल के भीतरी भाग के समान उसकी कान्ति थी, वह अकेली थी।।२८।।

उसे देखते ही राजा शान्तनु के शरीर में रोमांच हो आया, वे उसकी रुप -सम्पदा से आश्चर्य चकित हो उठे और दोनो नेत्रों द्वारा उसकी सौन्दर्य सुधा का पान करते हुये तृप्त नहीं होते थे।।२९।।

वह भी वहां विचरण करते महातेजस्वी शान्तनु को देखते ही मुग्ध हो गयी, प्रेम वश हृदय में सौहार्द का उदय हो गया, वह विलासिनी राजा को देखते तृप्त नहीं होती थी।।३०।।

तब रजा मधुर वाणी मे बोले सुमध्यमे! तुम देवी, दानवी, गन्धर्वी, अप्सरा, पक्षी, नागकन्या, अथवा मानवी जो भी हो, देवकन्या के समान

सुशोभित सुन्दरी।! मैं तुमसे याचना करता हूँ कि तुम मेरी पत्नि हो जाओ।।३१।।

९८वें अध्याय में वर्णन है। कि कुछ शर्तो के साथ गंगा और शान्तनु का सम्बन्ध हो जाता हैं और शापग्रस्त वसु जन्म लेते है। जिनका गंगा अपने जल में प्रवाहकर उद्धार करती हैं। अन्त में वसुओं के अष्टमांश से भीष्म का जन्म होता है।

१०० वें अध्याय में गंगा द्वारा अपने पुत्र देवव्रत को पाल-पोसकर एवं शिक्षित कर शान्तनु को सौंपने का वृतान्त है।

सम्भव पर्व के १२७ वें अध्याय में दुर्भावना प्रेरित दुर्योधन द्वारा विषपान कराकर अपने चचेरे भाई भीम को गंगा में फेंकने का उल्लेख मिलता हैं, जो पाताल लोक में जाकर आठ कुण्डों के दिव्य रस का पान करता है।

जातुगृह पर्व के १४८ अध्याय में लाक्षागृह से बच निकलने के बाद पाण्डवों के गंगा पार जाने का वृतान्त हैं।

अर्जुन वनवास पर्व के २१३ अध्याय में अर्जुन के गंगाद्वार (हरिद्वार) प्रवास का वर्णन है जहाँ नागकन्या उलुपी से उनका विवाह होता हैं।

महाभारत के अनुशासन पर्व के अध्याय २५ में गंगा तट वर्ती तीर्थो तथा संगमों का स्नान आदि का अद्वितीय वर्णन है यथा-

गंगाद्वारे कुशावर्ते विल्व के नील पर्वते।
तथा कनखले स्नात्वा धूतपाप्मा दिवं ब्रजेत्।।१३।।

पत्र भागीरथी गंगा पतते दिशमुन्तराम्।
महेश्वरस्य त्रिस्थाने यो नर स्तवभिषिच्यते।।१५।।

अनुशासन पर्व में २६वाँ अध्याय तो पूरा का पूरा गंगा महात्म्य के वर्णन का ही है जिसमें गंगा के महत्व का आलौकिक वर्णन किया जाता है जैसे -

ते देशास्ते जनपदास्तेऽऽश्रमास्ते च पर्वताः।
येषां भागीरथी गंगा मध्ये नैति सरिद्वरा।।२६।।

तपसा ब्रह्म चर्येण यज्ञैस्त्यागेन वा पुनः।
गति तां न लभेज्ज-र्तुगंगां संसेव्य पांलभेत्।।२७।।

अपहत्य तमस्तीव्रं यथा भात्युदये रविः।
तथा पहत्य पापमानं भाति गंगा जलोक्षितः।।३३।।

विसोमा इव शर्वर्यो विपुष्पास्तरवो यथा।
तद्वद् देशा दिशश्चैव हीना गंगाजलैः शिवैः।।३४।।

यथा सुराणममृतं पितृणां च यथा स्वधा।
सुधा यथा च नागानां तथा गंगाजलंनृणाम्।।४६।।

य इच्छेत् सफलं जन्म जीवतं श्रुतमेव च।
स पितृस्तर्पमेद् गांगमभिगम्य सुंरास्तथ।।६५।।

उस्त्रां पुष्टांमिषतींविश्व भोज्या,
गिरावतीं धारणीं भूधराणाम्।
शिष्टाश्रयाममृतां ब्रह्मकान्तां।
गंगां श्रयेदात्मवान् सिद्धिकामः।।६५।।

इतिहासमिमं पुण्यं श्रृणुयाद् यः पठेत वा।
गंगायाः स्तवंसयुक्तस मुच्येत् सर्वकल्विषैः।।१०६।।

इस प्रकार २६वें अध्याय में पूरी तरह से गंगा के महात्म्य को सर्वोच्य शिखर पर स्थापित कर दिया गया हैं। गंगा जल का स्पर्श एक हजार युगों पर एक पैर पर खड़े होकर तपस्या करने या एक सहस्त्र चान्द्रायण ब्रत करने या दस हजार युगों तक पेड़ से उल्टे लटककर तप करने या स्वर्ग में रह कर सम्पूर्ण भोगों से भी बढ़ कर लाभ देने वाला बताया गया हैं।

महाभारत में गंगावतरण[1] इन श्लोकों में चित्रात्मक रूप में वर्णित है।

ततः पपात गगनाद् गंगा हिमवतः सुता।
गन्धर्वोरगयक्षाश्च समाजग्मुर्दिद्दक्षवः।।८।।

समुद्धतमहावर्ता मीनग्राहसमाकुला।
तां दधार हरो राजन् गंगा गगनमेखलाम्।।९।।

ललाटदेशे पतितां मालां मुक्तामयीमिव।
सा बभूव विसर्पन्ती त्रिधा राजन् समुद्रगा।।१०।।

फेनपुंजाकुलजला हंसानामिव पंक्तयः।
क्वचिदाभोगकुटिला प्रस्खलन्ती क्वचित् क्वचित्।।११।।

सा फेनपटसंवीता मत्तेव प्रमदा ब्रजत्।
क्वचित्सा तोयमिनदैर्नदन्ती नादमुत्तमम्।।१२।।

---

१. महाभारत में पदे-पदे गंगावर्णन उपलब्ध होता हैं, परन्तु कहीं-कहीं गंगा के भौतिक रूप एवं माहात्म्य का भावभीना वर्णन मिलता है। प्रस्तुत सन्दर्भ महाभारत, वनपर्व के १०९ वें अध्याय का हैं, जहाँ महर्षि लोमश धर्मराज युधिष्ठिर को गंगावतरण का वर्णन बता रहे हैं।

एवं प्रकारान् सुबहून् कुर्बती गगनाच्चयुता।

पृथिवीतलमासाघ भगीरथमथावृवीत।।१३।।

दर्शयस्व महाराज! मार्ग केन बृजाम्यहम्।

त्वदर्थमवतीर्णास्मि पृथिवीं पृथिवीयते।।१४।।

उपर्युक्त सरस प्रासादिक पद्यों में गंगा से अलौकिक दिव्य स्वरुप का प्रस्तुतीकरण अत्यन्त हृदयावर्जक हैं। जिससे इसकी नैसर्गिक, पावनता प्रभावोत्पादकता, लोक कल्याणकारिता व्यक्त होती है।

महाभारत के निम्नलिखित गंगास्तव[1] में गंगा का स्वरुप एवं माहात्म्य इस प्रकार प्रतिपादित है।

वायूवीरिताभिः सुमनोहराभिर्द्रुताभिरत्यर्थसमुत्थिताभिः।

गंगोर्मिभिर्मानुमतीभिरिद्धाः सहस्त्ररश्मिप्रतिमाभवन्ति।।८१।।

पयस्विनीं घृतिनीमत्यदारां समृद्धिनीं बेगिनीं दुर्विगाह्याम्।

गंगां गत्वा यैः शरीरं विस्तष्टं गता धीरास्ते विवुधैः समत्वम्।।८२।

अन्धान् जडान् द्रव्यहीनाश्च गंगा यशस्विनी बृहती विश्वरुपा।

देवैः सेन्द्रैर्मुनिनिमिर्मानवैश्च निषविता सर्वकामैर्युनक्ति।।८३।।

उर्जावतीं महापुण्यां मधुमतीं त्रिवर्त्यगाम्।

त्रिलोकगोप्त्री ये गंगा संश्रितोस्तेदिवं गताः।।८४।।

---

१. **महाभारत**, अनुशासन पर्व का सम्पूर्ण २६ वाँ अध्याय गंगामाहात्म्य एवं गंगास्तव से सम्बद्ध है। यह सन्दर्भ युधिष्ठर-भीष्म-संवाद के रुप में हैं।

यो वत्स्यति द्रक्ष्यति वापि मर्त्यस्तस्मै प्रयच्छन्ति सुखानि देवाः।
तद्भाविताः स्पर्शनदर्शनेन इष्टां गति तस्य सुरा दिशन्ति।।८५।।
दक्षां पृश्निं वृहतीं विप्रकृष्टां शिवामृद्धां भगिनीं सुप्रसन्नाम्।
विभावरीं सर्वभूत प्रतिष्ठां गंगां गता ये त्रिदिवं गतास्ते।।८६।।

ख्यातिर्यस्याः रवं दिवं गां च नित्यं पुरा दिव्यो विदिशश्चावतये।
तस्या जलं सेव्य सरिद्वराया मर्त्याः सर्वे कृत कृतया भवन्ति।।८७।।

इयं गगेति नियतं प्रतिष्ठा गुप्तस्य रुकमस्य च गर्भयोषा।
प्रातस्त्रिवर्गा घृतवहा विपाप्मा गंगावतीर्णा वियतो विश्वतोमा।।८८।।

नारायणदक्षयात् पूर्वजाता विष्णोः पादाच्छिशुमारादध्रुवाच्च।
सोमात् सूर्यान्मेरुरुपाच्व विष्णोंः समागता शिवमूर्ध्नोहिताद्रिम्।।

सुतावनीध्रस्य हरस्य भार्या दिवो भुवश्चापि कृतानुरुपा।
भव्या पृथिव्यां भगिनी चापि राजन् गंगालोकानां पुण्यदा वै त्रयाणाम्।।८९।।

मधुस्रवा धृतधारा धृतार्विर्महोर्मिभिः शोभिता ब्राह्मणश्च।
दिवश्च्युता शिरसाप्ता शिवेन गंगा वनीध्रात्त्रिदिवस्य माता।।९०।।

योनिर्वरिष्ठा विरजा वितन्वी शयूयाचिरा गखिहा यशोदा।
विश्वावती चाकृतिरिष्टसिद्धा गंगोक्षितानां भुवनस्य पद्याः।।९१।।

क्षान्त्या मह्या गोपने धारणे च दीपत्या कृशानोस्त्तपनस्य चैव।

तुल्या गंगा सम्यता ब्राह्मणानां गुहस्य ब्रह्मण्यतया चि नित्यम्।। ६२।।

ऋषिष्टुतां-विष्णुपदी ''पुराणा'' सुपुण्यतोयां मनसापि लोके।
सर्वात्मनां जाह्नवी ये प्रपन्नास्ते ब्रह्मणः सदनं संप्रयाताः।।६३।।

लोकानवेक्ष्य जननीवपुत्रान् सर्वात्मना सर्वगुणोपपन्नाम्।
तत्स्थानकं ब्राह्ममभीप्समानैगंगा सदैवात्मशैरूपास्या।।६४।।

उस्तां पुष्टां मिषतीं विश्वभोज्यांगिरावतीं धारिणी भूधराणाम्।
शिष्टाश्रयाममृतां ब्रह्मकान्तां गंगां श्रयेदात्यवान् सिद्धिकामः।।६५।।

प्रसाद्य देवान् सविभून् समस्तान् भगीरथस्तपसोग्रेणगंगाम्।
गामानयत् तामभिगम्य शश्वत पुंसां भयंनेह चामुत्र विद्यात्।।६६।।

उदाहृतः सर्वथा ते गुणानां मयैकदेशः प्रसमीक्ष्य बुद्धया।
शक्तिर्न मे काचिदिहास्तिवक्तुं गुणान् सर्वान् परिमातुंतथैव।।६७।।

मेरोः समुद्रस्य च सर्वयत्नैः संख्योपलानामुदकस्य वापि।
शक्यं वक्तुं नेह गंगाजलानां गुणाख्यानं परिमातुं तथैव।।६८।।

तस्मादेतान् परया श्रद्धयोक्तान् गुणान् सर्वान् जाह्नवीयान् सदैव।
भवेद् वाचा मनसा कर्मणा च भक्त्या युक्तः श्रद्धया श्रद्धानः।।६९।।

लोकानिमांस्त्रीन्यशसा वितत्य सिद्धिं प्राप्त महतीं तां दुरापाम्।

गंगाकृतानचिरेणैव लोकान् यथेष्टिमिष्टान् विहरिष्यसित्वम्।।१००।।

तव मम च गुणैर्महानुभावा जुषतु मतिं सततं स्वधर्मयुक्तैः।
अभिमतजनवत्सला हि गंगा जगतियुनक्तिसुखैश्च भक्तिमन्तम्।।१०१।।

श्रुत्थेतिहासं भीष्मोक्तं गंगायाः स्तवसंप्रतम्।
युधिष्ठिरः परां प्रीतिमगच्छद् भातृभिःसह।।१०२।।

इतिहासमिमं पुण्यं शृणुयाद् यः पठेत वा।
गंगायाः स्तवसंयुक्तं स मुच्येत् सर्वकिल्विषैः।।१०३।।

उपर्युक्त पद्यों में वेदव्यास की भावपूर्ण भारती भागीरथी गंगा के गौरव, नैसर्गिक स्वरुप तथा अलौकिक प्रभाव एवं अनुपम माहात्म्य को व्यक्त करने में सर्वथा सफल हुई है। इस गंगा स्तवन में भागीरथी गंगा की लोक विश्रुत श्रेष्ठता और महत्ता स्वतः सिद्ध है।

समीक्षा-

अलंकृत आदिकाल रामायण में आदिकाल महर्षि वाल्मीकि ने बालकाण्ड के २३वें सर्ग के कई श्लोकों में पतित पावनी गंगा का वर्णन विश्वामित्र के साथ रामलक्ष्मण की मिथिलापुर यात्रा के सन्दर्भ में वर्णन किया जाता है। जिसमें इसकी उत्पत्ति कामास्वरुप एवं माहात्म्य का पौराणिक पृष्ठभूमि के आधार पर आदिकवि ने निरुपण किया हैं इसके अतिरिक्त इसी काण्ड के सर्ग ४४ में भागीरथ के प्रयास से गंगा का अवतरण तथा गंगा द्वारा सगर के ६० हजार पुत्रों के तर्पण का वृतान्त प्राप्त होता है। अनेक अविधानों से युक्त गंगा का अयोध्या काण्ड के सर्ग

५२ में रामवनगमन के समय गंगा पार करने का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया है।

वाल्मीकि रामायण का गंगोपाख्यान (बालकाण्ड अध्याय ३५ से ४४) तो लोक विश्रुत है ही, किन्तु इसके अतिरिक्त रामायण में गंगा वर्णन सम्बन्धी अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। जिनमें वनगमन के समय चित्रकूट यात्रा के लिये सन्नद्य श्रगंवेरपुर में श्री राम, सीता व लक्ष्मण का प्रथमबार गंगा दर्शन अत्यन्त जीवन्त एंव मार्मिक है।

पंचम वेद के रूप में प्रख्यात महाभारत में गंगा का प्रभावी वर्णन महर्षि वेदव्यास ने आरण्यक पर्व के अन्तर्गत ८५ से ८६ अध्यायों के बीच में अत्यन्त मार्मिक रूप से किया है। इसके अतिरिक्त वन पर्व के १०६ वे अध्याय में महर्षि लोमश धर्मराज युधिष्ठिर को गंगावतरण रोचक वर्णन प्रस्तुत करते है। जिसमें इसके अलौकिक दिव्य स्वरुप का अत्यन्त हृदयावर्जक प्रस्तुतिकरण हुआ है। इसमें गंगा की नैसर्गिक सुषमा के साथ पावनता प्रभावशालिता तथा लोक- कल्याणकारिता व्यक्त होती हैं।

इसी प्रकार अनुशासन पर्व के २६वें अध्याय के अन्तर्गत युधिष्ठिर भीष्म संवाद के रूप में गंगास्तव के माध्यम से इसका अलौकिक महात्म्य व्यक्त हुआ है।

समासतः पूर्ववर्ती पौराणिक साहित्य की प्रतिच्छाया में रामायण और महाभारत दोनों महत्वपूर्ण ग्रन्थों में गंगा का गौरव स्वरुप, प्रभाव एवं माहात्म्य वर्णित हुआ हैं, जिसकी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक महत्ता निर्विवाद रूप से सिद्ध होती है।

चतुर्थ

अध्याय

संस्कृत महाकाव्यों में गंगा वर्णन

चतुर्थ अध्याय

संस्कृत महाकाव्यों में गंगा वर्णन -

रामायण एवं महाभारत के पश्चात् परवर्ती संस्कृत महाकाव्यों में गंगा सम्बन्धी अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं जिनमें गंगा को विभिन्न नामों से अधोलिखित करते हुए इसके स्वरुप, गौरव एवं महत्व को सरस रुप से प्रतिपादित किया गया है। इन संस्कृत महाकाव्यों में कविकुलगुरु कालिदास के कुमारसम्भव तथा रघुवंश के अतिरिक्त भट्टिकाव्य, किरातार्जुनीयम्, हरविजय, शिशुपालबध ,गंगावतरण आदि अनेक महाकाव्य उल्लेखनीय हैं ।

कालिदास विरचित रधुवंशम् तथा कुमारसभवम्

महाकवि कालिदास अपनी उत्कृष्ट महाकाव्य रचना से न केवल संस्कृत साहित्य में अपितु विश्व साहित्य में अग्रगण्य है। उन्होंने अपनी कृतियों में तत्कालीन राष्ट्र के जिस समृद्धि, शांति एवं सुव्यवस्थापूर्ण समाज का चित्रण किया, वह वस्तुतः इस देश की महती संस्कृति का परिचायक है।

विद्वानों ने महाकवि के जीवन काल को बहुत विवादग्रस्त बना दिया है, किन्तु सामान्य रुप से 'मालविकाग्निमित्रम्' नाटक के नायक अग्निमित्र शुंग की स्थिति काल के आधार पर महाकवि कालिदास के भी काल की आरम्भिक सीमां १५० ई० पू० तथा अन्तिम सीमा महाकवि बाण (हर्षवर्धन के समकालीन ६०६ ई०- ६४८ ई०) 'हर्षचरित' की प्रस्तावना एवं पुल्केशी द्वितीय (६३४ई०) के ऐहोल ग्रामस्थ शिलालेख के आधार पर सातवी शताब्दी ई० के मध्य तक निर्धारित किया जा सकता है।

छठी शताब्दी ई० कालिदास के जीवन काल मत के प्रतिपादकों में डा० हांर्नले, मैक्समूलर, ओक, हरप्रसाद शास्त्री आदि विद्यमान हैं,

अनेक कवियों की कृतियों के आधार पर भी उसका गुप्तकालीन होना सिद्ध होता है-

अन्ततः कवि का जीवनकाल चतुर्थशती ई० का उत्तरार्द्ध, पंचम का पूर्वार्द्ध मानना उचित है।

कालिदास का कृतित्व-

कालिदास की रचनाओं में सात उत्कृष्ट कृतियां प्रमुख हैं-

महाकाव्य-

१. कुमार सम्भव

२. रघुवंशम्

गीति काव्य-

१. मेघदूतम्

२. ऋतुसंहार

नाटक-

१. अभिज्ञान शाकुन्तलम्

२. मालविकाग्निमित्रम्

३. विक्रमोर्वशीम्

संस्कृत काव्यशैली का सुन्दरतम काव्य स्वरुप कालिदास की कृतियों में निखार को प्राप्त हुआ है। काव्य के अपेक्षित सभी गुणों-माधुर्य का संनिवेश, प्रसाद की सि ाता, पदों की सरस शैया, अर्थ का सौष्ठव, अलंकारों का मंजुल प्रयोग का उनकी कृतियों में समावेश होने के कारण उन्हें काव्य प्रेमी 'कवि कुलगुरु' के रुप में हृदय का अधिराज मान बैठे हैं। कालिदास को इस सर्वांगीण कमनीयता का कारण, साथ ही कला का श्रृंगार उनकी वैदर्भी रीति हैं ।

रघुवंश-

इसके द्वितीय सर्ग में अयोध्या नरेश दिलीप अपने कुलगुरु वशिष्ठ के निर्देशानुसार नन्दिनी को चराने गंगा के उद्गम क्षेत्रीय हिमालय प्रदेश में गये थे । नन्दिनी चरते-चरते एक दिन राजा दिलीप की भक्ति की परीक्षा लेने के लिए गंगा के प्रपात के ..स एक गह्वर (कन्दरा) में प्रविष्ट हो गयी जिसका उल्लेख इस प्रकार हैं-

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः ।
गंगाप्रपातान्तविरुठशष्पं गौरगुरोर्गह्वरमाविवेश ।।

रघुवंशम् २/२६

उपर्युक्त पद्य से प्रतीत होता है कि पर्वतीय प्रदेश गंगा गढ़वाल हिमालय में प्रपातीरुप में प्रवाहित होती है जिससे उसके निर्झर के समीपस्थ कन्दरा में उगी घास को चराने के लिए नन्दिनी का जाना स्वाभाविक हैं। आज भी गंगा तटीय प्रपाती प्रवाह के पास पहाड़ी गायें इस प्रकार चरती हुयी देखी जा सकती हैं।

रघु दिग्विजय के सन्दर्भ में कालिदास ने गंगा को पार करने के लिए नौकाओं का उल्लेख करते हुए इसके तेज चौड़े प्रवाह की अभिव्यंजना इस प्रकार की है-

वंगानुत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान् ।
निचखान जयस्तम्भान् गंगास्त्रोतोन्तरेषु सः ।।

रघुवंशम् ४/३६

गंगा तटवर्ती उगे हुए सछिद्र वांसों के वनों को कवि कुलगुरु कालिदास ने स्वाभाविक रुप से चित्रित किया है, जिनसे होकर गंगा की ओर से जलकण मिश्रित शीतल पवन प्रवाहित होता हुआ मर्मर ध्वनि करता था। इस शीतल सशीकर समीर का सेवन रघु के सैनिक सानन्द करते थे। इस तथ्य का उल्लेख अधोलिखित श्लोक में इस प्रकार किया गया है-

भूर्जेषु मर्मरीभूताः कीचकध्वनिहेतवः ।
गंगासीकरिणो मार्गे मरुतस्तं सिषेविरे ।।

रघुवंशम् ४/७३

इन्दुमती स्वयंवर के सन्दर्भ में विभिन्न राज्यों के राजागण कुन्डिनपुर में स्वयंवर में भाग लेने के लिए पहुँचे, जहाँ सूर्यसेन नरेश की प्रशस्ति में सुनन्दा इन्दुमती से मथुरा नरेश के अन्तःपुर की रानियों के शरीर का अंगराग और चन्दन यमुना जल में घुल जाने पर श्वेत जलधारा प्रयाग के गंगा संगम का आभास कराती थी जिसका चित्रण इस प्रकार है-

यस्यावरोधस्तवन चन्दनानां प्रक्षालनाद् वारिविहारकाले ।
कलिन्दकन्या मधुरां गतापि गंगोर्मिसंसक्तनजलेव भाति ।।

रघुवंशम् ६/४८

इन्दुमती स्वयंवर से भाग लेकर लौटते हुए राजा अज की सेनाओं को प्रतिपक्षी राजाओं की सेना ने सामने इस प्रकार रोकने का निष्फल प्रयास किया, जिसप्रकार भागीरथी के प्रवाह को शोण और ज्योतिरथा मिलकर रोकने का प्रयास करती है। इस दृश्य का महाकवि कालिदास ने सप्तमांक में इस प्रकार चित्रण किया है-

तस्याः स रक्षार्थमनल्पयोधमादिश्य पित्र्यं सचिवं कुमारः ।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिववाहिनीं तां ज्योतिरथा[१] शोण इवोत्तरंग ।।

रघुवंशम् ७/३६

महाकवि कालिदास ने पतितपावनी गंगा के सहायक पुण्यसलिला सरयू का भी संगम रुप में उल्लेख किया है, जहाँ संगम तीर्थ में मोक्ष प्राप्त करने के लिए महाराज अज ने अपना शरीर छोड़ा था । इस तथ्य को अधोलिखित पद्य में निरुपित किया गया है-

तीर्थे तोयव्यतिकरभवे जह्नुकन्यासरय्वो -
र्देहव्यागादमरगणनालेख्येमासाद्य सद्यः ।
पूर्वकाराधिकतररुचा संगतः कान्तमासौ,
लीलागारेष्वरमत पुनर्नन्दनाभ्यन्तरेषु ।।

रघुवंशम् ८/९५

उपर्युक्त छन्द में वर्णित गंगा-सरयू संगम का प्राचीनकाल में महत्व व्यंजित हो रहा है। प्रायः ऐसे तीर्थ संगमों में पावन तिथियों पर मेले और स्नान पर्व आयोजित हुआ करते थे ।

इसीप्रकार रघुवंश में गंगा का जाह्नवी नाम से भी कालिदास ने उल्लेख किया है जो पूर्वी समुद्र में गिरती थी -

बहुधाप्यागमैर्भिन्नाः पन्थानः सिद्धहेतवः ।
त्वय्येव निपतन्त्योघा जाह्नवीया इवार्णवे ।।

रघुवंशम् १०/२६

---

१. ज्योतिरथा - नदी मध्यप्रदेशस्य रीवाक्षेत्रे शोणगामिनी सरित् ।
भागीरथीमिति तु मल्लिनाथहेमाद्रिभट्टौ । प्राचीन टीकाकृत्सुपाण्डुग्रन्थेषु पुनर्ज्योतीरथेत्येव पाठः । एष एव चोचितः, शोणस्याजस्थनीयत्वात् सरित्कर्तृकेऽभियोगे कर्तृत्वेनान्वयस्यान्यथाऽसिद्धेः। भागीरथीपाठे पुनरभियोगे शोणकर्तृकत्वमेव प्रसिद्ध्येत्, शोणस्यैव भागीरथीगामित्वस्य दृश्यमानत्वात् ।।

सामान्यतः शरद और ग्रीष्म काल में गंगा का प्रथुल प्रवाह क्षीण हो जाता था जैसे कोई गर्भणी स्त्री प्रसव के पश्चात् कृशोदरा दिखाई देती है। शरदऋतु में जल के क्षीण हो जाने पर बालू मुक्त गंगा का ऐसा ही कृश शरीर अधोलिखित श्लोक में रुपायित किया गया है-

शय्यागतेन रामेण माता शातोदरी बभौ ।
सैकताम्भोजबलिना जाह्नवीव शरत्कृशा ।।

रघुवंशम् १०/६६

प्रयाग स्थित गंगा-यमुना का संगम सुप्रसिद्ध तीर्थ के रुप में विश्व भर में विख्यात है। लंका विजय के पश्चात् पुष्पक विमान से लंका से अयोध्या प्रस्थान करते समय सीता को गंगा-यमुना की छटा दिखलाते हुए श्रीराम सीता से संगम शोभा इस प्रकार वर्णित करते हैं-

महाकवि ने गंगा को मुक्ता तथा श्वेत कमलों एंव यमुना को इन्द्रनीलमणि एवं इन्द्रीवर उपमित किया है। यथा-

क्वचित् प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैमुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा ।
अन्यत्र माला सितपंकजानामिन्दीवरैरुत्खचितान्तरेव ।।

रघुवंशम् १३/५४

मानसोन्मुख राजहंस पंक्ति जैसी गंगा और कहीं चन्दन युक्त कालागुरु जैसी संगम छटा दृष्टिगत होती है-

क्वचित खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसगवितीव पंड्क्तिः ।
अन्यत्र कालागुरुदत्तपत्रा भक्तिर्भुवश्चन्दनमकल्पितेव ।।

रघुवंशम् १३/५५

कहीं-कहीं चन्द्र प्रभा नैश अन्धकार से मानों विच्छिन्न भी गई हो और कहीं शुभ्र शरत्कालीन मेघ के अन्तराल में मानों नील आकाश जैसी गंगा यमुना से मिलकर शोभित हो रही हो। यथा-

क्वचित् प्रभा चान्द्रमसी तमोभिरछायाविलीनैः शबलीकृतेव ।
अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रलेखा रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभः प्रदेशा ।।

रघुवंशम् १३/५६

क्वचिच्चं कृष्णोरगभूषणेव भस्मांगरागा तुनरीश्वरस्य ।
पश्यानवद्यांगि विभाति गंगा भिन्नप्रवाहा यमुनातरंगै ।।

रघुवंशम् १३/५७

समुद्रपत्न्योर्जलसन्तिपाते, पूतात्मनामन्न किलाभिषेकात् ।
तत्वाबोधेन विनापि भूयः, तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः ।।

रघुवंशम् १३/५८

अर्थात् समुद्र की पत्नियों जैसे गंगा यमुना में नहाने पर शरीर धारियों को बिना तत्वज्ञान के ही मानो मोक्ष प्राप्त हो जाता है अर्थात् उनका शरीर बन्धन स्वतः समाप्त हो जाता है।महाकवि ने हिमालय से निकली हुयी गंगा और सरयू नदी के संगम स्थल का १४ वे सर्ग में भी पुनः स्वाभाविक वर्णन इस प्रकार किया है-

आनन्दजः शोकजमत्रु वाष्पस्तयोरशीतं शिशिरो विभेद।
गंगा सरम्वोर्जलमुष्णतप्तं हिमाद्रिनिस्यन्द इवावतीर्णः।।

रधुवंशम्. १४/३

रधुवंश के १४ में सर्ग में भगवान श्री राम के निर्देशनुसार लक्ष्मण गर्भवती सीता को रथ पर बैठाकर बाल्मीकि आश्रम के पास गंगा के तट पर छोड़ने गये तो भगवती भागीरथी ने अपने तरंग रूपी हाथों से लक्ष्मण को इस कठोर कर्म से विरत होने का मानो स्पष्ट संदेश दिया था। इस तथ्य का काव्यात्मक अंकन कविकुलगुरू ने इस श्लोक में इस प्रकार किया है-

गुरोर्नियोगाद् वनितां वनान्ते साध्वीं सुमित्रातनयो विहास्यन् ।
अवार्यतेवोत्थित वीचिहस्तैजह्निोर्दुहित्रा स्थितया पुरस्तात् ।।

रधुवंशम् १४/५१

सीता को गंगापार छोड़ने के लिये लक्ष्मण ने नाव का आश्रम लेने के लिये निषाद् को निर्देशित किया। निषाद् ने उनकी आज्ञानुसार सीता को उसीप्रकार गंगापार करा दिया जैसे सत्यप्रतिज्ञ लक्ष्मण ने अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण किया था। सीता को रथ से गंगा की बालू पर उतारकर निषाद् द्वारा लायी गयी नौका पर उन्हें सहारा देते हुये चढ़ाकर गंगापार कराया-

रथात् स यन्त्रा निगृहीतवाहात् तां भ्रातृजायां पुलिनेऽवतार्य।
गंगा निषादाहृतनौविशेषस्ततार सन्धामिव सत्यसन्धः ।।

रघुवंशम् १४/५२

इन्दुमती स्वयंवर के सन्दर्भ में महाराज अज को पति के रूप में इन्दुमती ने उसीप्रकार वरण कर प्राप्त किया,जिसप्रकार चांदनी चन्द्रमा को तथा जह्नुकन्या (गंगा) सागर को प्राप्त करती है। इसका काव्यात्मक उल्लेख अधोलिखित श्लोक में इस प्रकार प्राप्त होता है।

शशिनमुपगतेयं कौमुदी मेधमुक्तं,
जलनिधिमनुरूपं जह्नुकन्याऽवतीर्णा।
इति समगुणयोगप्रीतमस्तत्र पौराः
श्रवणकटु नृपाणामेकवाक्यं विबब्रुः ।।

रघुवंशम् ६/८५

अयोध्या को उजड़ीहुयी अवलोकित कर पुनः वसाने के लिये कुशावती से गज सेना सहित महाराज कुश उत्तर की ओर गंगापार करने के लिये हाथियों का पुल बनाकर अयोध्या की ओर बढ़े थे। इस तथ्य का सरस वर्णन निम्नलिखित श्लोक में इसप्रकार किया गया है-

तीर्थे तदीये गजसेतुबन्धात् प्रतीपगामुत्तरतोऽस्य गंगाम् ।
उनयत्नवालव्यजनीवभूवर्हसा नभोलङंघनलोलपक्षाः ।।

रघुवंशम् १६/३३

कुमारसम्भवम्- कालिदास कृत कुमारसम्भव में भी अनेक स्थलों पर गंगा का नैसर्गिक चित्रांकन प्राप्त होता है,जिसमें इसके हिमालय पर्वत प्रदेशीय कृश स्वरूप का स्वाभाविक वर्णन अधोलिखित छन्दों में इस प्रकार दृष्टिगत होता है-

यह हिमालय की दिव्य औषधियॉ गंगा तटीय गिरि श्रृंखलाओं पर प्रतिभाषित हो रही है तथा शरदकालीन हंसमालाये भी गंगा प्रवास से निकलकर उन औषधियों के साथ चमक रही हैं। इसकी ओर महाकवि द्वारा ध्यानाकर्षण इसप्रकार इस पद्य में किया गया है-

तां हसंमालाः शरदीव गंगा महौषधिं नक्तमिवात्मभासः ।
स्थिरोपदेशामुपदेशकाले प्रपेदिरे प्राक्तनजन्मविद्याः ।।

(कुमार. १/३०)

गंगा तटवर्ती पर्वतीय वनस्पति का भी कालिदास ने यथास्थान उल्लेख किया है जिनमें गंगा की तीव्र जलधारा से तटवर्ती देवदारू वृक्ष अभिसिंचित हो जाया करते थे। यथा-

स कृत्तिवासास्तपसे यतात्मा गंगाप्रवाहोक्षितदेवदारू।
प्रस्थं हिमाद्रेर्मृगनाभिगन्धि किंचित्क्वणत्किन्नरमध्युवास ।।

(कुमार. १/५४)

गंगोत्री के समीपरथ हिमालय पर्वत पर गंगा की स्त्रोत स्वरूपा विभिन्न धारायें तटवर्ती महौषधियों से प्रतिभाषित होती रहती थी। कुमारसम्भव में कालिदास ने ऐसी उद्गम क्षेत्रीय गंगा की धाराओं का उल्लेख अधोलिखित श्लोक में इसप्रकार किया है-

गंगास्त्रोत- परिक्षिप्तं व प्रान्तर्ज्वीलतौषधि।
बृहन्मणि शिलासालं गुप्तावपि मनोहरम् ।।

(कुमार. ६/३८)

हिमालय की उच्चता के साथ गंगा का माहात्म्य किसी प्रकार कम नहीं है। वस्तुतः ब्रह्मा के कमण्डल से तथा विष्णु के चरण से निकली गंगा की पावनता त्रैलोक्य विख्यात हैं। इसकी प्रशंसा सर्वथा समीचीन ही है। गंगा की महत्ता तथा पवित्रता

प्रदिपादक अधोलिखित पद्य दृष्टव्य है-

यथैव श्लाध्यते गंगा पादेन परमेष्ठिनः ।
प्रभवेण द्वितीयेन तथैवोच्छिरसा त्वया ।।

(कुमार. ६/७०)

भारवि विरचित किरातार्जुनीयम्

एहोल के ६३४ ई० के शिला लेख में अंकित चालुक्यवंशीय राजा पुलकेशी द्वितीय की प्रशस्ति में महाकवि भारवि का स्पष्ट उल्लेख हुआ है,जिससे ६३४ ई० से इनकी पूर्ववर्तिता निश्चित हैं। अवन्तिसुन्दरी कथा के आधार पर ये दक्षिण भारत के निवासी तथा पुलकेशी द्वितीय के अनुज विष्णु वर्धन की सभा के पण्डित थे। इनको पाश्चात्य विद्वानों ने A Master of cultivated expression' कहा है।

किरातार्जुनीयम् -

भारवि ने भी अपने काव्य किरातार्जुनीयम् में भी मां गंगा का मनोहरी चित्रण किया है।

अधोलिखित पद्य में बालू युक्त गंगा की जलधारा, जिसमें जहां तहां नेत्रों सी चमकती मछलियां इसप्रकार शोभित है-

स ततार सैकतवतोरभितः शफरीपरिस्फुरितचारूदृशः ।
ललिताः सखीरिव बृहज्जधनाः सुरनिम्नगामुपयतीः सरितः ।।

किरातार्जुनीयम् पष्ठ सर्ग- १६

गंगा का अद्भुत देवत्व एवं अलौकिक वैशिष्ट्य महाकवि भारवि द्वारा सप्तम् सर्ग के अर्न्तगत इस प्रकार इस श्लोक में निरूपित किया गया है-

अत्यंर्थ दुरूपसदादुपेत्य दुरं पर्यन्तादहिममयूखमण्डलस्य ।
आशानामुपरिचिताभिवैकवेणी रम्योर्मि त्रिदशनदी मयुर्बलानि।।

किरातार्जुनीयम् सप्तम सर्ग ७

शरद काल में गंगा जल की शोभा कहीं कहीं तटवर्ती कमलों एवं निर्मलजल की आभा से किसप्रकार निखर उठती है। कवि के शब्दों में इसप्रकार सालंकृत

जाह्नवी नाम से गंगा वर्णित है-

श्रिया हसद्भिः कमलानि सस्मितैरलंकृताम्बुः प्रतिमागतैर्मुखैः ।
कृतानुकूल्या सुरराजयोषितां प्रसादसाफल्यमवाप जाह्नवी ।।

किरातार्जुनीयम् अष्ट्म सर्ग ४४

गंगाजल तरंगों में कहीं चन्दन सी धवलता,तो कहीं मुक्ता मणियोंसी विमलता और स्वच्छता इसप्रकार दृष्टिगत होती हैं कि स्वर्ग की अप्सरायें भी गंगा छटा से आकृष्ट हो जाती है। यथा-

संक्रान्तचन्दनसाहितवर्णभेदं,
विच्छिन्नभूषणमणि प्रकरांशु चित्रम् ।
बद्धोर्मि नाकवनितापरिभुक्तमुक्तं
सिन्धोर्बभार सलिलं शयनीयलक्ष्मीम् ।।

किरातार्जुनीयम् अष्टम सर्ग ५७

कालिदास के रघुवंश से अनुप्राणित एवं प्रभावित भारवि ने गंगा-यमुना संगम की उद्‌भावना नवम् सर्ग के इस पद्य में इसप्रकार प्रस्तुत की है उत्प्रेक्षा का उत्कर्ष दृष्टव्य है-

नीलनीरजनिभे हिमगौरं शैलरूद्धवपुषः सितरश्मे।
खे राज निपतत्करजालं वारिधेः पयसि गांगमिवाम्भाः ।।

किरातार्जुनीयम् नवम् सर्ग १६

गंगा को सुरसरिता नाम से व्यवहृत करते हुये कवि ने हविषान्नयुक्त शिखाओं सी इसकी पावनता प्रस्तुत पद्य में इस प्रकार प्रतिपादित की है-

सुरसरिति पर तपोऽधिगच्छन्विधृतपिशगंबृहज्जटाकलापः ।
हविरिव विततः शिखासमूहैः समभिलषन्नुपवेदि जातवेदाः ।।

किरातार्जुनीयम् दशम सर्ग १२

गंगा कछार के समीप कतिपय किरातों के आने का तथा इसके समीप अग्नि गुल्मलताओं के प्रतिविम्व से शीतल स्वच्छ जल का सेवन करने का द्वादश सर्ग में

इसप्रकार उल्लेख किया गया है-

कच्छान्ते सुरसरितो मिधाय सेनामन्वीतः स कतिपयैः किरातवर्यैः ।
प्रच्छन्नस्तरूगहनैः सगुल्यजालैर्लक्ष्मीवाननुपदमस्य संप्रतस्थे।।

किरातार्जुनीयम् द्वादश सर्ग ५४

माघ विरचित शिशुपाल वध

जीवन काल-

दत्तक सर्वाश्रय के पुत्र तथा सुप्रभदेव के पौत्र 'शिशुपालवध' नामक महाकाव्य के रचनाकार माघ का आविभर्वि सातवीं शर्ती के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इनके सम्बन्ध में प्रसिद्ध है-

" तावत्भा भारवेर्भाति यावत् माघस्य नोदयः ।"

रचना

वस्तुतः माघ ने भारविकृति 'किरातार्जुनीय' के आदर्श रूप में समक्ष रखकर उसके अतिक्रमण करने के प्रयास संस्कृत साहित्य में ख्यातिलब्ध १६५० श्लोकों तथा २० सर्गों वाले महाकाव्य की रचना की। जिससे उन्हें 'माघे सन्ति त्रयो गुणा' की जनप्रचलित प्रशंसोक्ति प्राप्त हुई । इसमें कृष्ण द्वारा शिशुपालवध के तथा शिशुपाल के राज्य के अत्याचारों का मनोहारी वर्णन है-

काव्यशैली-

माघ का सम्पूर्ण काव्य प्रौढ़ एवं उदात्त शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। 'शिशुपालवध' का प्रत्येक सर्ग वर्णन सौन्दर्य,भाव-सौष्ठव या विचार गम्भीर्य की दृष्टि से अद्वितीय है। अनुप्रास की चारूता के साथ ही माघ पदलालित्य स्मरणीय है-

मधुरया मधुबोधितमाधवी मधुसमृद्धिसमेधितमेधया ।
मधुकरांगनया मुहुरुन्मदध्वनिनिभृता निभृताक्षरमुज्जगे ।। ६/२०।।

उनका पदों का ललित विन्यास सर्वथा प्रशंसनीय है- धनपाल की यह उक्ति सार्थक ही है-

माघेन विघ्नितोत्साहा नोत्सहन्ते पदक्रमे ।
स्मरन्तो भारवेरेव कपयः रुपयः यथा ।।

शिशुपाल वध-

महाकवि माघ ने गंगा गौरव को पूर्णतयः हृदयंगम करते हुए महानदी के रुप में गंगा को निरुपित किया है, जिसके सहारे अनेक पर्वतीय सरितायें इसमें मिलकर समुद्र तक पहुँच पाती है-

वृहत्सहायः कार्यान्तिं क्षोदीयानपिगच्छति ।
सम्भूयाम्भोधिनिम्भेति महानद्या नमापगा ।।

शिशु० २/१००

महाकवि ने गंगा को समस्त पादकों का निवारण करने वाली पावन पतित पावनी सिद्ध सिन्धु के रुप में निरुपित किया है। इस दृष्टि से निम्नलिखित श्लोक में गंगा का यह स्वरुप दर्शनीय है-

मृणाल सूत्रऽमलन्तरेण स्थितश्चलच्चामरयोर्द्वयं सः शिशुः ।
भेजेऽमितः पातुकसिद्ध सिन्धोरभूतपूर्वां रुचमन्नुराशेः ।।

शिशु० ३/३

गंगाजल की उज्जवलता तथा उत्तुंग हिमालय श्रृंगों से मानो आकाश से प्रवाहित होती हुई इस दिव्य नदी को आकाश गंगा के रुप में ग्रहण करते हुए इसके नैसर्गिक स्वरुप का चित्रण अधोलिखित श्लोक में इसप्रकार किया है-

उभौ यदि व्योम्नि पृथक् प्रवाहावाकाशगंगा पयसः पतेताम् ।
तेनोपमीयेत तमाल नीलमायुक्तमुक्तालतमस्य वक्षः ।।

शिशु० ३/८

महाकवि माघ ने पारम्परिक रुप से त्रिपथगा नाम से प्रसिद्ध गंगा को त्रिस्रोतस अविधान से तृतीय सर्ग में इस प्रकार उल्लिखित किया है। जिसमें इसकी मंदाकिनी, अलकनन्दा और भागीरथी तीनों स्रोत धाराओं का समाहार हो जाता है। यथा-

मुक्तामयं सारसनावलम्नि भाति स्म दायाऽऽप्रपदीनमस्य ।
अंगुष्ठनिष्ठ्यूतमिवोर्ध्वमुच्चैस्त्रिस्त्रोतसः सन्ततधारममा ।।

शिशु० ३/१०

महाकवि माघ ने तृतीय सर्ग के अन्तर्गत गंगा की सुप्रसिद्ध सहायक सरिता यमुना का भी उल्लेख किया है जिसमें इसके पृथुल प्रवाह की मार्मिक व्यंजना हुई है। गंगा की सहायक यमुना का नैसर्गिक स्वरुप निम्नलिखित श्लोक में दृष्टव्य है-

चक्रेण रेजे यमुना जलौधः स्फुरन्महावर्त्त इवैकनाहुः ।

शिशु० ३/१७

कविकुल गुरु कालिदास के समान माघ ने भी प्रयागस्थ पावन तीर्थस्थल के रुप में नैसर्गिक गंगा के साथ यमुना संगम का भी पुण्य स्मरण किया है। इस दृष्टि से अधोलिखित श्लोक का काव्यात्मक सौन्दर्य दृष्टव्य है जिसमें गंगा यमुना संगम की मार्मिक अभिव्यंजना महाकवि के द्वारा इसप्रकार हुई है-

एकत्र स्फटिकतटांशु भिन्ननीरा नीलाश्मद्युतिमिदुराम्भसोऽपरत्र ।

कालिन्दी जल जनिताश्रियः श्रयन्ते वैदग्धीमिह सरितः सुरापगायाः ।।

शिशु० ४/२६

विरचित भट्टि -

'भट्टिकाव्य' या 'रावणवध' के कर्ता भट्टि का साहित्यक जीवन राजा श्रीधर सेन के राज्यपाल में सौराष्ट्र की वलभी नगरी में व्यतीत हुआ। श्री धर सेन द्वितीय के ६१० ई० के शिलालेख में भट्टि नामक विद्वान को कुछ भूमिदान करने का उल्लेख है। अतः भट्टि का जीवनकाल छठी शती ई० उत्तरार्द्ध और सातवी शती का पूर्वार्द्ध सिद्ध होता है। (दृष्टव्य संस्कृत साहित्य का इतिहास, डा० कैलाश नाथ द्विवेदी, जयपुर २००५ पृ० ४७)

'भट्टिकाव्य' रामायण की कथा से सम्बन्धित १६२४ श्लोकों तथा २२ सर्गों में 'शास्त्र-काव्य' के रुप में व्याकरण के जटिल नियमों के उदाहरण प्रस्तुत करता है। भट्टि ने इस काव्य में शब्दालंकार तथा अलंकार दोनों का पर्याप्त प्रयोग किया है।

सुन्दर यमकावली का उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

न गजा नगजा दयितादयिता विगतं ललितं ललितम् ।

प्रमदा प्रमदामहता महताभरणं समयात् समयात् ।।

कतिपय आलोचकों ने भट्टिकाव्य पर कृत्रिमता एवं आडम्बर की अधिकता का

दोषारोपण किया है, किन्तु २२ सर्गों के विपुल महाकाव्य में रोचकता , मधुरता उवं काव्योचित सरसता का अभाव दृष्टिगत नहीं होता है। भाषा प्रसाद एवं प्रांजलता पूर्ण है। प्रस्तुत है एकावली अलंकार युक्त उदाहरण -

न तज्जलं यन्न सुचारुपंकजम् न पंकज तपवर्लनषट्पदम् ।

न षट्पदोऽसो न जुगुंज यः कलं नगुञ्जितं तन्नजहार यन्मनः ।।

भट्टि २/१६

भट्टिकाव्य में गंगावर्णनम

इस महाकाव्य के अनेक स्थलों में गंगा का काव्यात्मक सरस वर्णन प्राप्त होता है। यथा-गंगातट तक राम, सीता एवं लक्ष्मण को पहुँचाकर तथा स्वयं को भी गंगास्नान से पवित्र बनाकर सुमंत्र अयोध्या लौट आये-

सूतो पि गंगासलिलैः पवित्वा

सहाश्वमात्मानमनत्पमन्युः ।

ससीतयो राघवयोरधीयन्

श्वसन् कदुष्णं पुरमाविवेश ।।३-१८।।

रावणवध के अनन्तर राम हनुमान को प्रातः अयोध्या जाने का निर्देश देते हुए मार्ग बताते हैं-

ततः परं भरद्वाजो भवता दर्शिप्तो मुनिः ।

दृष्टारश्च जनाः पुण्या यामुनाम्बुक्षतांहसः ।।२२-१०।।

स्यन्त्वा स्वन्त्वा दिवः शम्भोर्मूर्ध्नि स्कन्त्वा भुवं मताम् ।

गाहितासे थ पुण्यस्य गंगां मूर्तिमिव द्रुताम् ।।२२-२१।।

राम अयोध्या लौटते हुए स्वयं भी सीता को गंगा-दर्शन कराते हैं-

ऐते ते मुनिजनमण्डिता दिगन्ताः

शैलो यं लुलितवनः स चित्रकूटः ।

गंगेयं सुतनु! विशालतीररम्या

मैथिल्या रघुतनयो दिशन्ननन्द ।।२२-२६।।

रत्नाकर विरजित हरविजय-

कश्मीरी कवि 'रत्नाकर' अमृतभानु के पुत्र थे जो कश्मीर नरेश चिप्पट जयापीड़ (७७६-८१३ ई०) के आश्रित राजकवि थे। 'हरविजय' इनका ४३२० श्लोकों एवं ५० सर्गों का ब्रहत्काय महाकाव्य है, जिसमें अन्धकासुर का शिव द्वारा वध करने की कथा वर्णित है। 'हरविजय' में सर्वत्र शैवदर्शन, नीतिशास्त्र, कामसूत्र तथा इतिहास पुराण आदि का सम्यक् ज्ञान परिलक्षित होता है।

'हरविजय' में अनेक स्थलों को गंगा के पर्वतीय क्षेत्र से सम्बन्धित हरिद्वार, कनखल गंगोत्री प्रभृति तीर्थस्थलों का उल्लेख है तथा अनेक श्लोकों में हर के मस्तक से निकली पतित पावनी गंगा स्वरुप सरस रुप में वर्णित किया गया है। गंगा सम्बन्धी ये वर्णन अनेक पूर्ववर्ती पुराणों के वर्णनों से सामान्यतया मिलते-जुलते हैं। शिवपुराण की अनुच्छाया अधिकांश इन वर्णनों में दृष्टिगत होती है-

नीलकण्ठ दीक्षित विरचित गंगावतरणं -

इस महाकाव्य के रचयिता महाकवि नीलकण्ठ दीक्षित हैं। इनका जन्म तंजौर में १७वीं शती ई० में हुआ था । ये मदुरा के राजा तिरुमल नामक के १७वीं शताब्दी उत्तरार्द्ध में सभा पण्डित थे जैसा कि तत्कालीन स्थानीय इतिहास ग्रन्थों से ये प्रमाणित है (दृष्टव्य **History of Nayaka's of Madura, R.S. Ayyar, Page 109)** तंजौर के सुप्रसिद्ध दाक्षणार्थ ब्राह्मणों के भारद्वाज गोत्र में इनका जन्म हुआ था । ये सुप्रसिद्ध विद्वान अप्पय दीक्षित के भ्राता के पौत्र थे जिसका आभास गंगावतरण के प्रथम सर्ग से मिलता है।

रचनायें-

१. शिवलीलार्णवम् (२२ सर्गों का महाकाव्य), २. मुकुन्दविलास(३१

पूर्ण महाकाव्य) ३. चण्डी रहस्यम् (लघुस्त्रोतकाव्य), ४. रामायणसारसंग्रह, ५. रघुवीर स्तव,६. शिवोत्कर्षमंजरी (५२ पद्यों का काव्य),७. आनन्द सागर स्तव (१०८ पद्यों का काव्य), ८.अन्यापदेयशतक, ६. सभारंजनशतक, १०.कलिविडम्बनम् (१०२ पद्य), ११. त्यागराजस्तव, १२.नीलकण्ठविजय चम्पू(सम्पादक सी०पी० राम स्वामी अय्यर),१३. नलचरित नाटक (६ अंको का नल पर आधृत रुपक) इनकी अन्य सुप्रसिद्ध साहित्यिक कृतियां हैं।

गंगा के दिव्य अवतरण से सम्बन्धि गंगावतरण ८ सर्गों का एक सुन्दर महाकाव्य है। इसकी रचना का आधार बाल्मीकि रामायण ३६/२-११, महाभारत आदिपर्व ८५/२२-२५, ८६/२-१०, वामनपुराण २५/७५, भागवत पुराण ८/६, विष्णु पुराण ४/४, ब्रह्मपुराण ७८ अध्याय, इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग के प्रारम्भिक १५ श्लोकों से वर्ण्यविषय का आधार ज्ञात होता है। जैसाकि स्वयं महाकवि ने कहीं-कहीं स्पष्ट रुप से स्वीकार किया है यथा-

सा च वामनपुराण वचोभिः स्पष्टमेव विवृताविदिता ते ।
नागलोकमवतार्य नदीं तां देयमम्बु सगरात्मभवेभ्यः ।।

गंगावतरण२/१५

अर्थात वामन पुराणोक्त वर्णनें के अनुसार उस सुर नदी के विषय में आपकों स्पष्ट रुप से विस्तृत जानकारी है उसी के जल से (नागलोक में अवतरित गंगा नदी) सगरात्मजों को जल (निवापांजलि) देना चाहिए ।

कवि ने इस श्लोक में हिमाद्रि तनया गंगा ब्रह्मशाप को अनुग्रह के रुप में धारण करती हुई प्रलय कलिक सागर के समान तरंगों से सभी को आत्मसात करने के लिए प्रवाहित हो चली इसका वर्णन इस प्रकार किया है-

गंगावतरण

सा ततो गिरिसुताकलमन्ती तं च निगृह्मनुग्रहमेव ।

ऊर्मिभिः प्रलयसागरघोरैरुत्पपात कवलीकरणाय ।।

गंगा० २/१२

इस अधोलिखित श्लोक में कवि ने भगीरथ के कठोर तप करने पर और सुरनदी गंगा के अवतरण की आकांक्षा से निमिष के समान दिन हजारों दिनों की तरह लगने लगे अर्थात् छोटे दिन भी बड़े लगने लगे, इसका वर्णन किया है-

तिष्ठततस्तपसि तस्य कठोरे काङ्क्षतश्चच सुरसिन्धुनिपातम् ।
वासरा निमिषवत्समतीयुवसिरा इव समांश्व सहस्त्रम् ।।

गंगावतरण२/५७

इस श्लोक में कवि नीलकण्ठ ने गंगा की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कहा है कि-

संव्यानमूर्मिलतिकाव्यतिषंगलब्ध -
फेनानुलेपमिव पाण्डरमावहन्तीम् ।
पश्यन्पुरस्तनुमतीं सुरलोक सिन्धुं
सिद्धं मनोरथममस्त दिलीपसूनुः ।।

गंगा० २/६५

तरंगलता के संगमजन्य संघर्ष से उत्पन्न फेनिलानुलेप की तरह शुभ्रता को धारण करती हुई शरीरिणी सुरनदी को अपने सामने देखते हुऐ दिलीप पुत्र भागीरथ ने अपना मनोरथ सफल माना ।

जटा बन्धन खुल जाने पर उसके अन्दर सर्प तथा चन्द्रमा अंकुर की तरह लग रहे थे। चारों तरफ व्याप्त नन्दी की दृष्टि से दिशायें प्रकम्पित हो गई। गर्जना से घबड़ाहट के कारण भयभीत होकर तीनों लोक स्तुति करने लगे। उस सुरनदी गंगा के पतन का यह भीषण पूर्वक्षण मेरी वाणी से किसी भी प्रकार वर्णनीय नहीं हो सकता । कवि ने इस श्लोक में गंगा की भयंकरता से पूर्ण रुप का वर्णन इस प्रकार किया है-

बद्धस्त्रस्तकपर्दकन्दरपतद्योगीन्द्रचन्द्रांकुर-

क्षेपव्यावृतनन्दिदृष्टिवलनव्याधूतदिग्भितयः ।

सावष्टम्भमहेशानभ्रमपरित्रस्यप्त्रिलोकस्तुताः,

पारे मद्वचनाममर्त्यतटिनी संपातपूर्वक्षणाः ।।

गंगा० ४/६:

इस श्लोक में गंगा जल को नियमित करने वाली शिव जटाओं का देखा'' इसका वर्णन किया गया है-

यावद्रव्योमविटंकसंकुलचलत्कल्लोलकोलाहलै-

रायाभीमधारयन्दुहितरं प्राप्तस्तुषाराचलः ।

तावत्पीतसुरापन्दकपुन व्यधूितसंदानिताः

संपृष्टाश्च पटांचलेन शिवया शंभोरपश्यजटाः ।।

गंगा० ५/१२

आकाश में मेरी ध्वनि तरंगों के कोलाहल से अपनी पुत्री पार्वती को ले जाने के लिए जैसे ही हिमाचल उपस्थित हुए वैसे ही उन्होनें सुरनदी गंगा के जल को नियमित करने वाली शिव जटाओं को देखा, तत्क्षणहीपार्वती ने उसमें अंचल पट लगा दिया ।

चन्द्रशेखर की स्वल्प शिथिलित जटा से पृथ्वी पर गिरती हुई सुरनदी को देवगणों ने दूर से चार सौ बांस लम्बी माला की तरह विस्तृत रुप से देखा। इसका वर्णन कवि ने इस श्लोक में किया है-

तामापतन्तीमनद्यौ कपर्दात्क्रञ्चितादीषदिवेन्दुमौलेः।

दूरादमन्यन्त विलम्बमानां मालाभिव द्रोणमयीममर्त्याः ।।

गंगा ६/२३

बहती हुई सुरनदी ने स्वयं सात जल स्त्रोतो को धारण किया। जिनमें तीन स्त्रोत पश्चिम में ओर तीन स्त्रोत पूर्व दिशा में फैल गये। इस श्लोक में कवि ने गंगा की विशालता का वर्णन किया है कि किस प्रकार गंगा ने अपने अन्दर सात जल

स्त्रोतो को समा लिया-

सा तत्र सिन्धु सरसि क्षरन्ती स्त्रोतांसि सप्त स्वयमाबभार।
त्रिभिः प्रतीचिदिशमाववतार त्रिभिश्व सा तैर्दिशमिन्द्रगुप्ताम् ।।

(गंगा. ६/२४)

इस श्लोक में कवि गंगा की निरन्तर गति का वर्णन करता हुआ यह बताता है कि वह सुरनदी पर्वतीय चोटी से उतरकर पृथ्वी पर धीरे धीरे चलती हुई यज्ञ करने वाले जह्नुऋषि के दर्शनार्थ आदर पूर्वक उनके समीप गयी।

अर्थाद्रश्रृडंदवतीर्यभूमो सा तत्र मन्दं सरिदुच्चलनती ।
आरब्धयज्ञस्य जगाम जहनरभ्यर्णमालोकितुमातृतेव ।।

(गंगा. ६/३१)

अत्याधिक समय तक जह्नु ऋषि के कोप से विकृति जन्य व्यसन को प्राप्त होकर पृथ्वी पर उतरने वाली सुर नदी का अनुरागिणी नदियों ने तरंगरूपी हाथों से आलिंगन किया। इसका वर्णन इस मनोरम श्लोक में दृष्टव्य हैं-

तां जह्नुकोपाद्व्यसनं प्रपन्नां कलाद्वहोः क्षोणितलेऽवतीर्णाम् ।
नद्योऽनुरक्ता इव तत्र तत्र तरंगहस्तैदृढ़मालिलिंगु ।।

(गंगा. ६/४३)

भक्ति से अहंकारिणी गति का परित्याग और राजा भागीरथ को पुरस्कृत करके वह सुरनदी विश्वेश्वर शिव के समीप गयी क्योंकि वह उनके जटा प्रभाव से परिचित हो गयी थी। इसका मनोहारी वर्णन इस मनोरम श्लोक में दृष्टिगोचर होता है-

भक्त्या परित्यज्य गति सगर्वा भक्तं पुरस्कृत्य भागीरथ च।
विवेश विश्वेशितुरन्तिकं सा जानाति येनास्य जटाप्रभावम् ।

(गंगा०६/५०)

मणिमर्णिका जल के अन्दर गिरने से उसका वेग मन्द हो गया है तथा नवीन पुष्प की तरह फैले हुये फेनिल जलकणों से विनय युक्त होकर वह सुर नदी विश्वेश्वर महेश की वन्दना करने लगी।

सा वेगादथ मणि कर्णिका जलान्तःसंपात प्रतिहतिसंभवैर्द्युसिन्धुः ।
व्याकीर्णैर्नवकुसुमैरिवाम्बुलेशै र्विश्वेशं विनयपरिष्कृता क्वन्दे।।

(गंगा ८/२)

कवि ने गंगा की महत्वा पर प्रकाश डालते हुये कहा है कि समुद्र के रहने पर भी मेघ है,जल होने पर भी बहुत से समुद्र है इस प्रकार जल की कथा का अन्त नहीं, इससे भयभीत होने वाले जल-जन्तुओं के लिये यह सुरनदी अभय प्रदान करने वाली हुई। अर्थात् जल तो बहुत है किन्तु सुरनदी के समान कोई भी जल नहीं हो सकता इसीलिये इसको अमृत कहा गया है-

सति सरस्वति सन्ति पयोधराः सति तदम्भसि सन्ति च सिन्धवः ।
तदिह काम्बुकथेति विषीदतामभयदेयमजायत यादसाम् ।।

(गंगा ८/२१)

तदन्तर समुद्र तट पर बिलम्ब से आकर राजा भगीरथ के लौटने की प्रतीक्षा करने वाले सेना सहित उनके सचिवों ने जलमार्ग से आते हुये भगीरथ को देखा-

तर्ताश्चरादेत्य तटं पयोधेः प्रतीक्षमाणा नृपतेर्निवृत्तिम् ।
चमूसमेताः सचिवास्तदीयास्तमुत्पतन्तं सलिलादपश्यन् ।।

(गंगा. ८/५६)

जलमार्ग से आने वाले राजा भगीरथ के मन्द हास्य सुशोभित मुख को देखकर सेना वैसे उमड़ पड़ी जैसे चन्द्रमा को देखकर समुद्र तट उमड़ पड़ता है। अर्थात् गंगा को पृथ्वी पर अवतरित होते हुये देखकर सेना प्रसन्नचित्त हो गयी-

समुद्यतस्तस्य जलान्नृपस्य मुखेन मुग्धस्मित सुन्दरेण ।
उल्लासमासादयति स्म सेना वेलेव सिन्धोः शशलाञ्छनेने ।।

(गंगा. ८/६०)

किसी एक व्यक्ति ने सुरनदी के निमन्जन से पवित्र जटा-बन्धन को खोलते हुये राजा भगीरथ के सिर को ऊपर उठाकर धनीभूत प्रकाशित मणियों के साथ उसे बांध दिया। इस मनोज्ञ दृश्य का वर्णन इस श्लोक में व्यक्त किया गया है-

मन्दाकिनीमज्जनपूतमेको विस्त्रसमन्नस्य जटाकलापम् ।

उन्नम्य मौलि ग्रथयांबभूव मुक्तामयैर्दामभिरेव सान्द्रम् ।।

(गंगा. ८/६५)

पं. उमापति शर्मा विचरित पारिजात- हरण

वीसवी शती का एक श्रेष्ठ महाकाव्य पारिजातहरण उत्तर प्रदेश में देवरिया जिले के पकड़ी ग्रामवासी पं० उमापति शर्मा द्विवेदी,उपनाम कविपति के द्वारा प्रणीत हुआ है। इनका जन्म वि.स. १६४८ में हुआ था। इनके अध्यापन का क्षेत्र तमकुही, पडरौना, देवरिया आदि पूर्वी उत्तर प्रदेश रहा हैं। उनकी प्रारम्भिक रचनायें शिवा-स्तुति और वीरविशतिका है वीरविंशतिका में हनुमान की स्तुति की गई है।

महाकवि द्वारा गंगावतरण का दर्शन कर लेने के पश्चात् उन्होंने गंगाशिखरिणी नामक स्तुति की रचना की ।

पारिजात हरण महाकाव्य २२ सर्गो में निबद्ध है। इसी कथा कतिकर्णपूर के पारिजात हरण के समान ही पड़ती है। इसमें द्वारका,प्रभात,रैवतक-यात्रा,समुद्र,गृहस्थ-धर्म प्रयाग,गंगा,सतीधर्म,सत्यभामा का मान, शरद् सन्ध्या,स्वर्गारोहरण,मध्यमलोक,इन्द्रभवन, नन्दनवन,इन्द्र की बृहस्पति से मन्त्रणा,इन्द्र का युद्धोद्योग,नारायण और इन्द्र का युद्ध,मातृमहिमा,वसन्त आदि महाकाव्यात्मक वर्णन के विशेष प्रसंग है।

नागराज विचरित सीता स्वयंवर

श्री नागराज ने सीता स्वयंवर नामक महाकाव्य का प्रणयन १६४० ई० के पहले किया था।नागराज की काव्य-प्रतिभा नैसर्गिक ही कही जा सकती है। पण्डितोकुलोत्पन्न नागराज के बी०ए०सी० तक शिक्षा प्राप्त की और मैसूर के बिजली विभाग में पदोन्नति करते हुये आडिट कार्यालय में सुपरिन्टेण्डेण्ट हो चुके हैं।

नागराज के स्तोत्रमुक्ता फल,भारतीय,देशभक्तचरित,शक्रीविलास आदि अन्य काव्यों की रचना की है। उनकी यशस्वी लेखनी नित्य संस्कृत साहित्य का संवर्धन करती रही है।

सीतास्वयंवर का प्रणयन १६ सर्गों में सम्पन्न हुआ है। इसकी कथा बाल्मीकि रामायण के अनुरूप है। इसके प्रमुख प्रकरण,विश्वामित्र-गमन,सगरोदत्त,गंगावतरण, उहल्योद्धरण,कार्मुकभञ्जन और जानकी परिणय है।

नागराज ने भी सीतास्वयंवर में मां गंगा का अत्यन्त मनोहारी वर्णन किया है-

> गंगे तरंगतरले महनीयमूर्ते, मातस्तवांघ्रिकमलं शतशः प्रणौमि।
>
> मन्ये शिवाधवजटावनवासपूतां,पुण्ये ममाप्यखिलसौख्यचयप्रदां त्वाम् ।
>
> (सीतास्वयंवर ५/३)

चंचल तरंगो वाली, पूजनीय स्वरूप वाली मां गंगे,तुम्हारे चरण कमलों को बारम्बार प्रणाम। हे पुण्यशालिनि,में तो समझता हूं कि शिव की जटारूपी वनवास से आप विशेष पवित्र बनाई गई हैं। आप मुझे सभी सुख प्रदान करने वाली है।

गंगा का स्वरूप-

गंगा का भौतिक स्वरूप दो क्षेत्रों में व्याप्त है। एक तो हिमालय क्षेत्र में और दूसरा समतल भूक्षेत्र में। पहला क्षेत्र गंगोत्री एवं अलकापुरी (बदरिकाश्रम) से प्रारम्भ होकर गंगासागर में समाप्त होता है और दूसरा हरिद्वार से प्रारम्भ होकर गंगासागर में समाप्त होता है जिसका संस्कृत महाकाव्यों में पर्याप्त निरूपण वर्णित है।

हिमालय-क्षेत्र में गंगा की दो प्रमुख धारायें हैं। पहली धारा है-भागीरथी। भागीरथी गंगोत्री के गोमुख से निकलकर उत्तरकाशी तथा टिहरी जनपदों से होती हुई देवप्रयाग आती है। गंगा की दूसरी प्रमुखधारा है- अलकनन्दा। नरनारायण पर्वतों से उद्‌गत अलकनन्दा चमोली तथा पौड़ी जनपदों से होती हुई दक्षिणवाहिनी होकर देवप्रयाग आती है।

भागीरथी एवं अलकनन्दा देवप्रयाग में समन्वित होकर विशाल गंगा का रूप धारणकर हृषीकेश एवं हरिद्वार होती हुई कनखल में प्रथम बार समतल भूभाग में प्रवेश करती है।

देवप्रयाग से पूर्व अनेक अन्य धारायें अलकनन्दा एवं भागीरथी में मिलती हैं। प्रत्येक संगम को 'प्रयाग' कहा गया है। ये समस्त धारायें साकल्येन 'गंगा' ही कही जाती है। अब भागीरथी एवं अलकनन्दा का पृथक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. भागीरथी गंगोत्री से देवप्रयाग तक

प्रायः नदियाँ अपने उद्‌गम-स्थान से निकलकर किसी एक दिशा में आगे बढ़ती है। परन्तु भागीरथी की गति विचित्र हैं। गंगोत्री हिंमानी से २३ मील नीचे उतरकर भागीरथी एकदम उत्तर की ओर बहती हैं। गंगोत्री से भैरवघाटी तक सातमील वह उत्तरपश्चिम में,भैरवघाटी से हरसिल तक नौ मील ठीक पश्चिम में और हरसिल से आगे पूर्णतः दक्षिणवाहिनी होकर बहती हैं।

गंगोत्री, भेरौघाटी,हरसिल,सुवकी,गंगवानी,भटवारी,धरासू टेहरी तथा नरेन्द्र नगर आदि होती हुई भागीरथी दक्षिण पूर्व गति में उतरती हुई देवप्रयाग तक आती हैं।टेहरी नगर के उत्तर-पश्चिम में निल्लंगाना नदी का भागीरथी से संगम होता है। यह स्थान गणेश प्रयाग कहा जाता है और सागर-तट से प्रायः २०७२ फुट की ऊंचाई पर स्थित है। टेहरी तक गंगोत्री-यमुनोत्री के मार्ग समवेत है। परन्तु आगे यमुनोत्री का मार्ग डंडालगांव, यमुनाचट्‌टी, फूलचट्‌टी और जानकी-चट्‌टी होता हुआ अपने लक्ष्य तक पहुंचता है। डंडालगांव से यमुनोत्री की दूरी मात्र २३ मील है यह मार्ग यमुना के किनारे-किनारे जाता है।

गंगानी चट्‌टी से यमुनोत्री-गंगोत्री के मार्ग अलग होते हैं। गंगानी से गंगोत्री ७५ मील दूर है। गंगानी से सिंगोट चट्‌टी १२ मील दूर है। सिंगोट से तीन मील आगे बढ़ने पर नाकुरी गांव में सर्वप्रथम भागीरथी के दर्शन होते हैं। यह मार्ग

उत्तरकाशी (समुद्रतट से ३००० फुट ऊंचा)मनेरी,टरवारी,गंगवानी ६४०० फुट सुक्की ८७०० फुट झाला चट्टी,हरसिल,भैरोघाटी होता हुआ,गंगोत्री पहुचंता है।

यद्यपि गंगा के दर्शन गंगोत्री में होते हैं, परन्तु गंगा का उद्गम यहाँ से भी लगभग १८ मील आगे "गोमुख" में है।

2. अलकनन्दा बदरिकाश्रम से देवप्रयाग तक-

देवप्रयाग १५५० फुट में भागीरथी एवं अलकनन्दा का संगम होता है। बदरिकाश्रम से अलकापुरी प्रायः २२ मील आगे है। यही अलकनन्दा का उद्भव स्थान है। देवप्रयाग से कीर्तिनगर, श्रीनगर १७०६ फुट रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग तथा जोशीमठ होते हुए बदरीनाथ का मार्ग है। यह सम्पूर्ण मार्ग अलकनन्दा के किनारे से जाता है।

रुद्रप्रयाग २००० फुट में उत्तर-पश्चिम दिशा से आती मन्दाकिनी अलकनन्दा से संगत होती है। यहीं से केदार एवं बदरी के मार्ग पृथक् होते हैं। रुद्रप्रयाग से अगस्तमुनि, काकड़ागढ़, गुप्तकाशी, शोणितपुर, फाराचट्टी, रामपुर, त्रियुगीनारायण, सोनप्रयाग, गौरीकुण्ड होते हुए केदारपुरी पहुँचा जाता है।

सोनप्रयाग में मन्दाकिनी एवं वासुकी गंगा का संगम है।

बदरीनाथ जाने के लिए यात्री को पुनः रुद्रप्रयाग लौटना पड़ता है। यहाँ से उत्तरपूर्व दिशा में अलकनन्दा के किनारे-किनारे मार्ग बदरीनाथ की ओर बढ़ता है। रुद्रप्रयाग, पीपलकोटी, गुलाबचट्टी ५३०० फुट कुमारचट्टी और ज्योर्तिमठ ६१५० फुट होकर बदरीनाथ जाया जाता है।

रुद्रप्रयाग के आगे कर्णप्रयाग में अलकनन्दा एवं पिण्डरगंगा का संगम है। पिण्डर पूर्व दिशा से आती है।

विष्णुप्रयाग में जोशीमठ से दो मील आगे विष्णुगंगा एवं अलकनन्दा का संगम है। बदरीनाथ से पाँच मील दूर "बसुधारा" तीर्थ है। यह समुद्रतट से १२००० फुट की ऊँचाई पर है। इसी मार्ग में माणा गाँव मणिभद्रपुर के पास **केशवप्रयाग** में सरस्वती एवं अलकनन्दा का संगम है।

इसीप्रकार नान्दीगंगा, धौलीगंगा आदि धारायें भी अलकनन्दा से मिलती है। हिमालय में प्रत्येक प्रयाग दो गंगाधाराओं के संगम का प्रतीक है। हरिद्वार से बदरीनाथ १८४ मील, केदारनाथ १५७ मील यमुनोत्री १४० मील पर है। इस प्रकार यमुनोत्री (भटवारी) से गंगोत्री ६८ मील, गंगोत्री से केदारनाथ १२१ मील तथा केदारनाथ से बदरीनाथ १०५ मील है। इन तथ्यों से हिमालय में भागीरथी एवं अलकनन्दा का विस्तार समझा जा सकता है।

हरिद्वार से सागर तक गंगा का यात्रापथ :-

देवप्रयाग में भागीरथी एवं अलकनन्दा की धारायें मिलकर गंगा की संज्ञा प्राप्त करती है। इसी गंगा की प्राचीनता एवं पवित्रता का ज्ञान सम्पूर्ण विश्व को रहा है। ग्रीक और लैटिन लेखकों को इसी गंगा की १६ सहायक नदियों का ज्ञान था[1]

इसी गंगा को विष्णुपदी, जाह्नवी, मन्दाकिनी और भागीरथी आदि नामों से प्राचीन काल में पहचाना गया।[2] महाभारत में इसी गंगा का उद्गम बिन्दु 'बिन्दुसर' तथा जैनग्रंथ जम्बूदीपप्रज्ञाप्ति में 'उद्‌यह्रद' बताया गया। पालि ग्रंथों में अनोतत्त झील के दक्षिणी मुख को गंगा का जन्मस्थान बताया गया, परन्तु आधुनिक झील के दक्षिणी मुख को भूगोल वताता है कि सर्वप्रथम गंगा गंगोत्री में परिलक्षित होती है।[3]

हरिद्वार से बुलन्दशहर तक गंगा दक्षिणवाहिनी है। बुलन्दशहर से प्रयाग (इलाहाबाद) तक गंगा दक्षिणपूर्ववाहिनी है। इलाहाबाद से राजमहल तक यह पूर्णतः पूर्ववाहिनी है। राजमहल से गंगासागर तक पुनः दक्षिणपूर्ववाहिनी है। गंगा का यह सारा प्रवाहपथ २५२५ किलोमीटर लम्बा है।

---

१. दृष्टव्य- ऐंश्येण्ट इण्डिया पृ० १३६ (मैक्रिडिल)

२. योगिनीतंत्र, २३

३. सविस्तर दृष्टव्य- प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल
विमल चरण लाहा, पृ० ५३

भारत की ३३% जनता का भरण-पोषण अकेली गंगा करती है। गंगा के तट पर उन्तीस प्रथम श्रेणी के नगर, तेईस द्वितीय श्रेणी के नगर तथा अड़तालीस कस्बे हैं। हजारों गॉव भी गंगा के तट पर बसे हैं। भारत की समतल उर्वर पृथ्वी का २५% भाग गंगा की उपत्यका है।[१]

हरिद्वार से आगे गंगा बिजनौर, गढ़मुक्तेश्वर, हस्तिनापुर, फर्रुखाबाद, सोरों, कन्नौज, कानपुर, श्रृंगवेरपुर, प्रयाग, मिर्जापुर, चुनार, वाराणसी, गाजीपुर, बलिया, बक्सर, दानापुर, पटना, मुंगेर, भगलपुर तथा राजमहल होती हुई सागर की ओर बढ़ती है।

राजमहल और मालदा के बीच गंगा बंगाल में प्रवेश करती है। मुर्शिदाबाद से नगर से कुछ पूर्व ही वह दो धाराओं में विभक्त हो जाती है। गंगा की दाहिनी शाखा भागीरथी हुगली वर्दवान्, वीरभूम, मिदनापुर, चन्द्रनगर, हुगली और कलकत्ता होते हुए दक्षिणवाहिनी होकर गंगासागर में समुद्र से मिल जाती है।

गंगा की वामशाखा फरीदपुर-ग्वालन होकर पूर्वी बंगाल वर्तमान बांग्लादेश होती हुई, पद्मा-मेधना कही जाती हुई समुद्र से मिलती है।

इस प्रकार गंगा अपनी यात्रा में विशाल भारत के तीन प्रान्तों को अपने आंचल में समाविष्ट करती है। उत्तरकाशी से बलिया तक उत्तर प्रदेश को छपरा से भागलपुर तक बिहार को तथा मुर्शिदाबाद से,२४ परगना तथा पश्चिमबंगाल को देश की दृष्टि से यह भारत एवं बांग्लादेश को अपने विस्तार में समेटती है।

गंगा की प्रमुख सहायक नदियां

गंगा से मिलने वाली अधिकांश बड़ी नदियां, हिमालय के विविध शिखरों से आई हे। सुविधा की दृष्टि से हम इन सहायक नदियों को दो वर्गो में विभक्त कर सकते हैं-

---

१. सविस्तर दृष्टव्य- दि गंगा ऐक्शन प्लानॅ डा० आर० एन० सिंह
प्रतियोगिता विकास हिन्दीमासिक दिसम्बर ८५ अंक

१. गंगा के वायें तट की नदियां

२. गंगा के दाहिने तट की नदियां

1. गंगा के बायें तट की नदियां-

१. नुत नदी- यह फर्रूखाबाद शहर से ठीक पहले ही गंगा में मिलती है। यह एक छोटी नदी है।

२. रामगंगा - इस नदी की लम्बाई ३०० मील है। यह फर्रूखबाद और हरदोई के बीच गंगा में विलीन होती है।

३. गोमती - इसे गोमती,गुम्ती,धेतुमती आदि गंगा एवं ध्रुवपापा आदि नामों से भी अभिहित किया गया है। पुराणों में सर्वत्र भारत की पवित्र नदियों में इसकी गणना की गयी हैं। इसका यात्रापथ ५०० मील का है।वह वाराणसी और गाजीपुर के बीच गंगा से मिलती है।

४. तमसा- इसे पूर्वी टोंस भी कहते है। यह आजमगढ़ जनपद से आगे बढ़कर बलिया शहर के कुछ पश्चिम में ही गंगा से मिलती है।

ऋतुषु तेन विसर्जितमौलिना भुज समाहृतदिग्वसुना कृताः
कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिनो वितमसा तमसासरयूतताः ।।

(रघुवंशम् ६/२०)

५. सरयू- गोंडा जनपद में हिमालय से निस्सृत सरयू तथा घाघरा की पृथक् धारायें दीखती हैं जो कि आगे बढ़कर बाराबंकी जिले में समन्वित होकर अयोध्या आती है।[१]

ऋद्धापणं राजपथं स पश्यन् विगाह्यमानां सरयूं च नौभिः ।
विलासिभिश्चाध्युषितानि पौरैः पुरोपकण्ठोपवनानि रेमे ।।

(रघुवंशम् १४/३०)

अयोध्या की सरयू का पुराणों में बहुशः उल्लेख है। वर्तमानकाल

में भूगोलविद् सरयू तथा घाघरा के समन्वित स्त्रोत को प्रायः घाघरा ही कहते हैं,परन्तु धर्मप्रवण जनता इसे सरयू कहता ही पसन्द करती है। सरयू फैजाबाद,आजमगढ (दोहरी घाट) बलिया होती हुयी बिहार प्रान्त के छपरा जिले में गंगा से मिलती है। इसका सम्पूर्ण यात्रापथ ६०० मील लम्बा हैं। छोटी गण्डक तथा अचिरावती (वाप्ती) सरयू की सहायक नदियां हैं।

६. **गण्डकी**- यह ४०० मील लम्बी हैं। यह हिमालय से निकलकर देवरिया जिले से होती हुई सोनपुर (आराजनपद) तथा हाजीपुर (मुजफ्फरपुर जनपद) के बीच गंगा से मिलती है। इस संगमस्थली को (हरिहर क्षेत्र) भी कहते है। प्रसिद्ध है कि पौराणिक गज-ग्राह युद्ध हरिहर क्षेत्र में ही हुआ था। शतपथ ब्राह्मण में वर्णित 'सदानीरा' नदी को कुछ विद्वानों ने गण्डक से,कुछ ने ताप्ती से समीकृत किया है। कुछ लोग प्राचीन'कसतोया' नदी को गण्डक से समीकृत करते हैं।

७. **बड़ी गण्डक**- (बूढ़ी गण्डक) यह मुंगेर जनपद में घाघरा (सरयू) गंगा संगम के पश्चिम में ही गंगा से मिलती है।

८. **बागमती**- नेपाल देश की बागमती अथवा बाहुमती बौद्ध-वाड्मय में बहुश्रुत रही हैं। सात नदियें से संगमित बागमती के तट पर अनेक तीर्थ हैं। काठमाण्डू का पाशुपति ज्योर्तिलिंग तो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह बिहार में गंगा से समन्वित होती है।

९. **कमला**- यह गंगा की एक लधु सहायक नदी है।

१०. **कोसी**- (कौशिकी) इसका यात्रापथ २२५ मील लम्बा है। यह भागलपुर एवं पूर्णिया जनपदों में बहती हुई पूर्णिया के मानहारी नामक स्थान से दक्षिण पूर्व में गंगा से समन्वित होती है।

2. गंगा के दाहिने तट की नदियां-

१. **यमुना**- गंगा की सहायक नदियों में पौराणिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं पवित्र है- यमुना! इसे सूर्य की पुत्री एवं भगवान् कृष्ण की प्रिया (विरजा) कहा जाता है। कालिन्दी,कलिन्दजा,रवितनया आदि इसके नाम हैं। यमुना यमुनोत्री से उद्‌भूत होती

है। सहारनपुर,दिल्ली,मथुरा,आगरा,इटावा,कालपी,हमीरपुर,कौशम्बी,होती हुई यह श्रेष्ठ नदी तीर्थराज प्रयाग में गंगा से मिल जाती है। इसका यात्रापथ ८६० मील लम्बा है। चम्बल तथा बेतवा प्रमुख सहायक है।

उपकूलं स कालिन्द्याः पुरी पौरूषभूषणः ।
निर्ममे निर्ममोऽर्थेषु मधुरां मधुराऽऽकृतिः ।।
(रघुवंशम् १५/२८)

तत्र सौधगतः पश्यन् यमुनां चक्रवाविनीम् ।
हेम भक्ति मती भूमेः प्रवेणीमिवं पिप्रिये।।
(रघुवंशम् १५/३०)

२. तमसा- रामायण ख्याति की नदी तमसा (दक्षिण टोंस)ऋक्ष पर्वत से निकलकर, पूर्वात्तरवाहिनी होती हुई इलाहाबाद जनपद की मेजा तहसील में गंगा से मिलती है। रामायण प्रणेता महर्षि बाल्मीकि का आश्रम तमसा और गंगा के संगम पर ही अवस्थित था। यहीं उन्होंने क्रोंच वध का करूण दृश्य देखा था।

अथ जातु रूरोर्गृहीतवर्त्मा विपिने पार्श्वचरैरलक्ष्यमाणः ।
श्रमफेनमुचा तपस्विगाढ़ा तमसां प्राप नदीं तुरङ्.गमेण
(रघुवंशम् ६/७२)

३. सोन,शोणभद्र,शोणनद- सोन की लम्बाई ४६४ मील है। यह गंगा की सबसे निचली सहायक नदी है। इसे एरियन द्वारा वर्णित सोनोस (SoNos) से समीकृत किया जाता है। जबलपुर जनपद (म०प्र०) में स्थित मेकल पर्वतश्रेणी (अमरकण्टक) से निकलकर उत्तर पूर्व बघेलखण्ड मिर्जापुर एवं शाहाबाद जिलों में बहती हुई यह नदी पटना में गंगा से मिल जाती है।

तस्याः स रक्षार्थमनल्पयोधमादिश्य पित्रयं सचिवं कुमारः ।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिववाहिनीं तां ज्योतीरथां शोण इवोत्तरंग ।।
(रघुवंशम् ७/३६)

४. पुनपुन्न- यह दक्षिणी उपनदी पटना से कुछ दूर आगे गंगा में मिलती हैं। इसे 'पुनपुन' भी कहते हैं।

५. फल्गु- यह गयातीर्थ की प्रसिद्ध धार्मिक नदी है। यह मुँगेर जिले में लक्खीसराय में उत्तर पूर्व में गंगा से मिलती है।

६. सक्रि- प्राचीन 'सकुटि' से समीकृत यह नदी मुगेर और पटना के बीच में गंगा से मिलती है।

७. बंसलोई- गंगा की भागीरथी शाखा (हुगली)में जो पहली सहायक नदी दाहिनी ओर से मिलती है उसे बंसलोई कहते है। यह संगम मुर्शिदाबाद जिले में हैं।

८. अजया- यह महत्वपूर्ण सहायक नदी वर्दवान जिले के कटवा नामक स्थान में गंगा भागीरथी में विलीन होती है।

९. दामोदर- भागीरथी के निचले प्रवाह में दाहिनी ओर से दामोदर नामक प्रसिद्ध सहायक नदी,कई धाराओं में विभक्त होकर मिदनापुर जिले में गंगा (हुगली) से मिलती है। यह नदी बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले में बागोदर की पहाड़ियों से निकलती हैं तथा मानभूम, संभालपरगना, वर्दवान तथा हुगली जनपदों में प्रवाहित होती है।

१०. रूपनारायण- यह महत्वपूर्ण नदी बांकुड़ा,हुगली और मिदनापुर जिलों से बहती हुई तामलुक के निकट भागीरथी से मिल जाती है।

११. हल्दी एवं केशाई- इन नदियों की संयुक्त धारा दाहिनी ओर से हुगली में मिलती है।

१२. पनार- नबाबगंज के आगे गंगा से मिलती है। माल्दा जिले में कंसवती तथा पूर्वभव- ये दो नदियां पनार की सहायक हैं। इसीप्रकार राजशाही जिले में आत्रेयी तथा छोटी यमुना संयुक्त होकर पनार से मिलती है।

१३. बड़ी यमुना- यह नदी गोलुण्डो नामक स्थान में गंगा से समन्वित होती है। वस्तुतः यह ब्रह्मपुत्र की ही धारा है।

वस्तुतः बंगाल में गंगा की विविध धाराओं का जाल सा बिछा है। गराई

(मधुमती) कीर्तिनाशा आदि गंगा की अन्य सहायक नदियां इस क्षेत्र में हैं।

उपर्युक्त समस्त नदियों के अतिरिक्त इस सन्दर्भ में ब्रह्मपुत्र का उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक है। १७०० मील लम्बी यह नदी फरीदपुर के पास गंगा से मिलती है।

आधुनिक भौगोलिक अन्वेषणों के अनुसार ब्रह्मपुत्र का उद्‌गम मानसरोवर (तिब्बत) के पूर्वीक्षेत्र में हैं। मानसरोवर से नम्चा-वरवा तक इसका प्रवाह पूर्वाभिमुख है,परन्तु यहीं से यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है और हिमालय के पूर्वी छोर से बहती हुई असम की घाटी में प्रवेश करती है।

सदिया से गारों पहाड़ियों तक ब्रह्मपुत्र दक्षिण-पूर्व दिशा में बहती है और गोलुण्डो घाट से कुछ पूर्व ही गंगा में मिल जाती है।[१]

गंगा का लोकोपयोगी स्वरूप

पहले संकेत किया जा चुका है कि गंगा की घाटी, भारत की सम्पूर्ण कृषियोग्य भूमि का २५ प्रतिशत भाग है। गंगा भारत की जनसंख्या के ३३ प्रतिशत लोगों का भरण-पोषण करती है। गंगा और यमुना को दोआबा (अन्तर्वेदी) सुवर्णभूमि माना जाता है।

तुलनात्मक दृष्टि से विश्लेषण करने पर सिद्ध होता है कि गंगा का जलप्रवाह यमुना से कई गुना अधिक है। यमुना अपनी अतिशय गहराई एवं ऊंचे कगारों के कारण बांधो एवं नहरों के योग्य उतना नहीं है जितना कि गंगा। गंगा अपने फैलाव तथा कम गहराई के कारण सिंचाई आदि की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध होती है।

यही कारण है कि उत्तर भारत में सर्वाधिक बांध गंगा पर बनाये गये

---

१. सविस्तर द्रष्टव्य-भारतभ्रमण,खण्ड २ पृ० १६६ (साधुचरण प्रसाद वाराणसी, १६०२ ई०)

प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल पृ० ५७ (विमलचरण लाहा)

हैं और सर्वाधिक नहरें भी गंगा से निकाली गई है। इनके कारण गंगा का लोकोपयोगी रूप साकार हुआ है। वर्षाऋतु में सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र एवं सहायक नदियों द्वारा विस्तृत भूभागों से लाई गई अपार जलराशि गंगा में आती है। तो महाप्लावन का दृश्य उपस्थित हो जाता है।

प्राचीन प्रमाण सिद्ध करते हैं कि गंगा के ऐसे ही महाप्लावन में कभी हस्तिनापुर कालकवलित हो उठा था। सरयू की बाढ़ में अयोध्या तथा यमुना की बाढ़ में कौशाम्बी के विनष्ट होने की ऐसी ही रोमांचक घटनायें श्रुतिपरम्परा से ज्ञात होती हैं।

वैज्ञानिक प्रोन्नति के इस युग में ऐसी घटनाओं पर नियंत्रण का प्रयास प्रायः विश्व का प्रत्येक राष्ट्र कर रहा है। इसी दृष्टि से नदियों पर बॉध बनाकर विद्युत ऊर्जा उत्पन्न की जा रही है। साथ ही साथ नहरों द्वारा उस संरक्षित जल का कृषि कार्यों में सदुपयोग किया जा रहा है।

गंगातीर्थ गंगा के प्रवाहपथ में ही हो, ऐसी बात नहीं है। दक्षिणभारत तथा देश के अन्यान्य भागों में भी भावनात्मक स्तर पर गंगातीर्थो का निर्माण हुआ है। इतना ही नहीं वृहत्तरभारत के अंगभूत चम्पा, सुवर्णद्वीप तथा लावदेश में भी गंगातीर्थो का अस्तित्व मिलता है। अब प्रस्तुत है गंगा तीर्थों का संक्षिप्त वर्णन ।[१]

१. गोमुख- गोमुख गंगा का उद्‌भव-स्थान है। यह स्थान गंगोत्री से १८ मील तथा ऋषिकेश से २६३ मील दूर है। गोमुख समुद्रतट से १००२० फुट ऊँचाई पर गंगा के दक्षिणी तट पर विद्यमान है। यहां गंगा की चौड़ाई ४४ फुट तथा गहराई ३ फुट है। इस तीर्थ में प्रमुख मन्दिर गंगा का है जिसमें आदि शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठापित गंगा की मूर्ति है। राजा भगीरथ, यमुना, सरस्वती तथा शंकराचार्य की मूर्तियां भी इस मन्दिर में है। विशालभगीरथ शिला यहॉ का आकर्षण-विषय ळै। इस मन्दिर की गंगामूर्ति तथा

---

१. गंगातीर्थो का विस्तृत वर्णन दृष्टव्य- कल्याण, तीर्थांक गीताप्रेस, गोरखपुर

छत्रादि स्वर्णनिर्मित है।

२.गंगोत्री- गंगोत्री का गंगा-मन्दिर प्रख्यात है। यह स्थान ऋषिकेश से १३१ मील आगे है। ऋषिकेश से देवप्रयाग (४४मील), टिहरी (३४मील), धरासू (२६मील), यमुनोत्री (४५ मील) उत्तरकाशी (१८मील) होते हुए गंगोत्री (७८ मील) पहुँचा जाता है। ऋषिकेश के देवप्रयाग -टिहरी होकर, नरेन्द्रनगर-टिहरी होकर तथा देहरादून-मंसूरी होकर गंगोत्री पहुँचने के तीन पृथूक मार्ग है।

३. केदारगंगा- गंगोत्री से नीचे केदारगंगा तथा भागीरथी का संगम है। इस स्थान से एक फलांग दूरी पर बड़ी ऊँचाई से गंगा शिव-लिंग के ऊपर गिरती है। इस स्थल को गौरी-कुण्ड भी कहते हैं।

४.हनुमान्-गंगा- ऋषिकेश से यमुनोत्री के मार्ग पर धरासू से ३७ मील आगे हनुमान चट्टी नामक स्थान है। यहाॅ हनुमान-गंगा है।

५. देवप्रयाग- ऋषिकेश से देवप्रयाग ४४ मील आगे है। यहाॅ अलकनन्दा (बदरीनाथ से आने वाली गंगाधारा) तथा भागीरथी (गंगोत्री की गंगाधारा) का संगम है। संगम से ऊपर बने मन्दिर में गंगा-यमुना की मूर्तियाॅ हैं ।

६. रुद्रप्रयाग- यहां केदारनाथ से आने वाली गंगा (मन्दाकिनी) तथा अलकनन्दा का संगम है। अलकनन्दा के दाहिने तट पर यहां प्रख्यात कोटीश्वर महादेव का मन्दिर है।

७. कर्णप्रयाग- यहां अलकनन्दा तथा गोचर की ओर आने वाली गंगा-प्रवाह पिण्डर-गंगा का संगम है। यह स्थान रुद्रप्रयाग-चमोली (लाल साॅगा) मार्ग पर १८ मील की दूरी पर है।

८. नन्दप्रयाग- कर्णप्रयाग-चमोली मार्ग पर ३० मील और उत्तर सोनला नामक स्थान के बाद नन्दप्रयाग है। यहाॅ अलकनन्दा तथा नन्दा नामक गंगाधारा का संगम है।

९. सोमप्रयाग- रुद्रप्रयाग-केदारनाथ मार्ग में ५१ मील की दूरी पर सोमद्वार है जो कि त्रियुगीनारायण से सवा तीन मील दूर है। यहां सोमनदी तथा मन्दाकिनी का संगम है।

१०. गरुडप्रयाग- केदारनाथ-बद्रीनाथ मार्ग पर ५८ मील दूर पीपल कोटी के आगे गरुडगंगा अलकनन्दा से मिलती है। यहां स्थापित मन्दिर में गरुड़ तथा गणेश की मूर्तियां हैं ।

११. विष्णुप्रयाग- केदार-बदरी मार्ग पर ही जोशी मठ से ३ मील आगे चलने पर विष्णु प्रयाग आता है। यहां विष्णु गंगा तथा अलकनन्दा का संगम है। यहॉ भगवान विष्णु का मन्दिर है। यह स्थान देवर्षि नारद की तपःस्थली के रुप में प्रसिद्ध है।

१२. केशवप्रयाग- केशवप्रयाग में अलकनन्दा तथा सरस्वती का संगम है। यह स्थान सत्पथ से बदरीनाथ के मार्ग में, वसुन्धरा से ढाई मील नीचे आने पर माणा गांव के समीप पड़ता है। यहॉ अलकनन्दा के तट पर एक शिला रखी हैं जिसे भीमशिला कहते हैं। इस शिला के पास ही दो जलधारायें गिरती हैं । इसे मान्सोद्भेद तीर्थ कहते हैं ।

केशवप्रयाग के परिसर में अनेक महत्वपूर्ण तीर्थ बिखरे हैं। सरस्वती-तट पर शम्याप्राश नामक तीर्थ हैं। माणा भारत का अन्तिम सीमान्त ग्राम है। इसके समीप ही व्यासगुफा है, जिसमें भगवान व्यास ने पुराणों की रचना की थी। इसके समीप ही गणेशगुफा है। पर्वतशिखर पर मुचकुन्दपुरा है जिसे कलापग्राम भी कहते हैं। कलाप ग्राम से अलकनन्दा को पारकर बदरीनाथ तक ढाई मील का सीधा मार्ग है।

नर पर्वत से चार धारायें गिरती हैं, जिन्हें पार करने पर शेषनेत्र नामक तीर्थ मिलता है। यहॉ एक शिला पर भगवान शेष के नेत्र अंकित है।

बदरीनाथ मन्दिर के पीछे पर्वत पर चढने पर चरणपादुका नामक तीर्थ है। उससे कुछ और ऊपर उर्वशीकुण्ड हैं। उर्वशी आसरा को भगवान नारायण ने अपनी जॉघ से उत्पन्न किया था, ऐसा पौराणिक साक्ष्य है। यह मार्ग अत्यन्त दुर्गम हैं। उर्वशीकुण्ड के आगे कूर्मतीर्थतैर्मिगलतीर्थ तथा नरनारायण आश्रम आते हैं। सीधी

चढ़ाई बढ़ने पर आगे सत्पथ तक पहुँचा जा सकता है।

१३. हरिप्रयाग- भागीरथी और हरिगंगा का संगम हरिप्रयाग तीर्थ के रुप में विख्यात है। इसे हरसिल भी कहा जाता है। उत्तरकाशी से गंगोत्री के मार्ग में ६० मील दूर स्थित झाला नामक स्थान है। झाला से हरसिल अथवा हरिप्रयाग दो मील दूर हैं।

१४. श्यामप्रयाग- झाला से आधा मील आगे ही श्याम गंगा तथा भागीरथी के संगम पर श्यामप्रयाग तीर्थ है।

१५. गुप्तप्रयाग- हरिप्रयाग से आधा मील की दूरी पर नीलगंगा एंव भागीरथी के संगम पर गुप्तप्रयाग अवस्थित हैं। यहां से श्यामप्रयाग पौने दो मील की दूरी पर स्थित है।

१६. जह्नुप्रयाग- उत्तरकाशी से गंगोत्री मार्ग पर ६७ मील की दूरी पर भैरवघाटी से दो मील पूर्व ही यह तीर्थ विद्यमान है। यहॉ जाड़गंगा (जाह्नवी) वेगपूर्वक भागीरथी से मिलती है, कहा जाता है कि इसी संगम-स्थान पर जह्नु मुनि का आश्रम था ।

१७. दुग्धप्रयाग- उपर्युक्त मार्ग पर ही उत्तरकाशी से ६३ मील दूर अणियापुल के बाद धराली नामक स्थान आता है। यहीं श्रीकण्ठ पर्वत से उत्तरी दूधगंगा भागीरथी से मिलती है। संगम पर शिवमन्दिर है। यहॉ से एक मील की दूरी पर मार्कण्डेय नामक तीर्थ है। शीतकाल में गंगोत्री-स्थित गंगाविग्रह की पूजा यहीं सम्पन्न होती है।

१८. चन्द्रप्रयाग- रुद्रप्रयाग से केदारनाथ मार्ग पर २२ मील आगे सोड़ी के आगे चन्द्रापुरी है। यहॉ चन्द्रा एवं मन्दाकिनी का संगम है।

१६. सूर्य प्रयाग- उपर्युक्त मार्ग में ही रुद्रप्रयाग से ५ मील आगे छत्तौली नामक स्थान है। भगवान सूर्य की तपःस्थली होने के कारण इसे सूर्यप्रयाग कहते हैं। यहां अलसतंरगिणी तथा मन्दाकिनी का संगम है।

२०. इन्द्रप्रयाग- ऋषिकेश-देवप्रयाग मार्ग में ३२ मील की दूरी पर कांडी के बाद व्यासगंगा एंव भागीरथी का संगम है। इसे इन्द्रप्रयाग कहते हैं। गंगा के उस पार व्यासघाट पर व्यास मन्दिर स्थित है।

२१. गंगानमनकुण्ड- (गंगाणी) धरासू से गंगाणी २१ मील दूर है। यहॉ यमुना के किनारे एक कुण्ड है जिसे गंगा का जल कहते हैं । पौराणिक मान्यता है कि यह कुण्ड गंगा ने स्वयं आसित मुनि के लिये प्रकट किया था ।

२२. बाणगंगा- (बैण्णवी देवी) जम्मू से ३१ मील आगे कटरा नामक स्थान है। कटरा से ३ मील की दूरी पर चरणपादुका तीर्थ है जहॉ माता वैष्णवी के चरण-चिन्ह हैं। वैष्णवी को आदिकुमारी भी कहते हैं। चरणपादुका के बाद गर्भवास नामक गुफा को पार करके हाथीमत्था की चढ़ाई, फिर ३ मील उत्तर कर ५० गज भीतर जाने पर गुफा में महाकाली, महालक्ष्मी तथा महासरस्वती की मूर्तियों के दर्शन होते है। इन मूर्तियों के चरणों में निरन्तर जल बहता रहता है जिसे बाणगंगा कहते हैं।

२३. शिवगंगा- नैनीताल जनपद के काशीपुर नगर से एक मील पूर्व में भीमशंकर नामक प्रख्यात ज्योर्तिलिंग है। यह स्थान उज्जनक कहा जाता है। मन्दिर के बाहर शिवगंगा नामक कुण्ड है।

२४. सरस्वती गंगा- इसे त्रियुगीनारायण तीर्थ कहा जाता है। रुद्रप्रयाग से

केदारनाथ मार्ग पर ४७ मील दूर रामपुर के वाद यह तीर्थ आता है। पर्वतशिखर पर नारायण मन्दिर है जहॉ सरस्वती गंगा नामक धारा से चार कुण्ड बन गये हैं- १. ब्रह्मकुण्ड, २. रुद्रकुण्ड, ३. विष्णुकुण्ड तथा ४. सरस्वती कुण्ड। रुद्रप्रयाग में स्नान, विष्णुकुण्ड में मार्जन, ब्रह्म० में आचमन तथा सरस्वती में तर्पण किया जाता है।

२५. मधुगंगा- केदारनाथ तीर्थ रुद्रप्रयाग से ६० मील तथा गंगोत्री से १२० मील दूर है। इसी तीर्थों में विद्यमान भृगुपंथ को मधुगंगा तीर्थ कहा जाता है।

२६. क्षीरगंगा- केदारनाथ में ही उपस्थित चोरावाड़ी ताल को क्षीरगंगा कहा जाता है।

२७. पातालगंगा- केदारनाथ से बदरीनाथ वाले मार्ग पर २८ मील की दूरी पर कोटि-माहेश्वरी के बाद तुंगनाथ नामक तीर्थस्थान है, जिसकी गणना 'पंचकेदार' में होती है। इस मन्दिर में शिवलिंग तथा अन्य कई मूर्तियां है। यहीं पर पातालगंगा नामक एक अत्यन्त शीतल जलधारा है। इसी नामक की एक अन्य धारा उपर्युक्त मार्ग पर ही टगॅणी नामक स्थान से तीन मील की दूरी पर है।

२८. नभगंगा- केदार-बदरी मार्ग पर ७२ मील दूर झड़कूला के बाद जोशीमठ (ज्योतिष्पीठ) आता है। बदरीनाथ की चलमूर्ति शीतकाल में यहीं समर्चित होती है। यहॉ एक अतिप्राचीन वृक्ष, ज्योतिश्वर नामक शिवमन्दिर तथा नभगंगा नामक जलधारा है।

२९. लक्ष्मणगंगा- उपर्युक्त मार्ग पर ही ८१ मील की दूरी पर पाण्डुकेश्वर नामक स्थन है। यहॉ से चार मील आगे गंगा पार करने पर लोकपाल सरोवर से निकली लक्ष्मण गंगा के दर्शन होते हैं।

३०. कांचनगंगा- बदरी-केदार मार्ग पर ही केदारनाथ से ८६ मील दूर रडंग पुल के बाद कांचनगंगा नामक गंगातीर्थ है। स्वर्णरेखा जैसी प्रतीत होने के कारण यहाँ गंगा का यह नामकरण किया गया है।

३१. अमरगंगा- काश्मीर राज्य में श्रीनगर से पहलगाँव जाने पर २७ मील और आगे अमरनाथ नामक प्रख्यात शिवतीर्थ है। समुद्रतट से १६ हजार फुट ऊँचे इस पर्वत पर प्रायः ६० फुट लम्बी, ३० फुट चौड़ी तथा १५ फुट ऊँची एक प्राकृतिक गुफा के नीचे ही अमरगंगा का प्रवाह है।

३२. असिगंगा- उत्तरकाशी से गंगोत्री के मार्ग पर ३ मील दूरी पर असिगंगा भागीरथी से मिलती है। असिगंगा संगम स्थान से १८ मील, दो मील की परिधि वाले डोंडी तालसे निकलती है।

३३. कर्णगंगा- टेहरी-गढ़वाल में कर्णप्रयाग से १८ मील पूर्व में महामृत्युंजय पर्वत है। यहाँ कर्णगंगा नदी से दो मील दण्डाकार चढ़ाई करने पर भगवान शिव के दर्शन होते हैं। यहीं से ईशानकोण में नन्दादेवी पर्वतशिखर दिखता है।

३४. गुप्तकाशी- रुद्रप्रयाग-केदारनाथ मार्ग पर ३१ मील दूर गुप्तकाशी तीर्थ है। मन्दाकिनी के उस पार ऊखीमठ है जो दानवराज बाणासुर की पुत्री उषा की वासस्थली के रुप में प्रसिद्ध है। गुप्तकाशी के मन्दिर में नन्दी पर आरुढ़ अर्धनारीश्वर शिव की सुन्दर मूर्ति है। यहाँ एक कुण्ड में दो जलधारायें गिरती हैं, जिन्हें गंगा-यमुना कहते हैं।

३५. बदरीनाथ- मन्दाकिनी के तट पर केदारनाथ (शिवलिंग) तथा अलकनन्दा के तट पर बदरीनाथ तीर्थ है। यह गंगातट पर स्थित भारत का पवित्रतम वैष्णवतीर्थ है। यहाँ पर स्थापित विष्णुप्रतिमा को बदरीनाथ कहा जाता है। बदरीनाथ धाम तथा उसके

आस-पास अनेक गंगा-तीर्थ है।

बदरीनाथ मन्दिर के सिंहद्वार से चार-चार सीढ़ी नीचे क्रमशः शंकराचार्य, आदिकेदार तथा तप्तकुण्ड (अग्नितीर्थ) आता है।

तप्तकुण्ड के नीचे पंचशिलातीर्थ है। इनके नाम हैं-१. गरुड़ शिल्प, २. नारद शिल्प, ३. मार्कण्डेय शिल्प,४.नृसिंह शिल्प ५. बाराहीशिला। ये सभी शिला में अपने अधिष्ठातृ व्यक्तियों के चरित्र से सम्बद्ध है।[१]

वाराही शिला के समीप अलकनन्दा में ही प्रह्लादकुण्ड, कर्मधारा तथा लक्ष्मीधारा नामक तीर्थ हैं।

तप्तकुण्ड से प्रायः ३०० गज आगे अलकनन्दा के तट पर ब्रह्मकपाल (कपालमोचन) तीर्थ है। इसके नीचे ब्रह्मा की तपःस्थली ब्रह्मकुण्ड तीर्थ है।

ब्रह्मकुण्ड से आगे जाने पर अलकनन्दा के मोड़ पर इन्द्रधारा अथवा इन्द्रपद तीर्थ है, जो देवराज इन्द्र की तपस्स्थली है।

इन्द्रधारा से आगे अलकनन्दा के उस पार बसे माणा गॉव में धर्म की पत्नी नर-नारायण ऋषियों की माता मूर्ति देवी का मन्दिर है ।

मूर्ति देवी मन्दिर से ४ मील दूर लक्ष्मीवन है, जहॉ लक्ष्मीधारा नामक छोटा प्रपात है।

आगे नारायणपर्वत का दुर्धर्ष रुप दिखता है। इस पर्वत से सैकड़ो जलध ारायें गिरती हैं। पुराणों के मन्तव्यानुसार यहॉ पंचधारा, द्वादशादित्य तथा चतुःस्त्रोत तीर्थ होने चाहिए, जिनकी पहचान अब अत्यन्त कठिन है ।

इसी तीर्थ में चक्रतीर्थ है, जिसमें एक जलधारा बहती है। इसके चार मील आगे ही सत्पथ (सतोपथ) है, जिसमें एक त्रिकोण सरोवर है। स्कन्दपुराण के साक्ष्यानुसार भगवान विष्णु प्रत्येक एकादशी को यहॉ स्नानार्थ आते हैं।

---

१. इन तीर्थों से सम्बद्ध पौराणिक आख्यानों के लिये द्रष्टव्य- कल्याण का तीर्थांक

सत्पथ के आगे का मार्ग अत्यन्त दुर्गम है। पर्याय नीचे एक वृत्ताकार कुण्ड है। जिसे सोमतीर्थ कहते हैं। यहाँ चन्द्रमा ने तप किया था ।

सोमतीर्थ के आगे सूर्यकुण्ड तथा विष्णु कुण्ड हैं। सत्पथ से पाण्डवों का स्वर्गारोहण शिखर दिखता है। अल्कापुरी शिखर से लौटते हुए मार्ग में वसुधारा मिलती है जो बदरीनाथ से पाँच मील की दूरी पर स्थित है।

वस्तुतः देवतात्मा हिमालय गंगामय है। अतएव हिमालय में स्थित समस्त गंगातीर्थों का विवरण दे पाना सर्वथा असम्भव कार्य है, ऊपर जिन तीर्थों का विवरण दिया गया है वे सभी हिमालय गोद में है, अब इस दुरुह सन्दर्भ को यहीं समाप्त किया जा रहा है और गंगा के मैदानी-प्रवाह में निर्मित तीर्थों की चर्चा की जा रही है।

३६. गंगाद्वार -हरद्वार, हरिद्वार, गंगाद्वार, कुशावर्त तथा मायापुरी सब एक ही तार्थ के पृथक नाम हैं। हरिद्वार की परिधि में मुख्यतः भीमगोडा, कनखल तथा ज्वालापुर के क्षेत्र आते हैं। पौराणिक साक्ष्यानुसार यहाँ गंगाद्वार (हर की पैड़ी) कुशावर्त, विल्वकेश्वर, नीलपर्वत तथा कनखल- ये पाँच तीर्थ हैं।[१] महा० के साक्ष्य से यहाँ कुशावर्त, बिल्ब, नीलगंगा तथा त्रिगंगा तीर्थ है। यह उल्लेखनीय तथ्य है कि ये सभी तीर्थ गंगा तट पर उपस्थित हैं-

गंगाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते ।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुर्नजन्म न विद्यते ।।[२]

गंगाद्वार का तीर्थों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रसंग में प्रस्तुत करना उचित होगा ।

१. ब्रह्मकुण्ड- (हर की पैड़ी) राजा श्वेत ने इसी स्थल पर ब्रह्मा की तपस्या की थी।

---

१. सविस्तर दृष्टव्य- पद्मपुराण, आदिखण्ड, २८,२७ से ३० तक ।
२. सविस्तर दृष्टव्य- महाभारत, वनपर्व ८४, २७ से ३० तक ।

इस कुण्ड में पतितपावनी गंगा उत्तर दिशा से प्रविष्ट होकर दक्षिण निकल जाती है। सायंकालीन आरती का दृश्य यहाँ देखने योग्य होता है। ब्रह्मकुण्ड परिसर में विष्णु चरणपादुका, मनसा देवी तथा गंगाधर महादेव के मन्दिर है।

ईसापूर्व प्रथम शती में शकारि विक्रमादित्य ने अपने बड़े भाई योगिराज भर्तृहरि की स्मृति में इस कुण्ड का निर्माण कराया तथा सीढ़ियाँ (पैड़ी) बनवाई तभी से इसका नामकरण हुआ- हरि की पैड़ी ।

२. गऊघाट- ब्रह्मघाट से दक्षिण की ओर यह घाट है। यहाँ गंगा स्नान करने से गोहत्या-जनित पाप का शमन हो जाता है।

३. कुशावर्त घाट- यह स्थान गऊघाट से दक्षिण ओर है। यहाँ भगवान दत्तात्रेय ने तपस्या की थी । वेगवती गंगा ने उनके कुश चीरादि को समेट लिया परन्तु तपस्या के प्रवाह से वे बहे नहीं, बल्कि आवर्त (भवॅर) में घूमने लगे। कुछ ने दत्तात्रेय में गंगा को नष्ट करना चाहा परन्तु देवों ने स्तुति द्वारा उन्हें प्रसन्न कर लिया, तभी से यह तीर्थ "कुशावर्त" नाम से प्रख्यात हुआ ।

४. नीलपर्वत- (नीलधारा) नील नामक एक शिवगण की तपःस्थली होने के कारण यह नीलपर्वत कहा जाता है। ब्रह्मकुण्ड में आने वाली गंगाधारा से पृथक जो मुख्य धारा इस पर्वत से सट कर बहती है, उसे नीलधारा कहते हैं। शिखर पर नीलेश्वर शिव तथा चण्डी देवी के मन्दिर हैं। चण्डीदेवी के मार्ग में ही काली मन्दिर, अंजनी तथा गौरीशंकर आदि अन्य अनेक तीर्थ हैं।

५. बिल्वकेश्वर- हरिद्वार के पश्चिमी भाग में बिल्व नामक पर्वत पर बिल्वकेश्वर शिव का मन्दिर है। मन्दिर के वाम भाग में गुफा में एक देवी-मूर्ति है। दोनों के बीच एक नदी है, जिसे शिवधारा कहते हैं, इसमें स्नान करने से मनुष्य शिवतुल्य हो

जाता है।[1]

६. कनखल – हर का पैड़ी कनखल से तीन मील है। नीलधारा तथा ब्रह्मकुण्ड वाली धारायें यहाँ एक हो गई हैं। यहाँ प्रजापति दक्ष ने यज्ञ किया था, दक्षेश्वर महादेव का मन्दिर तथा सतीकुण्ड यहाँ के प्रमुख तीर्थ हैं।

७. भीमगोड़ा– हर की पैड़ी से पर्वत की उपत्यका से होकर ऋषिकेश जाने वाली सड़क पर भीमगोड़ा स्थान है जहाँ भीम के घुटने से निर्मित कुण्ड प्रसिद्ध है। यह भीम की तपःस्थली है। इसी मार्ग पर गंगातट पर २४ अवतार मन्दिर है। भीमगोड़ा से एक मील आगे ही सप्तधारा (सप्तस्त्रोत अथवा सप्तसरोवर) है, जहाँ सप्तर्षियों ने तप किया था । सप्तर्षियों पर ही कृपालु होकर गंगा यहाँ सात धाराओं में विभक्त हो गई थीं। सप्तसरोवर मार्ग पर आजकल अनेक मठ, मन्दिर और धर्मालय स्थापित हुये हैं ।

गंगा द्वारा में स्थित उपतीर्थों के विवेचन के बाद अब पुनः प्रकृत-प्रसंग पर आना उचित होगा ।

३७. ऋषीकेश– भगवान ने राक्षसों का नाश कर यह पवित्र भूमि ऋषियों को दे दी थी, इसलिए इस तीर्थ को ऋषीकेश कहा गया है। इसका प्राचीन पौराणिक नाम कुब्जामृक है। यहाँ एक आमवृक्ष के नीचे भगवान ने कुब्ज (कुबडे) रैम्यमुनि को दर्शन दिया था। त्रिवेणीघाट का भरतमन्दिर, स्वर्गाश्रम, मुनि की रेती तथा लक्ष्मण झूला आदि यहाँ के अन्य प्राकर्षक स्थान हैं।

३८. शक्रावतार/शुकताल– हरिद्वार से ४० मील दक्षिणपूर्व तथा हस्तिनापुर से ३० मील उत्तर में शुकताल तीर्थ है। यहीं भगवान शुक ने महाराज परीक्षित को श्रीमद्भागवत सुनाया था ।

---

१. सविस्तर दृष्टव्य- स्कन्दपुराण, केदारखण्ड, अध्याय १०७

३९. धौम्यगंगा- पठानकोट से मडी होकर बसें कुल्लू जाती हैं, पठानकोट से कुल्लू १७५ मील है। यहाँ जगतसुख (अनास्व) गाँव में पांडवों द्वारा स्थापित बिम्बकेश्वर का मन्दिर है, जो धौम्य गंगा तट पर अवस्थित है।

४०. त्रिवेणी गंगा- सिन्ध प्रान्त में सक्खर नगर के पास श्री सिन्धु गंगा (सिन्धु नदी) की अतल प्रवाहपूर्ण धारा के मध्य स्थित पहाड़ी पर साधुवेला तीर्थ है। इस तीर्थ की अवतारण श्री बनखण्डी महाराज ने की थी ।

४२. बाणगंगा- (कुरुक्षेत्र) कुरुक्षेत्र रेलवे स्टेशन से एक मील की दूरी पर ब्रह्मसर एवं सन्धिहित सरोवर हैं। वहाँ से तीन मील दूर है बाणगंगा। कहा जाता है कि बाणशय्या पर पड़े भीष्म पितामह को प्यास लगने पर शस्त्रप्रहार से पृथ्वी को बेधकर अर्जुन ने इसे प्रकट किया था ।

४३. बूढ़ी गंगा -(हस्तिनापुर) मेरठ शहर से २१ मील की दूरी पर खतौली स्टेशन है। वहाँ से हस्तिनापुर कि लिए मार्ग मिलता है। पक्की सड़क से जाने पर मेरठ से नवाते तक पक्की और आगे कच्ची सड़क है। हस्तिनापुर से गंगा अब कई मील दूर हट गयी है। यहाँ गंगा की जो प्राचीन धारा अवशिष्ट है, उसे "बेड़" तथा "बूढी गंगा" कहते हैं कार्तिक पूर्णिमा को यहाँ विशाल मेला लगता है।

४४. मालती गंगा संगम- मुजफ्फर नगर शहर से मतावली घाट तक पक्की सड़क है। मतावली घाट के ठीक सामने ही (गंगा के दूसरे तट पर) रावली घाट है। बिजनौर से राबली घाट तक भी पक्की सड़क है। यहाँ मालती नदी एवं गंगा का संगम है, जनश्रुति के अनुसार विश्वामित्र एवं मेनका से शकुन्तला का जन्म यहीं हुआ था ।

४५.गंज- बिजनौर से ८ मील दूर गंगातट पर दारानगर है और वहाँ से मात्र आधे

मील की दूरी पर गंज है जहाँ कभी महाप्राज्ञ विदुर की कुटी थी। दारानगर से ८ मील दक्षिण गंगातट पर ही "सीता-बनी" नामक स्थान है। जहाँ एक सीताकुण्ड भी है।

४६. गढ़मुक्तेश्वर- (गंगामन्दिर) मेरठ से १६ मील दक्षिण-पूर्व गंगा के दाहिने तट पर यह स्थान है। यहाँ मुक्तेश्वर शिवमन्दिर, नृगकूप तथा समीपस्थ वन में झारखण्डेश्वर नामक प्राचीन शिवलिंग है। गंगा जी का मन्दिर सर्वाधिक प्राचीन है। गंगा के तीन और मन्दिर यहां हैं। कार्तिक पूर्णिमा को यहाँ विशाल मेला लगता है।

४७. पूठ- गढ़मुक्तेश्वर से ८ मील दक्षिण गंगा के दक्षिणी तट पर पूठ गाँव है, जहाँ महाकालेश्वर मन्दिर है। यहाँ सोमवती अमावस्या को मेला लगता है। पूठ से एक मील की दूरी पर "शंकरटीला" है। यहाँ भी एक शिवमन्दिर है।

४८. मांडू- पूठ से आठ मील की दूरी पर मांडू है। यहाँ प्राचीन काल में महर्षि माण्डव्य का आश्रम था । सम्प्रति यहाँ मण्डकेश्वर मन्दिर है।

४६. अहार- मांडू से ५ मील की दूरी पर गंगातट पर स्थित नगर है। यहीं जनमेजय ने नागयज्ञ किया था । गंगा दशहरा के अवसर पर यहाँ मेला लगता है। अहांर से दो मील की दूरी पर अवन्तिका देवी है।

५०. अनूपशहर- अहार से सात मील की दूरी पर गंगातट पा स्थित नगर है। नगर सीमा के आरम्भ में ही नर्मदेश्वर मन्दिर है। गंगातट पर अनेक साधु-आश्रम हैं। कार्तिकी पूर्णिमा एवं फाल्गुन में यहाँ मेले लगते हैं।

५१. कर्णवास- अनूपशहर से ८ मील दक्षिण कर्णवास है। इसका पुराना नाम "भृगुक्षेत्र" है कुन्ती द्वारा प्रवाहित कर्ण अधिरथ ने यहीं प्राप्त किया था। कल्याणी देवी

का मन्दिर, कर्णशिला तथा गंगातट पर भूतेश्वर महा-राजघाट नरौरा स्टेशन से कर्णवास जाया जाता है।

५२. राजघाट- कर्णवास से तीन मील दूर राजघाट है। यहाँ गंगा का एक प्राचीन मन्दिर है जहाँ अमावस्या तथा पूर्णिमा को मेला लगता है।

५३. बिहारघाट- राजघाट से मात्र १ मील दूर है। यह राजा नल का क्षेत्र है। यहाँ बिहारी जी तथा गायत्री देवी के मन्दिर हैं।

५४. रामघाट- बिहारघाट से ६ मील दूर गंगा के दक्षिणी तट पर रामघाट है यहाँ गंगा तथा अन्यान्य देवों के मन्दिर हैं। कार्तिक पूर्णिमा पर मेला लगता है।

५५. काम्पिल- बदायूँ जनपद में काम्पिल (काम्पिल्य) नामक प्राचीन नगर है। गंगा की धारा अब शहर से दूर है। यहाँ कपिल मुनि की कुटि तथा द्रौपदी कुण्ड है। रामेश्वर तथा कालेश्वर नामक प्राचीन मन्दिर है। काम्पिल से ५ मील दूर है- रुदमन, जहाँ पिण्डदान आदि किया जाता है। उससे भी चार मील आगे मुडौल (मण्डवन) है, जहाँ शिखण्डी को पुंस्त्व प्राप्त हुआ था ।

५६. बिठूर- कानपुर से १२ मील की दूरी पर मन्धना स्टेशन है। यहाँ से बिठूर तक रेलवे लाइन गई है। यहाँ गंगातट पर अनेक घाट हैं। वाल्मीकेश्वर शिव का मन्दिर है। घाट पर एक फुट ऊँची कील गड़ी है, इसे ब्रह्मकील कहते हैं। इसे सम्पूर्ण पृथ्वी का केन्द्र बिन्दु माना जाता है। बिठूर को "ब्रह्मव्रर्त" कहते हैं। यह ब्रह्मा का तपःस्थली के रुप में प्रसिद्ध है। बिठूर से ६ मील तथा गंगातट से डेढ़ मील दूर रुद्रपुर (छैलव) गाँव है, जो कभी महर्षि बाल्मीकि की जन्मभूमि थी। लवकुश का जन्म तथा रामायण की रचना यहीं हुई थी ।

५७. परियर- उन्नाव से १४ मील उत्तर-पश्चिम में गंगाघाट पर परियर है। यह लवकुश तथा राम की युद्धस्थली है। यहीं लव-कुश ने राम के अश्वमेघ-घोड़े को पकड़कर बॉध लिया था ।

५८. बक्सर- शिवराजपुर से ३मील दूर यह स्थान उन्नाव जनपद में है। यह राजा सुरथ तथा समाधि नामक वैश्य (मार्कण्डेय) की तप:स्थली है। यहॉ बागीश्वर का प्राचीन मन्दिर है। बकासुर द्वारा स्थापित महेश्वर मन्दिर भी यहीं है। बकासुर को कृष्ण ने मारा था । यहॉ गंगा दशहरा का मेला लगता है।

५९.आदमपुर- बक्सर से ८ मील पूर्व में निसगर नामक गॉव के समाने गंगा के दूसरे तट पर आदमपुर है, यहॉ ''ब्रह्मशिला'' है। कहा जाता है कि यहॉ ब्रह्मा ने तप किया था ।

६०. असनी- फतेहपुर रेलवे स्टेशन से ३ मील उत्तर में है। अश्विनी कुमारों की तप:स्थली मानी जाती है। यहॉ शंकर एवं भगवती दुर्गा के प्रायः ६० मन्दिर है। स्वामी अनंगबोधाश्रम द्वारा स्थापित आश्रम असनी में है। यह नगर पाण्डित्य का केन्द्र रहा है।

६१. मिटौरा- फतेहपुर से ही ८ मील उत्तर में गंगातट पर यह स्थान है। यहॉ गंगा उत्तरवाहिनी है। यह भृगु का क्षेत्र है। विजयादशमी एवं भादों की अमावस्या को यहॉ गंगास्नाान का मेला होता है।

६२. कड़ा- इलाहाबाद-कानपुर लाइन पर सिराथू स्टेशन से गंगातट पर स्थित कड़ा के लिए पक्की सड़क है। कड़ा एक ऐतिहासिक स्थान है। यहॉ गंगा के दक्षिणी तट पर शीतला का विख्यात मन्दिर है।

६३. सिंगरौर- प्रयाग जनपद की कुण्डा तहसील में गंगा के बायें तट पर श्रृंगवेरपुर है, जहॉ भगवान राम ने अपनी वनयात्रा में गंगापार की थी। अनेक देवी मन्दिर यहॉ विद्यमान हैं। महान विद्वान वैयूयाकरण नागेशभट्ट की साधनास्थली भी यहीं है।

६४. प्रयाग- वर्तमान इलाहाबाद जनपद में प्रयाग तीर्थ गंगा-यमुना एवं अदृश्य सरस्वती की संगमस्थली है। इसे त्रिवेणी-संगम एवं तीर्थराज भी कहते हैं। यहॉ के प्रमुख प्राचीन मन्दिरों में नागवासुकि, वेणीमाधव, मनकामेश्वर, बधॅवा महावीर तथा भरद्वाज मन्दिर हैं। मुगल बादशाह अकबर द्वारा बनवाये गये किले में अक्षयवट, समुद्रगुप्त का प्रशस्तिस्तम्भ तथा पातालपुरी मन्दिर आदि है। इसमें मकरवाहिनी गंगा तथा अन्यान्य देवों की मूर्तियां हैं।

प्रयाग-माहात्म्य शताध्यायी के अनुसार प्रयाग तीर्थ में १२ माधव हैं। चक्रमाधव तथा आदिमाधव अरैल में, अनन्तमाधव अक्षय वट के पास है। बिन्दुमाधव द्रौपदी घाट (अशोक नगर) के समीप स्थित है। संकष्टहर माधव प्रतिष्ठान (झूसी) में है। असिमाधव नागवासुकि के पास आदि वेणी माधव त्रिवेणी तट पर, तथा वेणी माधव दारागंज में स्थित है। इसीप्रकार शंखमाधव, गदामाधव, पद्‌ममाधव तथा मनोहरमाधव दारागंज में स्थित तथा प्रयाग विभिन्न अंचलों में है। प्रयाग के तीर्थों की गणना एक श्लोक में की गई है-

त्रिवेणी माधवं सोमं भरद्वाजं च बासुकिम् ।
वन्दे क्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थनायकूम् ।।

प्रयाग में पूर्व वाहिनी गंगा के दक्षिण तट पर शिवकोटि तीर्थ तथा संगम क्षेत्र के समीप अलोपशांकरी (ललिता देवी) सिद्धपीठ भी विशेष महत्व के हैं ।[1]

---

१. सविस्तर दृष्टव्य- महा० वनपर्व अ० ८५, मत्स्य० अ० १०५. कूर्म० अ० ३६, अग्नि० अ० १११, पदम० अ० ३४, गरुड़ अ० ३५ ।

६५. दुर्वास एंव सीतामढ़ी- इलाहाबाद-वाराणसी मार्ग पर क्रमशः सैदाबाद एवं समीगंज कस्बे से गंगातट तक जाने वाले मार्ग पर ये तीर्थ अवस्थित है। दुर्वासा की तपःस्थली को दुर्वासा कहते हैं। यहाँ दुर्वासा तथा अन्य देवों के मन्दिर हैं। इसी प्रकार तमसा एवं गंगा के प्राचीन संगम पर सीतामढ़ी है। जहाँ सीता निर्वासित की गई थीं ।यहाँ गंगातट पर अनेक मदिर हैं ।

६६. विन्ध्याचल- मिर्जापुर जनपद में गंगा के दायें तट पर भगवती विन्ध्यवासिनी का सिद्धपीठ चिरकाल से ही विश्रुत रहा है। कंस के हाथों से मुक्त होकर योगमाया ने इसी पर्वत पर निवास किया था। यह पर्वत तान्त्रिक साधनाओं के लिए भी विख्यात है।

६७. वाराणसी- उत्तरवाहिनी धनुषाकृति गंगा के बायें. तट पर विद्यमान काशी भारत की प्राचीनतम धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगरी रही है। पौराणिक मान्यता के अनुसार वरणा तथा असी नदियों के बीच बसी यह पुरी महाकाल के त्रिशूल पर स्थित होने के कारण तीनों लोकों से न्यारी हैं। इसे आनन्दकानन तथा अविमुक्त क्षेत्र भी कहते हैं। भगवान विश्वनाथ यहाँ के प्रमुख उपास्य देवता हैं । संकटमोचन, दुर्गाकुंड तथा बटुकभैरव के मन्दिर भी विशेष महत्व के हैं। गंगातट पर रमणीयघाट हैं जिनमें श्मशान स्थल मणिकर्णिका एवं स्नानार्थ दशाश्वमेध अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

६८. भृगुक्षेत्र- बलिया जनपद में गंगा के बांये तट पर फैला क्षेत्र भृगुक्षेत्र कहा जाता है। यहाँ महर्षि भृगु का मन्दिर है। भृगु के शिष्य दर्दरी ने वहाँ यह तप किया था, जिसकी स्मृति में आज भी वहाँ एक महीने का ददरी मेला लगता है।

६९. हरिहर क्षेत्र- गंगातट पा सोनपुर में एक विशाल मेला प्रतिवर्ष लगता है। इसे हरिहर क्षेत्र कहते हैं। पौराणिक मान्यता है कि गज-ग्राह युद्ध यहीं हुआ था ।

७०. **गंगासागर-** कलकत्ता के आगे, जहाँ गंगा सागर में लीन होती है, उसे "गंगासागर" तीर्थ कहते हैं। यहीं भगवान कपिल की नेत्राग्नि से राजा सगर के साठ हजार पुत्र भस्म हो गये थे। इन्हीं के उद्धरार्थ गंगा स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरी थीं। गांवों में आज भी कहा जाता है-

" सब तीरथ बार-बार, गंगासागर एक बार"

गंगा के प्रमुख संगम-

नदियों के संगम न केवल प्राकृतिक-सौन्दर्य से युक्त होने के कारण काव्य के वर्ण्य विषय में ग्रहण किये गये हैं-अपितु सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व होने के कारण भी साहित्य में इनका वर्णन प्रायः प्राप्त होता है। संगमों की पावन-स्थली तथा पवित्र जल के संस्पर्श से शरीर मुक्ति समझी जाती थी। तीर्थस्थान के रुप में संगमों से राज्याभिषेक के लिए जल भी लाया जाता था। वहाँ वर्ष के बड़े-बड़े मेले लगते हैं। महाकवि कालिदास ने भी अपने काव्य में कतिपय संगमों का सुन्दर वर्णन किया है, जिनका विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है-

गंगा-समुना का संगम-

रघुवंश महाकाव्य के १३ वें अध्याय के ५४ से ५६ में महाकवि कालिदास ने गंगा-यमुना के संगम का बड़ा ही सुन्दर चित्र खींचा है। गंगा के उजले और यमुना के सांवले जल के विविध सुन्दर उपमान प्रस्तुत कर संगम का मनोहारी-वर्णन किया गया है वहीं श्याम जल वाली यमुना से मिली गंगा की शुभ्रधारा इन्द्रनील मणियों से गुथी माला जैसी, कहीं नीले और श्वेत कमलों की माला जैसी, कहीं श्याम रंग के हंसों से मिले उजले रंग के राजहंसों की पंक्ति के समान, कहीं श्वेत चन्दन से चीती हुई पृथ्वी बीच में कालागार से चीती हुई सी, कहीं वृक्ष के नीचे उस चांदनी के समान प्रतीत होती है, जिसके बीच में पत्तों की छाया पड़ रही हो। कहीं गंगा की उजली धारा यमुना की सांवली धारा में मिल जाने पर शरद्कालीन उस शुभ्र मेघमाला जैसी प्रतीत

होती है, जिसके बीच में नीला आकाश झांक रहा हो। अन्त में महाकवि ने साक्षात् भगवान शंकर के उस गौर वर्ण शरीर में संगम धारा की कल्पना कर डाली जिसमें काले सर्प लिपटे रहते हैं।

इस गंगा-यमुना संगम के पवित्र जल में स्नान करने के महत्व का भी महाकवि ने उल्लेख किया हैं जो बिना तत्व ज्ञान के ही बन्धनों से मुक्ति देने वाला है-

समुद्रपत्नयोजिलनिधाते, पूतात्मनाभन्न, किसाभिषेकात् ।
तत्वावबोधेन बिनाऽपि, भूयस्तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः ।।

रघुवंश १३/५८

वर्तमान प्रयाग अथवा इलाहाबाद शहर गंगा-यमुना के ही संगम पर बसा है। प्राचीन-कालीन संगम की स्थिति वर्तमान संगम से भिन्न नहीं प्रतीत होती है। महाकवि के अनुसार प्रतिष्ठान पुरी चन्द्रवंशी उन राजा पुरुरवा की राजधानी भी जिनका राजप्रसाद यमुना संगम से विशेष गंगा के जल में प्रतिविम्बित रहता था ।

''एतद् भगवत्याः भगीरथयाः यमुनासंगम विशेष पावनेषु सलिललेष्ठात्मान मवलोकयतइव प्रतिष्ठानस्य शिखाभरणभूतं तस्य राजर्षे-भवनमुपस्थिते स्वः ।''

विक्रमोर्वशीयम्-२ अंक/६के बाद चित्रलेख पृ० १७७

गंगा शोण संगम-

गंगा शोण संगम का वर्णन रघुवंश महाकाव्य में प्राप्त होता है।

महाकवि ने गंगा-शोण के संगम का उल्लेख अप्रस्तुत रुप में उस प्रसंग में किया है जब राजकुमार अज इन्दुमती का स्वयंवर में वरण कर विदर्भ से लौट रहे थे। स्वयंबर से असन्तुष्ट विपक्षी राजाओं की सेनायें मिलकर आगे मार्ग में उनकों घेर कर इन्दुमती को छीनने बढ़ी। रामकुमार अज थोड़े से सचिव-योद्धाओं को इन्दुमती की रक्षार्थ छोड़कर स्वयं शत्रु-सेना को उसी प्रकार रोककर खड़े हो गये जैसे वर्षा में बढ़ी हुई तरंगों वाला शोण नदी का प्रवाह गंगा जी की धारा को रोक लेता है।

रघुवंश महाकाव्य का ७/३६ तस्याः सः..................इवोत्तरंग) श्लोक

दृष्टव्य है।

सहायक शोण नदी की बाढ़ से उसकी ऊँची तरंगों वाली धारा संगम में मुख्य नदी गंगा के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करती ही है। कवि ने संगम की मुख्य धारा के प्रवाह का स्वाभाविक वर्णन अप्रस्तुत रुप में ही कितना सुन्दर किया है।

प्राचीन पुष्पपुर (रघु० ६/२४) नगर जो मगध राज्य की राजधानी था ,गंगा-शोण के ही संगम पर बना था। पुष्पपुर ही इतिहास का सुप्रसिद्ध नगर पाटलिपुत्र था। जो १००० वर्ष पूर्व भी संगम से दूर नहीं स्थित था, किन्तु प्राचीन पाटलिपुत्र वर्तमान पटना से अभिन्न प्रतीत होता है। गंगा-शोण के वर्तमान संगम से हटकर पूर्व की ओर गंगा के दाहिने किनारे पर बसा है। अब गंगा और शोण नदी का संगम दानापुर तथा दरियागंज के समीप है, किन्तु सन् १७५० ए०डी० में मनेर के पास था जो वर्तमान गंगा-शोण- संगम से लगभग १० मील पूर्व (दीनापुर) में था ।
(ज्योलोजी आफ इण्डिया एण्ड वर्मा-डा० एम०एस० कृष्णन मद्रास १९५६ पेज ३२ ।)

गंगा सरयू संगम-

गंगा-सरयू संगम प्राचीन संगम वर्तमान संगम-स्थान से अधिक अन्तर पर नहीं है। वर्तमान संगम बलिया जिले के छपरा के समीप है। प्राचीन संगम भी इसी छपरा के समीप पश्चिम में रहा होगा, जहाँ कवि के अज ने अपना शरीर-त्याग किया था। वर्तमान दानापुर के पास ही गंगा-शोण संगम भी है। प्रतीत होता है कि गंगा-सोन का प्राचीन संगम (जो पाटलिपुत्र वर्तमान पटना के पास था) भी गंगा-सरयू के प्राचीन संगम से दूर नहीं होगा ।

महाकवि ने गंगा-सरयू नदी के संगम का उल्लेख उस प्रसंग में किया है तब अपनी प्रिया इन्दुमती के असहनीय विरह का अनुभव कर राजा अज ने अपना भौतिक शरीर इसी परम पावन संगम पर छोड़ा था तथा देव गति प्राप्त की थी ।

तीर्थे तोयव्यतिकरभवे जह्नुकन्यासरय्वो
देहत्यागादमरगणना लेख्यमासाद्यसद्यः ।

रघुवंश ८/९५

गंगा-प्रपात-

प्रायः नदी के शैशवकाल में उद्गम उच्च (पर्वतीय भू भाग) से लेकर पर्वतीय पाद-प्रदेश (जहॉ नदी मैदान में आती है, वहीं) तक कठोर कोमल चट्टानों के क्रम का प्रवाह तल पाकर प्रपात का जन्म होता है। इनका नदी की ऊपरी धारा से ही सम्बन्ध होता है, अतः नदी के साथ उसके पहाड़ी उद्गम क्षेत्र में कहीं भी निर्मित हो सकते हैं विषम चट्टानों के स्थायित्व के आधार पर इनके भी स्थायित्व को निर्धारित किया जा सकता है।

नाम से ही स्पष्ट है कि यह प्रपात गंगा नदी से सम्बन्धि है। अतः इसे गंगा के उद्गम क्षेत्र (गंगोत्री) से लेकर मैदानी भाग के मध्य हिमालय के पर्वतीय भाग में कहीं होना चाहिए। महाकवि ने भी गंगा प्रपात के उल्लेख में यह स्पष्ट किया है कि इसके तट पर भी घास उगी थी और यह हिमालय पर्वत की गुहा इसके समीप ही थी जिसमें नन्दिनी प्रपात के किनारे की घास चरती हुई चली गई थी।

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः ।
गंगा प्रपातान्तविरुढशष्यं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेशि ।

रधुवंश २/२६

अतः गंगा प्रपात भी वशिष्ठाश्रम से अधिक दूर नहीं होना चाहिए।

वसिष्ठाश्रम की स्थिति बाल्मीकि रामायण में अयोध्या के समीप ही प्रतीत होती है, किन्तु कवि इसकी स्थिति निर्धारण के सम्बन्ध में रामायण का अनुकरण नहीं करता। उसके अनुसार तो वसिष्ठाश्रम अयोध्या से पर्याप्त दूर प्रतीत होता है, क्योंकि रघुवंश १७३५ (यथाम्यर्वविधातारं प्रयतोपुत्रकाम्यया। तौ दम्पती वशिष्ठस्य गुरोर्जग्मतुराश्रम्।।) में सपत्नीक राजा दिलीप ने रथ से वशिष्ठाश्रम का प्रातः प्रस्थान किया था और सायंकाल वहॉ पहुँचे थे। (रघु० १/४८) महारानी को मार्ग के वन, उपवन, सरोवर आदि सुहावने दृश्यों के दिखाने में वे इतने रम गये थे कि जान न पाये कि कब लम्बा मार्ग निकल गया (रघु०१/४८) किन्तु इतने थोड़े समय में इतनी दूर की यात्रा करने के कारण उनके रथ के तीव्रगामी घोड़े भी थक गये थे। (रघु० १/४८) अतः अयोध्या से वशिष्ठाश्रम कम से

कम ४०-५० मील तो होगा ही। महाकवि के अनुसार यह आश्रम हिमालय पर्वतीय प्रदेश में ही स्थित प्रतीत होता है, जहॉं से गंगा प्रपात ४ या ५मील से अधिक दूर नहीं होगा । भागीरथी की सहायक भिल्लांगना नदी का उद्‌गम विसोन पर्वत के क्षेत्र में कवि के वसिष्ठाश्रम की स्थिति प्रतीत होती है, क्योंकि आज भी इस गणेशप्रयाग के समीपस्थ स्थान में वसिष्ठगुहा, वशिष्ठकुण्ड आदि उसके अवशेष रुप विद्यमान है। यह हिमालय की ही पावन तपोभूमि के दारखण्ड क्षेत्र के अन्तर्गत आता है-

(केदारखण्ड भौगोलिक सांस्कृतिक अध्ययन- डा०गो०प्र० हट्‌वाल पृष्ठ ६२)

अतः वर्तमान गणेशप्रयाग अथवा विसोन पर्वत क्षेत्र के समीप ही सम्भवतः दक्षिण की ओर ही गंगा-प्रपात कवि के समय में रहा होगा, किन्तु सम्प्रति इसका वह रुप आस-पास.कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता है।

क- प्रमुख बांध- गंगा के प्रमुख बांध तीन है- टिहरी,नरौरा तथा फरक्का।

योजना आयोग टिहरी-गढ़वाल जनपद में भागीरथी नदी पर बांध निर्माण की स्वीकृति दी है। यह बांध उत्तरप्रदेश के औद्योगीकरण में अपार विद्युत-ऊर्जा का सहयोग देना। यह विश्व में अपने ढ़ग का अप्रितिम बांध होगा। इसका शिलान्यास प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने दिसम्बर १९७३ ई० में किया था।

बुलन्दशहर में स्थित नरौरा बांध का निर्माण अभी हाल में ही हुआ है। इसका विशेष उपयोग सिंचाई के लिये है।

फरक्का बांध (पश्चिम बंगाल) परियोजना को कार्यान्वित करने का मुख्य लक्ष्य था हुगली नदी में जहाजों के आवागमन की सुविधा की व्यवस्था तथा कलकत्ता बन्दरगाह का संरक्षण तथा संवर्धन। कलकत्ता महानगर की जल वितरण व्यवस्था का सुधार भी इस बांध का एक प्रमुख लक्ष्य है। इसके अन्तर्गत (१) फरक्का में एक बांध का निर्माण (२) जंगीपुर में भागीरथी के पार एक बांध का निर्माण तथा (३) एक फीडर कैनाल का निर्माण किया गया है।

कई हजार एकड़ भूभाग की सिंचाई इस बांध से सम्भव होगी। इसके निर्माण से पूर्व बांगलादेश द्वारा उठाई गई आपत्तियों का भारत ने निराकरण कर दिया

था,परन्तु हाल में ही दोनों देशों ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं।

ख. प्रमुख गंगा नहरें- यद्यपि गंगा की मुख्य धारा से अपेक्षाकृत कम नहरें निकली हैं परन्तु यह सच है कि उत्तर भारत की सभी प्रमुख नहरें गंगा की सहायक नदियों से ही निकाली गई हैं।

हरिद्वार से कुछ किलोमीटर पूर्व ही सप्तसरोवर बांध बनाकर गंगा को मूलधारा से अलग कर दिया गया है। नहर के रूप में यही गंगा धारा हरिद्वार के ब्रह्मकुण्ड से होती हुई सहारनपुर की ओर मुड़ जाती है और पंजाब के विशाल क्षेत्र की सिंचाई करती है। इसी प्रकार अनेक लिफ्ट नहरें भी गंगा से निकाली गई हैं।

गंगा जल प्रदूषण की समस्या

संस्कृति के प्रभातबिन्दु, से ही गंगा भौतिक दृष्टि से उत्तरापथ को एवं धार्मिक दृष्टि से सम्पूर्ण भारत को लाभान्वित एवं अनुप्राणित करती आ रही हैं, परन्तु भौतिक समृद्धि की स्पर्धा में परस्पर जूझते साम्प्रतिक विश्व का प्रभाव भारत पर भी पड़ा। भूतपूर्व प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने भारत के औद्योगीकरण का जो स्वप्न देखा था उसके कारण गंगातटवर्ती अनेक महानगर गंगाजल को प्रदूषित करने के मूल स्त्रोत बन गये।

सैकड़ो महानगरों की सीवर लाइनें गंगा में विशाल मलराशि धकेलती रही है। गंगा तट पर पदे-पदे श्मसान घाट हैं जहाँ जलाये गये शवों की राख तथा हड्डियां गंगा जल की पवित्रता को चुनौती दे रही हैं।

टेहरी, सप्तसरोवर तथा नरौरा आदि विशाल बांधों के कारण गंगा 'स्तोकसलिला' बन गई है। उस अल्प जलराशि में पड़े महानगरों के कूड़े कचरे गंगा का मूलरूप ही नष्ट कर रहें हैं।

गंगा जल का प्रदूषण कितना बीभत्स है। इसका अनुभव कुछ आंकड़ो से किया जा सकता है। ऋषीकेश में ही औद्योगिक प्रदूषण एवं मानवीय गंदगी गंगा को जर्जर करती है जिससे कि स्वयं शुद्ध बने रहने की गंगा शक्ति क्षीण होने लगती है।

हिमालय से गंगासागर तक की अपनी २५२५ किलोमीटर की यात्रा में गंगा प्रतिवर्ष ४६८ अरब ७० करोड़ धनमीटर पानी प्राप्त करती है,परन्तु इस जलराशि में प्रतिवर्ष दो अरब नब्बे करोड़ घनमीटर गन्दगी भी मिलती है।

३०० टन लाशों की राख,१५००टन अधजला मांस तथा असंख्य मनुष्यों,पशुओं तथा विशेषकर जलप्रवाहित साधु-सन्यासियों-शिशुओं के शव गंगा को प्रदूषित करते हैं।

ऋषीकेश से गंगासागर तक लगभग १५०० छोटे और मध्यम दर्जे के तथा १३२ विशाल सरकारी-गैर-सरकारी कारखाने हैं जो अपना प्रदूषित जल और कूड़-कचरा निस्संकोच गंगा में धकेलते हैं। मात्र १२ कारखानों में प्रदूषण-शोधक समंत्र लगे हैं। गंगाजल की इस चिन्तनीय प्रदूषण-समस्या पर सर्वप्रथम दृष्टि गई भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की,परन्तु यह योजना कार्यान्वित करने से पूर्व वह स्वयं राष्ट्र की अखण्डता के लिये प्राणों से समर्पित हो गई ।

परन्तु भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री राजीव गान्धी ने पदभार ग्रहण करते ही अपने आमुख-भाषण में गंगाप्रदूषण-योजना की कार्यान्वित करने की घोषणा कर समूचे राष्ट्र की धर्मप्राण जनता को आह्लादित कर दिया।

<u>केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण सी.जी. ए.-</u>

५ जनवरी १६८४ को घोषित किये गये गंगा-सम्बन्धी कार्यक्रम के अनुसार केन्द्रीय सरकार ने १६ फरवरी ८५ को केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण गठित किया। इस प्राधिकरण की बैठक ७ अक्टूबर १६८५ को हुई जिसमें २६२ करोड़ रूपये के कार्यो की स्वीकृति दी गई। सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तराल में २४० करोड़ रूपये व्यय होंगे। शेष धनराशि बाद में खर्च की जायेगी। वाराणसी में गंग-प्रदूषण को समाप्त करने के लिये विशेष कार्यक्रम स्वीकार किया गया है।

गंगा प्रदूषण को समाप्त करने के लिये प्राधिकरण ने एक ग्यारहसूत्रीय कार्यक्रम तैयार किया है। योजना के प्रथम चरण में गंगातटवर्ती २६ क्लास वन् नगरों में जलप्रदूषण समाप्त करने के लिये कारगर उपाय लागू किये जायेंगे। एक लाख से ऊपर

की जनसंख्या वाले नगर इस योजना में सर्वप्रथम समाहित किये जायेगें।प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गणित यह प्राधिकरण (सेण्ट्रल गंगा अथारिटी.सी.जी.ए.) मूलतः तीन कार्य करेगा ।[१]

१. महानगरों में विद्यमान ट्रंक सीवरों का जीर्णोद्धार और उनके बहाव को गंगा में गिरने से रोकना ।

२. प्रदूषित जल के गंगागामी प्रवाहों को अन्य दिशा में मोड़ने के लिये अवरोधकों का निर्माण ।

३. नवीन'सीवेज ट्रीटमेण्ट प्लान्ट' की स्थापना तथा वर्तमान सीवेज पम्पिंग स्टेशनों का जीर्णोद्धार।

योजना में सहायता एवं सहयोग-

गंगाजल की पवित्रता न केवल भारत के लिये,बल्कि समूचे विश्व के वैज्ञानिकों के लिये स्पृहणीय विषय है। वैज्ञानिक परीक्षणों से सिद्ध है कि मात्र गंगाजल में ही कीड़े नहीं पड़ते। हिन्दी के यशस्वी नाटककार सेठ गोविन्ददास के घर में सौ वर्षो भी अधिक प्राचीन गंगा जल सुरक्षित है अक्षुण्ण रूप में ।

गंगाप्रदूषण-निरोध की योजना की सफलता निर्भर हैं। सम्बद्ध राज्यों एवं केन्द्रीय सरकार के समन्वित प्रयास पर । कुछ विदेशी सहयोग मिलने की भी आशा हैं। ब्रिटेन,फ्रांस,नीदरलैंड,अमेरिका,हालैण्ड तथा विश्व बैंक ने इस योजना को पूर्ण कराने में सक्रिय सहयोग दिया है।[२] इन देशों के अनेक वैज्ञानिक भारत आकर अपना अमूल्य विचार प्रस्तुत कर गये हैं।

उत्तर प्रदेश,बिहार तथा पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री श्री सेण्ट्रल गंगा

---

१. ग्यारहसूत्रीय कार्यक्रम का विस्तृत परिचय द्रष्टव्य-दि कम्पटीशन मास्टर सितम्बर ८५ अंक १ पृष्ठ १०४

2. द्रष्टव्य- गंगा की सफाई हेतु अधूरे कदम (कणाद) दैनिक जागरण,वाराणसी (२४ अगस्त ८५ अंक)

अथारिटी के सदस्य हैं। उत्तरप्रदेश शासन ने जलप्रदूषण के निवारणार्थ १२८ करोड़ रूपये की एक योजना स्वीकृत की हैं। जिसे गंगोत्री,हरिद्वार तथा वाराणसी में कार्यान्वित किया जायेगा ।

गंगा-प्रदूषण निवारण की जो ११ सूत्रीय योजना बनाई गई है उसका संक्षिप्त रूप इस प्रकार है-

१. वर्तमान ट्रंक सीवरों का जीर्णोद्धार ताकि इनका प्रवाह गंगा-जल में न मिले ।
२. प्रदूषित द्रवों एवं सीवरों को अन्य दिशा में मोड़ने के लिये अवरोधकों का निर्माण
३. वर्तमान सीवर पम्प स्टेशनों का जीवर्णोद्धार,शुद्धीकरण,संयंत्रो की स्थापना तथा नये सीवर-संयंत्रों की व्यवस्था ।
४. कूडे-कचरे को उर्वरक के रूप में परिवर्तित करने के लिये सीवल लाइनों के पास लाने की व्यवस्था।
५. पशुओं के मल एवं शवों के अवशेष को गंगाजल में मिलने से रोकने की वैकल्पिक व्यवस्था ।
६. कम खर्चे वाली स्वच्छीकरण योजना का गंगातट पर विस्तार ।
७. जलधारा की शुद्धि के लिये जीववैज्ञानिक संरक्षण योजना ।
८. नदी में प्रवाहित प्रदूषित वस्तुओं के अवरोधनार्थ सक्रिय परियोजना की स्थापना ।
९. श्मसान घाटों की पुनर्व्यवस्था ।
१०. प्रदूषण- सामग्री से ऊर्जा- प्राप्ति की तकनीकी विधि की स्थापना के लिये सक्रिय परियोजना ।
११. फैक्टरियों के प्रदूषण का नियंत्रण ।

इस प्रकार निश्चित है कि सी.जी. ए. परियोजना के प्रयासों से आगामी कुछ वर्षों में गंगा-प्रदूषण की समस्या का उचित समाधान प्राप्त हो सकेगा । सम्पूर्ण राष्ट्र की आस्थालु आंखे प्रधानमंत्री श्री राजीवगान्धी के इस महनीय प्रयास पर टिकी हैं

आज भी राष्ट्र के कोने-कोने से गंगा के प्रति समर्पित जीवन जीवने

वाले भक्तों की कमी नहीं है।[1] स्नान चाहे कुयें,बाबली,सरोवर या नल के पानी से ही क्यों न हो परन्तु स्नान करने से पूर्व '' हरगंगे'' ''जयगंगे'' आदि शब्द प्रत्येक आस्थालु हिन्दू के मुख से स्वतः निकल जाते हैं।

समीक्षा-

लौकिक संस्कृत साहित्य के परवर्ती अनेक महाकाव्यों में गंगा,गंगा प्रपातों,निर्झरों तथा उसकी सहायक नदियों, गंगा तटीय तीर्थों अथवा सहायक नदियों के संगमों का,विम्बकग्राही काव्यात्मक चित्रण प्राप्त होता है। इन महाकाव्यों में महाकवि कालिदास कृत रघुवंश कुमारसम्मभव,के अतिरिक्त भट्टि काव्य, हरविजय, शिशुपालवध ा,गंगावतरणम् आदि अनेक महाकव्य उल्लेखनीय हैं जिनमें गंगा का स्वरूप, गौरव एवं महात्म्य अत्यन्त सरस रूप में व्याख्यायित है। इन महाकाव्यों में कतिपय गंगा की प्रमुख सहायक नदियां भी वर्णित हैं। जिनमें यमुना,तमसा,सरयू,शोण (शोणभद्र) आदि उल्लेखनीय है।

कतिपय महाकाव्यों में इन नदियों के संगमों तथा गंगा तटीय विख्यात अर्थ एवं काम तीर्थ स्थलों,पुष्पपुर आदि का भी उल्लेख किया गया है। जिसमें गंगा-यमुना संगम ,स्थित प्रयाग जैसे धर्म तीर्थ सर्व प्रमुख है।

संक्षेप में,इन महाकाव्यों में गंगा महात्म्य वर्णन के माध्यम से राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता एवं अखण्डता निरूपण का श्लाधनीय साहित्यिक प्रयास हुआ है। अतः इन महाकाव्यों के गंगा वर्णन की प्रासंगिकता सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है।

---

१. नारद पुराण में गंगाभक्त का लक्षण इस प्रकार दिया गया है-

सन्तोषः परमैश्वर्य तत्वज्ञानं सुखात्मनाम् ।
विनयाचारसम्पत्तिः गंगाभक्तस्य जायते ।।

पंचम

अध्याय

संस्कृत स्तोत्र साहित्य में गंगा

पंचम अध्याय

संस्कृत स्त्रोत साहित्य में गंगा

संस्कृत गीति काव्य की ही संशक्त विधा स्त्रोत साहित्य है,जिसमें गंगा को देवी रूप में मानकर इनके माहात्म्य और गौरव का कीर्तन कर आन्तरिक श्रद्धामय भक्ति भावना व्यक्त की गई हैं। गंगा पर आधृत संस्कृत का स्त्रोत साहित्य अत्यन्त समृद्ध है पुराणकाल से लेकर अब तक अनेक अतिउत्तम रचना में गंगा विषयक स्त्रोतों की समुपलब्ध होती हैं जिनमें भाव विहवल होकर गंगा भक्त श्रद्धालुओं ने अपनी सरस स्त्रोत रचनाओं में गंगा के गौरव का गान किया हैं। प्रस्तुत गंगा स्त्रोतों से अबतक उपलब्ध होने वाली अनेक सुन्दर स्त्रोत रचनाओं से परिचित कराने का प्रयास किया जा रहा है।

पौराणिक स्त्रोत साहित्य-पुराणों में विभिन्न सन्दर्भों में गंगा-स्तवन वर्ण्य विषय के साथ समुपलब्ध होता है। यहां पौराणिक प्रमुख स्त्रोत्र रचनाओं का संक्षेप में समीक्षात्मक परिचय प्रस्तुत है-

विष्णुपदी स्त्रोतम्

१. श्रीमद्देवी भागवत, नवमस्कन्ध के १२ वें भगीरथकृत विष्णुपदी स्तोत्र (श्लोक १८ से ४२ तक) विद्यमान है।

ब्रह्मवैवर्तपुराण के प्रकृतिखण्ड में भी यही स्त्रोत मात्र एक श्लोक के परिवर्तन के साथ दिया गया है।

अथ विष्णुपदी स्त्रोतम् में भगवान विष्णु के पद से प्रादुर्भूत विष्णुपदी अथवा गंगा स्तवन सानुप्रासिक सरल छन्दों में किया गया है,जो इस प्रकार है-

शिवसंगीत सम्मुग्धश्रीकृष्णांगसमुद्भवाम् ।
राधांगद्रवसंयुक्तां तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।१८

गंगा के स्वरूप और गौरव के सन्दर्भ में स्त्रोतकार का कथन है-

यज्[illegible]म सृष्टेरादौ च गोलोके [illegible]ण्डले ।
सन्निधाने शंकरस्य तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।१६

गौपैर्गोपीभिराकीर्णे शुभे राधामहोत्सवे।

कार्तिकीपूर्णिमायांच तां गंगा प्रणामाम्यहम् ।।२०

गंगा स्वरूप तथा गंगा माहात्म्य भागीरथी के शब्दों में से स्त्रोतकार द्वारा इस प्रकार अभिव्यक्त है-

कोटियोजनविस्तीर्णा दैर्ध्येलक्षगुणा ततः।

समावृता या लोके तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।२१।।

षष्टिलक्षयोजनायास्ततो दैध्ये चतुर्गुणा ।

समावृता या बैकुण्ठे तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।२२।।

त्रिंशल्लक्षयोजनाया दैर्ध्ये पंचगुणाः ततः ।

आवृता ब्रह्मलोके या तां गंगां प्रणमाम्यहम्।।२३।।

त्रिंशल्लक्षयोजनाया दैर्ध्ये चतुर्गुणा ततः।

आवृता शिवलोके या तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।२४।।

लक्ष्योजन विस्तीर्णा दैर्ध्य सप्तगुणा ततः ।

आवृता ध्रुवलोके या तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।२५।।

लक्ष्ययोजन विस्तीर्णा दैर्ध्य पंचगुणा ततः ।

आवृता चन्द्रलोके या तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।२६।।

षष्टिसहस्त्र योजनाया दैर्ध्य दशगुणा ततः ।

आवृता सूर्यलोके या तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।२७।।

लक्ष्ययोजन विस्तीर्णा दैर्ध्ये पंचगुणा ततः ।
आवृता या तपोलोके तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।२८।।

सहस्त्रयोजनायामा दैर्ध्ये दशगुणा ततः ।
आवृता जनलोके या तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।२६।।

दशलक्षयोजनाया दैर्ध्य पंचगुणा ततः ।
आवृता या महालोके तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।३०।।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में इस श्लोक के स्थान पर दूसरा श्लोक इस प्रकार दिया ग्या है-

यस्याः प्रभावं अतुलः पुराणे च श्रुतौ श्रुतः।
या पुण्यदा पापहर्त्री तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।

सहस्त्रयोजनाया दैर्ध्ये शतगुणा ततः ।
आवृता य च कैलाशे तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।३१।।

शतयोजनविस्तीर्णा दैर्ध्य दशगुणाः ततः ।
मन्दाकिनी येन्द्रलोके तां गंगां प्रणमाम्यहम्।।३२।।

पाताले भोगवती चैव विस्तीर्णा दशयोजना ।
ततो दशगुणा दैर्ध्य तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।३३।।

क्रोशैकमात्रविस्तीर्णा ततः क्षीणा च कन्नचित्।
क्षितौ चालकनन्दायास्तां गंगां प्रणमाम्यहम् ।।३४।।

सत्ये या क्षीरवर्णा च भेतायायिन्दुसन्निभा ।
द्वापरे चन्दनाभा या तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।३५।।

जलप्रभा कलौ या च नान्यत्र पृथ्वीतले ।
स्वर्गे च नित्यक्षीराभा तां गंगा प्रणमाम्यहम् ।।३६।।

गंगा जल लाभ का फल पुराणकार ने इस प्रकार निरुपित किया है-

यन्तोयकणिकास्पर्शे पापिनां तानसम्भवः ।
ब्रह्महत्यादिकं पापं कोटिजन्मार्जितं दहेत् ।।३७।।

इत्येवं कथिता ब्रह्मन् ! गंगापद्यैकविंशतिः ।
स्तोत्ररुपंच परमं पापघ्नं पुण्यजीवनम् ।।३८।।

नित्यं यो हि पठेद् भक्त्या संपूज्य च सुरेश्वरीम् ।
सो श्वमेघफलं नित्यं लभते नात्र संशयः ।।३९।।

अपुत्रो लभते पुत्रं भार्याहीनो लभेतूस्त्रियम् ।
रोगात्प्रयुच्यते रोगी बन्धान्युक्तो भवेद् ध्रुवम् ।।४०।।

अस्पष्टकीर्तिः सुयशा मूर्खो भवति पंण्डितः ।
यः पठेत्प्रातरुत्थाय गंगास्तोत्रमिदं शुभम् ।।४१।।

शुभं भवेच्च दुःस्वप्ने गंगास्नानफलं लभेत् ।।४२।।

इस प्रकार उपर्युक्त सरस गंगा स्तोत्र में गंगा गौरव, दिव्य स्वरुप और अलौकिक महत्व पुराणकार ने प्रतिपादित किया है।

यह सुन्दर श्रीमद्देवी भागवत के नवम् स्कन्ध के द्वादशाध्याय में भगीरथकृत विष्णुपदी स्तोत्रं सर्वथा सहृदय हृदय द्रावक और गंगा भक्तों की मनोकामनाओं को परिपूर्ण करने वाला है। अतः संस्कृत स्तोत्र साहित्य में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

गंगास्तवः- परवर्ती प्रमुख पुराण कल्कि पुराण के तृतीयांश में गंगा पर आधृत यह स्तोत्र श्रेष्ठ काव्यात्मक वैशिष्ट्य के कारण अनायास ही काव्यप्रेमियों को आकृष्ट कर लेता है।

गंगास्तव में गंगा के प्राकृतिक स्वरुप, दिव्य उत्पत्ति तथा अद्भुत गौरव सूत-ऋषियों के माध्यम से इस प्रकार व्यजित है-

सूतउवाच-

श्रृणुध्वं मुनयः सर्वे गंगास्तवमनुत्तमम् ।
शोकमोहहरं पुंसामृषिभिः परिकीर्तितम् ।।१।।

ऋषय ऊचुः -

इयं सुरतंरगिणी भुवनवारिधेस्तारिणी ।
स्तुता हरिपदाम्बुजादुपगता जगत्संसदः ।।
सुमेरुशिश्वरामरप्रियजला मुलक्षालिनी ।
प्रसन्नवदना शुभा भवभयस्य विद्राविणी ।।२।।
भगीरथनानुगा सुरकरीन्द्रदर्पापहा ।
महेशमुकुटप्रभा गिरिशिरः पताका सिता ।।
सुरासुरनरोरगैरजभवाच्युतैः संस्तुता ।
विमुक्तिफलशालिनी कलुषनाशिनी राजते ।।३।।

उत्तम गुण रीति, छन्दोंऽलकार योजना, सुन्दर रस निष्पत्ति समन्वित-साहित्यिक-सौन्दर्य से मुक्त प्रस्तुत गंगास्तव कल्किपुराण के तृतीयांश में विद्यमान है। जो सर्वथा सहृदय संवेद्य है ।

पितामहकमण्डलुप्रभवमुक्तिबीजा लता ।
श्रुतिस्मृतिगणस्मृता द्विजकुलालवालावृता ।।
सुमेरुशिखराभिदानिपतिता त्रिलोकावृता ।
सुधर्मफलशाखिनी सुखपलाशिनी राजते।।४।।

चरद् विहगमालिनी सगरवंशमुक्तिपदा ।
मुनीन्द्रवरनन्दिनी दिवि गता च मन्दाकिनी ।।
सदा दुरित नाशिनी विमलवारिसन्दर्शन-
प्रणामगुणकीर्तनादिषु जगत्सुसंराजते ।।५।।

महाभिषसुतांगना हिमगिरीशकूटस्तना।
सफेनजलहासिनी सितमरालसंचारिणी ।।
चलल्लहरीसटकरा वरसरोजमालाधरा ।
रसोल्लसितगामिनी जलधिकामिनी राजते ।।६।।

क्वचिन्मुनिगणैः स्तुता क्वचिदनन्तसंपूजिता ।
क्वचित्कलकलस्वना क्वचिदधीरयादोगणा ।।
क्वचिद्रविकटोज्वला क्वचिदुरग्रपाताकुला ।
क्वचिज्जनविगाहिता जटाति भीष्ममाता सती ।।७।।

स एव कुशली जनः प्रणयतीह भागीरथी ।
स एव तपसां निधिर्जपति जाह्नवीमादरात् ।।
स एव पुरुषोत्तमः स्मरति साधु मन्दाकिनी ।
स एव विजयी प्रभुः सुरतरंगिणी सेवते ।।८।।

तवामलजलाचितं खगश्रृगालमीनक्षतं ।
चलल्लहरिलोलितं रुचिरतीरजं वालितम् ।।
कदा निजवपुर्युदा सुरनरोरगैः संस्तुतो ।
प्यहं त्रिपथगामिनी! प्रिययतीव मश्याम्यहो ।।९।।

त्वन्तीरे वसतिं तवामज्जले स्नानं तव प्रेक्षणे ।
त्वन्नामस्मरणं तवोदयकथासंलापनं पावनम् ।।
गंगे! मे तव सेवनैकनिपुणो प्यानंदितश्चाहतः ।
स्तुत्वा तूद्गतपातको भुविकदा शान्तश्चरिष्याम्यहम् ।।१०।।

इस्येतहषिभिः प्रोक्तं गंगास्तवनयुत्तरम् ।
स्वार्थ यशस्यमायुष्यं पठनाच्छ्रवणादपि ।।११।।

सर्वपापहरं पुंसां बलमायुर्विवर्धनम् ।
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने गंगासन्निध्यता भवेत् ।।१२।।

इत्येतद्भार्गवाख्यानं शुकदेवान्यया श्रुतम् ।
पठितं श्रावितं पात्र पुण्यं धन्यं यशस्करम् ।।१३।।

अवतारं महाविष्णोः कल्केः परमद्युतम् ।
पठतां श्रृण्वतां भक्त्या सर्वाशुभविनाशनम् ।।१४।।

इस प्रकार अपनी अनुपम रचनात्मक विशेषता से युक्त श्री कल्किपुराणेऽनुभागवते भविष्ये तृतीयांशे ऋषिकृतो'गंगास्तवः' सम्पूर्ण होकर श्रद्धालु सामाजिकों की गंगा विषयक भक्तिभावना को संवर्धित और सम्पोषित करता हैं। अतः गंगा पर आधृत स्तोत्र काव्यों में इसका महत्व अनुपेक्षणीय है।

गंगा स्तव -

गंगास्तवकाव्य कृति के प्रणेता पवनपुत्र श्री हनुमान हैं। रामायण में इनके विलक्षण, वैदुष्य, संस्कृतज्ञ, संगीतविद् और सरस भक्त शिरोमणि होने का परिचय प्राप्त होता है। अतः 'गंगा स्तवः' इनकी स्रग्धरा-उपजातिछन्दों में काव्य रचना प्रतीत होती है। इस सन्दर्भ में ज्ञातव्य है- कि उत्तर प्रदेश के जौनपुर जनपद में स्थित बादशाहपुर कस्बे के निवासी पण्डित रामनाथ शर्मा के घर अत्यन्त प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपि के रुप में यह कृति प० देवतादीन शर्मा(भदोही,वाराणसी) को मिली। निर्वाणध ारा नामक स्वोपज्ञ टीका के साथ उन्होनें संवत् १६६५ में इस ग्रन्थ को प्रकाशित किया ।

श्री हनुमानविरचित 'गंगास्तवः' एक उत्तम सरस काव्य रचना है, जिसमें गंगा की दिव्य उत्पत्ति, अनुपम स्वरुप एवं महत्व निरुपित है। यथा -

गंगा नंगारिसंगा सरिदुपरि परिक्रीडमाना विमाना -
दव्यादव्माजभाजः कलितकलितमोहारि मोहारिवारिः ।
यत्कूले कोलकोलाहलिनिहलिनिभेकेतकस्क्च्छकच्द -
च्छाया नायासिकायानुपवनपवनः सेवते देवतेन्द्रान् ।।१।।

सानुप्रास्निक इस स्रग्धरा छन्द में गंगा-गौरव अत्यन्त प्रभावी प्रतीत होता है-

मातमतिंग संगस्तिमिततिमितनूच्छारि विस्तारि वारि
ताराकारानुकारं तरलतरलकं चामरैश्चामरीणाम् ।।
शान्तस्वान्तः कदान्तः शमितशमितमः स्तोमदाहं मुदाहं
द्रक्ष्यामि क्षामितार्तिस्तव भवदवसंहारि शंकारिहारि ।।२

गंगा के प्रति श्री रामभक्त हनुमान का यह आत्म निवेदन कितना हृदय द्रावक है।

यन्नापन्नाशसूरे सुरधुनि! विधुनिस्पन्दनिस्पन्दधुर्ये ।
देहं ते हंसगेहं वहति वहतिमन्मानसं मानसेगात् ।।
किन्त्वेनस्तेनभावं भवि भविकमिदं विभ्रता दभ्रताप ।
व्यापत्तेनाप्रवातप्रसरसरणिनां तद् विधानां बुधानाम् ।।३

गंगा का माहत्म्य उसके अनेक अलौकिक गुणों के कारण इन प्रकार वर्णित है-

यैर्नोन्मलिन्मराली विमलकलमिलत्सारसी सारशीललं
दुश्शीलैर्देवि! देवैरकलितमकलित्वद्वपुर्गर्वपुष्टैः ।
तेषां द्वेषादिदोषाकलित कलितमः श्रृड्.खलाश्रृड्.खंलानां
छायामाया निकायादनणुगुणगुणाः स्वः स्तवन्ति!स्तवन्ति ।।४

नैसर्गिक विभिन्न उपादानों से गंगा का कैसा आकर्षण कवि द्वारा वर्णित है-

वातव्याधूतचूतावलिगालितरजोराजिविभृतिताभ्र।
भ्राम्यत्भृंगगलिकेलिह्ववलितकलतरानन्दनन्दं मुनीन्द्रम् ।
अम्भस्तम्बेरमालीमिलदमलमदारश्वविरतब्धरोधो।
रोधः कर्माविरोधप्रसरणाभसं प्रश्रयेणाश्रये ते ।।५।।

भागीरथी से भक्तिभाव पूर्ण श्री हनुमान का यह आत्म निवेदन कितना मार्मिक है-

सर्पर कर्पूर पूरोज्वल जलपटलप्राणिताप्राणिसार्थे
व्यर्थ व्यर्थ कृतार्थ कृतमपि सुकृतैर्मन्यते जन्म तेषाम्।
संसारासारकारासरणि परिणतैर्बन्धुर्भिबन्धुमुक्तै-
र्धीमुक्तैर्मुक्तिमूर्तिर्भगवति! भवती पैरदृष्टा न दृष्टा ।।६।।

लालित्यपूर्ण सानुप्रासिक सामासिक पदावली द्वारा गंगा गौरव इस प्रकार व्यक्त है-

लोल्लत्कल्लोलकोलाहलबहलकलोन्तालवाला विलासा-
नन्दद्बन्दारूवृन्दारककरनिंकरा संगदिंगद्विहगां ।
एषा दोषा प्येदोषा विकरणकरणारम्भसरम्भवर्ज्या
कुर्याद् धुयूर्या धुनीनां भविकमविकलं सुप्तभांभः प्रभावा ।।७

गंगा के प्रति सुकवि श्री हनुमान का आत्म निवेदन कितना कवित्वपूर्ण होने से मार्मिक है-

रामारामाभिरामं चतुरगतुरग तुंगमातंगसंगं
प्राज्यं भृाज्यं न राज्यं भगवति भवति प्रेयसे श्रेयरों वः ।
संवाहे वाग्मिदेवासुरसरसगिहा नन्दिते वन्दिते चेत्
सिद्वीनां सिद्धिसिन्धोर्न तव नतवंशं सन्निधानं निधानम् ।।८।।

प्राणि पालिका, पतित पावनी, पापनाशिनी गंगा की महिमा अनुपम ही है, जैसा कि कवि का कथन है-

गर्भाविर्भाविभूयः परिमलपरमालम्बरोलम्बलीलै-
र्वाचालैः पुष्पजालैः पृभुविटपितटीर्विभती शुभ्रतीरा
ध्वस्ताधिव्याधिबाधा विधुरविधुसुधा मेदुरा मेदुराशा
पापान्नः पातु-गौरीगुरुगिरिशिरसि स्वः सवन्ती सवन्ती ।।६।।

अधोलिखित उपजाति वृत्त में श्री राम भक्त हनुमान की भक्तिभावना कितनी प्रभावी रुप में व्यक्त हैं-

वरं त्वदीये पुतिने पुलिन्दाः
मन्दाकिनी! क्षालितपापकन्दाः ।
मन्दारमालामल मौलिमाला
न लोकपाला न च भूमिपालाः ।।१०।।

इस स्रग्धरा वृत्त के माध्यम से अपने भाव सुमन गंगा के प्रति भक्त हनुमान ने इस प्रकार व्यक्त किये हैं-

ईड्येड्याया जमायाः स्तवमिममनसा दिव्यधुन्याधुनीनां
धुर्याया रामरामामलपदकमलालिर्मरुज्जोव्यधां तम् ।
भेदं भेदं ह्यभेद्य कपरिधिममृतं स्तव्ययन्तः सदन्तः
अभ्यस्यान्ते सनान्ता शयनसदनतामाति सादालयं तम् ।।११।।

उपर्युक्त रचना-गंगास्तवः के प्रणेता का परिचय हमें इस प्रकार प्राप्त होत है।

इति श्री रावणकुलसंहार मूर्तिचरण पाथोज

षटपद् हनुमद्धिरचितः गंगास्तवः समाप्तिगात्

जिससे इसके रचनाकार श्री रामभक्त हनुमान जी सिद्ध होते हैं । अनेक अनुसंधानों में श्री हनुमान के कवि, नाटककार, संगीतशास्त्री, धर्मशास्त्री होने का परिचय हाल में ही मिला है।

गंगा सहस्त्रनाम स्तोत्रम्

पुराणों में प्रमुख स्कन्द पुराण,काशीखण्ड के पूर्वार्ध में महर्षि अगस्त्य एवं स्कन्द के संवाद-रूप यह सहस्रनाम-स्तोत्र विद्यमान हैं। सम्पूर्ण स्तोत्र में कुल २१० श्लोक हैं। जिसमें गंगा का सहस्रनाम रुपात्मक सरस संकीर्तन किया गया हैं।

गंगासहस्त्रनामस्तोत्रम् में पुराणकार ने गंगा के अद्‌भुत सहस्त्र स्वरूपात्मक स्वभाव को अभिव्यक्त किया हैं, जिसमें पर्याप्त सरसता तथा प्रभावोत्पादकता विद्यमान है। अगस्त्य और स्कन्द संवाद में यह स्त्रोत इस प्रकार प्राप्त होता है-

अगस्त्य उवाच-

बिना स्नानेन गंगाया नृणां जन्म निरर्थकम् ।
उपायान्तरमस्त्मनद् येन स्नानफलं लभेत् ।।१।।
अशक्तानां च पंगूनामालस्योपहतात्मनाम् ।
दूरदेशान्तरस्थानां गंगास्नानं कथें भवेत् ।।२।।
दानं वाथ व्रतं वाथ मंत्रः स्तोत्रं जपो तवा।
तीर्थान्तरभिषेको वा देवतोपासनं तु वा ।।३।।
यद्यस्ति किंचित् षड्वक्त्र! गंगास्नानफलप्रदम् ।
विद्यानान्तरमात्रेण तद् वद प्रणताय में ।।४

त्वत्तो न वेद स्कन्दान्यो गंगागर्भसमुद्भव।
परं स्वर्गतंरगिण्या महिमानं महामते ।।५

स्कन्द उवाच-

सन्ति पुण्यजलानीहि सरासि सरितो मुने।
स्थाने स्थाने च तीर्थानि जितात्याध्युषितानि च ।।६ ।।
दृष्टप्रत्ययकारीणि महामहिमभांज्यापि ।
परं स्वर्गतरंगिण्याः कोट्यंशो पि न तत्र हि ७।।
अनेनैवानुमानेन बुध्यस्व कलशोद्भव ।
दध्रे गंगोत्तमांगेन देवदेवेन शम्भुना ।।८।
स्नानकाले न्यतीर्थेषु जप्यते जाह्नवी जनैः
बिना विष्णुपदीं क्वान्यत् समर्थमहामोचने ९।।
गंगास्नानफलं ब्रह्मन् गंगायामेव लभ्यते।
यथा द्राक्षाफलस्वादो द्राक्षायमिव नान्यतः।।१० ।।
अस्त्युपाय इहत्वेकः स्याद् येनाविकलं फलम् ।
स्नानस्य देवसरितो महागुह्यतयो मुने ।।११।
शिवभक्ताय शान्ताय विष्णुभक्तिपराय च
श्रद्धालवे त्वास्तिकाय गर्भवासमुमुक्षवे।।१२
कथनीयमं न चान्यस्य कस्यचित् केनचित् क्वचित् ।
इदं रहस्यं परमं महामातकनाशनम् ।।१३
महाश्रेयस्करं पुण्यं मनोरथकरं परम् ।
धुनदीप्रीतिजनकं शिवसन्तोषसन्तति ।।१४
नाम्नां सहत्रं गंगायाः स्तवराजेषु शोभनम्
जप्यानां परमं जप्यं वेदोपनिषदा समम् ।।१५
जपनीयं प्रयत्नेन मौनिना वाचकं बिना ।
शुचिस्थानेषु शुचिना सुस्पष्टाक्षरमेव च ।।१६ ।।

स्कन्द उवाच-:

ऊं नमो गंगादेव्यै

(श्लोक संख्या १७ से १६७ १/२ तक गंगा के एक सहस्त्र नामों की परिगणना)

इति नामसहस्त्रं हि गंगायाः कलशोद्‌भव ।
कीर्तयित्वा नर सम्यग् गंगास्नान फलं लभेत् ।। १६८

(श्लोक संख्या १६६ से २०८ तक गंगा एवं गंगा के
सहस्त्रनाम-स्त्रोत की फलश्रुति की चर्चा)

एतत्स्तोत्रवरं रम्यं पुरा प्रोक्तं पिनाकिना ।
विष्णवे निजभक्ताय मुक्तिबीजाक्षरास्पदम् ।।२०६
गंगा स्नानप्रतिनिधिः स्तोत्रमेतन्मयेरितम् ।
सिस्नासुजह्निवी तस्मादेतत् स्तोत्र जपत्सुधीः ।।२१०

इस प्रकार यह श्री स्कन्द पुराण के काशीखण्ड पूर्वाध में श्री गंगासहस्त्रनामस्त्रोत्र सम्पूर्णता प्राप्त कर श्रद्धालु गंगा भक्तों की भक्तिभावना सम्वर्धित कर अन्तः करण को कालुष्य हीन करने में सर्वथा समर्थ है।

गंगा पुण्य नामानि-:

मत्स्य पुराण में गंगा के अनेक पावन नाम स्तोत्रात्मक शैली में विद्यमान है जिनसे गंगा के स्वभाव स्वरूप का सम्यक् परिचय प्राप्त होता है।

गंगा पुण्यनामानि- पुराणकार ने अधोलिखित पांच श्लोकों में गंगा से प्रचलित नाम निर्दिष्ट किये हैं-

विष्णोः पादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुदेवता ।
त्राहि नस्त्वेनसस्तरूताम् आजन्ममरणान्तिकात् ।।१।।
तिस्तः कोट्यो अर्धकोटी च तीर्थानां वापुरब्रवती ।
दिवि भम्यन्तरिक्षे च तानि ते संति जाह्नवि ।।२।।

नन्दिनीत्येव ते नाम देवेषु नलिनीति च ।

दक्षा पृथ्वी च विहगा विश्वकाया मृता शिवा ।।३।।

विद्याधरी सुप्रशान्ता तथा विश्वप्रसादिनी ।

क्षेमा च जाह्नवी चैव शान्ता शान्तिप्रदायिनी ।।४।।

एतानि पुण्यनामानि स्नानकाले प्रकीर्तयेत् ।

भवेत् सन्निहिता तत्र गंगा त्रिपथगामिनी।।५।।

उपर्युक्त सरल श्लोकों में मत्स्यपुराणोक्त गंगा पुण्यनामानि गंगा भक्तों को परिचयार्थ बताये गये हैं, जिनको सुनकर लोक मानस गंगा के गौरव,स्वरूप और माहत्म्य से पूर्ण परिचित हो सके तथा अपने अन्तः करण को गंगा जल सा निर्मल और पावन बना सके।

गंगाष्टकम् –

महर्षि बाल्मीकि के पहले जो भी संस्कृत साहित्य है, वह वैदिक व्याकरण पर आधारित है। महर्षि वाल्मीकि वास्तव में लौकिक संस्कृत के आदि कवि थे। एकबार वे तमसा नदी में स्नान के लिये जा रहे थे। तभी एक निषाद् ने क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक का बध कर दिया, उसके वियोग में नर पक्षी मादा क्रोंच पक्षी के लिये विलाप करने लगी। उस विलाप को सुनकर महर्षि बाल्मीकि का हृदय करूणा से द्रवित हो गया और उनके मुख से सहसा निम्नांकित श्लोक निकल पड़ा।

"मा निषाद्, प्रतिष्ठात्वां करूण शाश्वती समाः,

एदक्रौंञ्च मिथुनादेकम् अवधी त्वामोहितम् ।"

वास्तव में यह लौकिक साहित्य का प्रथम श्लोक है तभी से लौकिक संस्कृत का व्यापक प्रचलन प्रारम्भ हो गया। महर्षि बाल्मीकि द्वारा रचित रामायण संस्कृत साहित्य का एक अमर ग्रन्थ हैं, जिसे लौकिक संस्कृत साहित्य के प्रथम काव्य की संज्ञा दी जाती है। महर्षि ने देवापगा गंगा के सम्बन्ध में भी मनोरम छन्द लिखे हैं। इन छन्दों

की संख्या ६ है।

"मातः शैलसुतासपत्नि! वसुधाश्रंगारहारावलि,

स्वर्गारोहणवैजयन्ति । भवती भागीरथि । प्रार्थये।

त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिवत स्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत -

स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः ।।"

गंगा माता की स्तुति करते हुये महर्षि कहते है कि हे माता गंगा! तुम पृथ्वी की श्रंगार माला,शैलसुता पार्वती की सपत्नि और स्वर्ग आरोहन के लिय वैजयन्ती पताका के समान हो। मेरी तुमसे यह प्रार्थना है कि तुम्हारे पावन तट पर निवास करते हुये,तुम्हारे जल का पान करते हुये और तुम्हारी पावन लहरों में तरंगित होते हुये,तुम्हारे नाम का स्मरण करते हुये और तुम्हारी ओर ही निरन्तर दृष्टि लगाये हुये मेरे शरीर का अन्त हो।

" त्वत्तीरे तरूकोटरान्तर्गतो गंगे! विहंगे वरं,

त्वन्नीरे नरकानतकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः ।

नैवान्यत्र मदान्धसिन्धुघटासङ्घट्टघण्टारण-

त्कारत्रस्तसमस्त वैरि वनिता लब्ध स्तुति र्भूपर्तिः।।२।।

कवि गंगा माता के तट पर निवास करना अपने जीवन का परम सौभाग्य मानता है कि तुम्हारे किनारे पर स्थित वृक्षों के कोटरो में पक्षी होकर निवास करना अथवा तुम्हारे पवित्र जल में मछली या कच्छप होकर जन्म लेना बहुत अच्छा है परन्तु विशल राज्य का अधिपति होना अच्छा नहीं है। लगभग इसी प्रकार की विचार धारा भक्त कवि रसखान ने ब्रज निवास के सम्बन्ध में प्रवाहित की है।

" उक्षा पक्षी तुरग उरगः कोऽपि वा वारणो वा,

वारीणः स्यां जननमरणक्लेशदुःखासहिष्णुः ।

न त्वन्यत्र प्रविरलरणत्कङ्कणकाणमिश्रं,

वारस्त्रीभिश्चमरमरूता वीजितो भूमिपालः ।।३।।

गंगा तट पर निवास करना कवि को सर्वाधिक प्रिय हैं। कवि कहता है कि वह अपने आप स्वयं अपने निकट रहने वाला पशु,पक्षी,घोड़ा,सर्प अथवा हाथी हो जावे। यह तो उचित है, परन्तु उसे ऐसा राजा बनना अच्छा नहीं लगेगा, जो तुम्हारे पावन तट से दूर रहता हो भले ही वासना के प्रति वाराङ्गनाये मन्द मन्द झंकार करते हुये ककंणो की मधुर ध्वनि से युक्त चमर डुला रही है।

'' काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कविलतं गोमायुभिर्लुण्ठितं,
स्त्रोतोभिश्चलितं तरान्दुलुलितं बीचीभिरान्दोलितम् ।
दिव्यस्त्री करचारूचामरमरूतसजीव्यमानः कदा,
द्रक्ष्येऽलं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वं वपुः ।।४।।

कवि को बुरी से बुरी स्थिति में भी गंगा के निकट रहना अत्याधिक प्रिय है। वह कहता हैं कि मरने के पश्चात देवांगनाओं के कर कमलों में सुशोभित सुन्दर चमरो की वायु से सेवित मैं अपने मरे हुये शरीर को काको से कुरेदा जाता हुआ,कुत्तों से भक्षित होता हुआ, गीदड़ो से लुण्ठित होता हुआ, तुम्हारी धारा में पड़कर बहता हुआ,कभी किनारे के स्वल्प जल में हिलता हुआ फिर लहरों से आन्दोलित होता हुआ कब देखूगा।

'' अभिनवविसवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
मर्दनमथनमौलेर्मालती पुष्पमाला ।
जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः ।
क्षपित कलिकलंका जाह्नवी नः पुनातु ।।५।।

कवि के कामना है कि जो पावन नदी भगवान विष्णु के चरण कमल का नबीन कमल नाल है तथा भगवान शंकर के ललाट की मालती माला है, वह मोक्ष लक्ष्मी की विलक्षण विजय पताका जय को प्राप्त हो। कलियुग के कलंक को धोने के लिये वह देव नदी गंगा हमें पवित्र करे।

'' एतत्तालतमालसालसरल व्यालोलवल्लीलता-
च्छन्नं सूर्यकरप्रतापरहितं शरवेन्दुकुन्दोज्जवलम् ।

गन्धर्वामर सिद्ध किन्नरवधुत्तुंग स्तनास्फालितं,

स्न्नानाय प्रतिवासरं भवतु मे गंगा जलं निर्मलम् ।।६।।

कवि की आंकाक्षा है कि वह प्रतिदिन गंगाजल में स्नान करने का सौभाग्य प्राप्त करें अतः वह कहता है कि जो जल,ताल,तमाल,साल,सरल तथा चचंल बल्लरी तथा लताओं से ढ़का हुआ है,सूर्य किरणों के ताप से रहित हैं,शंख कुन्द और चन्द्र के समान उज्जवल वर्णमाला हैं तथा गन्धर्व, देवता,सिद्ध और किन्नरों की कमिनियों के सुन्दर पत्नियों की पयोधरों से टकराता हुआ है वह अत्यन्त निर्मल जल प्रतिदिन मुझे स्नान के लिये उपलब्ध हो।

" गांङ्ग वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्,

त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम् ।।"

जन्म सुतः गंगा की बन्दना करते हुये कवि कहता है कि जो जल भगवान विष्णु के चरणों से उत्पन्न हुआ है भगवान शंकर के सिर पर विराजमान हैं सम्पूर्ण पापों को नष्ट करने वाला है, वह मुझे पवित्र कर दे।

" पापापहारि दुरितारि तरंगधारि,

शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि ।

झकांरकारि हरिपादरजोउपहारि,

गांङ्ग पुनातु सततं शुभकारि वारि ।।८।।

गंगा के पावन जल का वर्णन करते हुये महर्षि बाल्मीकि कहते हैं कि पाप विनाशक,दुष्कर्मों का शत्रु,तरंगमय,शैलखण्डो पर प्रवाहित होने वाला हिमालय की गुफाओ को विदीर्ण करने में समर्थ,मधुर कल- कल ध्वनि से मुक्त और भगवान विष्णु की चरण रज को धोने वाला है।वह पवित्र गंगा जल मुझे भी पवित्र कर दें

" गंगाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते,

बाल्मीकिना विरचितं शुभदं मनुष्यः ।

प्रक्षाल्य गात्रकलिकल्मषपंङ्कमाशु,

मोक्षं लभेत्पतति नैव नरो भवाब्धौ।।"

जो व्यक्ति महार्षि बाल्मीकि द्वारा रचित इस कल्याण प्रद गंगाष्टक को ध्यापपूर्वक पड़ता है वह अपने कल्मष रूपी कीचड़ को धोकर शीघ्र ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है और फिर संसार समुद्र में उसे नहीं गिरना पड़ता है। गंगा जल की महिमा वास्तव में विलक्षण है।

परम्परा यह स्त्रोत महर्षि बाल्मीकि द्वारा प्रणीत माना जाता है जो कि यह बाल्मीकि रामायण में उपलब्ध नहीं हैं अतः सम्भव है कि यह महर्षि बाल्मीकि द्वारा स्फुट रूप में लिखा गया हो।

गंगाष्टकम् -

उज्जयिनी-नरेश शकारि विक्रमादित्य (ई०पू०) प्रथमशती के राजकवि कालिदास काव्यगरिमा के उस शिखर पर पहुंच गये कि परवर्ती युग में प्रत्येक श्रेष्ठ कवि "कालिदास" उपाधि से अलंकृत होने लगा। दो गंगा स्त्रोतों का प्रणेता कवि कालिदास सम्भवतः उन्हीं में से कोई एक हैं।

कालिदसकृत प्रथम गंगाष्टकम् स्त्रोत कालिदास की लोकप्रियता से अनुप्राणित कालिदास नामधारी परवर्ती किसी कवि के इस सानुप्रासिक शार्दूलविक्रीडित छन्द युक्त सरस स्त्रोत में गंगा गौरव इस प्रकार व्यंजित हैं -

कत्पक्षीणि कटोटयः कंति ककि द्वीपिद्विपानां त्वचः
काकोलाः कति पन्नगाः कति सुधाधाम्नश्च खण्डाः कति ।
किंच त्वं च कति त्रिलोकजनति ! त्वद्‌वारिपूरोदये
गज्जज्जन्तुकदम्बकं समुदयत्येकैकमादाय यत् ।।१।।
देवि त्वत्पुत्रिनांगणे स्थितिजुषां निर्मानिनांज्ञानिनां
स्वल्पाहार निबद्धशुद्धवपुषां ताणं गृहं श्रेयसे।
नान्यत्र क्षितिमण्डलेश्वरशतैः संरक्षितो भूपतेः
प्रासादो त्रलनागणैरधिगतो भोगीन्द्रभोगोन्न्तः।।२।।
तत्तत्तीर्थमर्तैः कदर्थनशतैः किन्तैरनर्थाश्रितैः

ज्योतिष्टोममुखैः किमीशविमुखैर्यज्ञरवाज्ञाहतैः।

सूते केशववासवादितिब्रधागाम्राभिरामां श्रियं

गंगे देवि! भवत्तटे यदि कुटीवासः प्रयासं बिना ।।३।।

गंगातीरमुपेत्य शीतलशिलामालम्ब्य हैमाचलीं

यैराकर्णि कुतूहलाकुलतया कल्लोलकोलाहलः ।

ते श्रण्वन्ति सुपर्वपर्वत शिलासिंहसनाध्यासनाः

संगीतागमशुद्धसिद्धरमणीमंजीरधीरध्वनिम् ।।४।।

दूरं गच्छ सकच्छगं च भवतो नालोकयामो सुखं

रे रे पाप वराक! साकमिरैनार्कप्रदैर्गम्पताम्।

सद्यः प्रौद्यतमन्दमारूत रजः प्राप्ता कपोलस्थले

गंगाम्भः कणिका विमुक्तगणिका संगाम संभाव्यते।।५।।

विष्णोः संगतिकारिणी हरजटाजूटाटवीचारिणी

प्रायश्चितनिवारणी जलकणैः पुण्यौधविस्तारिणी।

दुष्पापक्षयकारिणी मतिमतां बुद्धिश्रमोत्साहिणी

श्रेयः स्वर्गविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी।।६

वाचालं विकलं खलं श्रितमलं कामाकुलं व्याकुलं

चाण्डालं तरलं निपतगरलं दोषाबिलं चाखिलम् ।

कुम्भीपाकगतं तमन्तककरादाकृष्य कस्तारयेन्

मतिर्जह्नुनरेन्द्रनन्दिनि ! तव स्वल्पोदबिन्दुं बिना ।।७।।

श्लेष्मश्लेषणया नले मृतविले शोकाकुले व्याकुले

कण्ठे घर्घरघोषनादमलिने काये च संमीलति।

मां ध्यायन्नपि भारभंगुरतुरां प्राप्नोति मुक्तिं नरः

स्नातुश्चेतसि जाह्नवी निवसतां संसारसन्तापहृत् ।।८ ।।

इस प्रकार शार्दूलविक्रीडितम् छन्द में विरचित उपर्युक्त गंगाष्टकम् स्त्रोत्र काव्य के उत्तम कलापक्ष के साथ सशक्त-सरस भावपक्ष को प्रस्तुत करने में सर्वथा

सफल है।

अतएव श्री मत्कालिदास विरचित गंगाष्टकस्त्रोत की सम्पूर्ण से श्रृद्धालु सामाजिक निःसन्देह गंगाभक्ति से परिपूर्ण होकर निष्कलुष्मना होगे।

कालिदास कृत द्वितीय-गंगाष्टक स्तोत्र

कालिदासकृत द्वितीय गंगाष्टस्त्रोत के अन्तर्गत८ भुजंगप्रयात छन्दों में ललित पदावली के द्वारा गंगा माहात्म्य निरूपित है।

नमस्ते स्तुगंगेत्वदगंप्रसगाद्, भुंजगास्तुरंगाः कुरंगाः प्लवंगाः ।
अनंगारिरंगाः ससंगाः शिवागां, भुजगाधिपागीकृतांगा भवन्ति ।।१ ।।
नामोजह्नुकन्येः न मन्ये त्वदन्ये, निसर्गेन्दुचिह्नादिमिर्लोकमर्तुः ।
उतो हंनतो हं सतो गौरतोये, वसिष्ठादिभिर्गीयमानाभिधेये।।२ ।।
त्वदामज्जनात्सज्जनो दुर्जनो वा,विमानैः समानः समानैर्हि मानैः
समायाति तस्मिन् पुरारातिलोके,परद्वारसंरुद्धदिक्पाललोके ।।३।।
स्वरायासदम्भोलिदम्भो पिरम्भा- परीरम्भसम्भावनाधीरचेताः ।।
समाकांक्षते त्वत्तटे वृक्षवाटी-कुटीरे वसन्तेतुमायुर्दिनानि ।।४।।
त्रिलोकस्य भर्तुर्जटाजूटबन्धात्,स्वसीमान्तभागे मनाक् प्रस्खलन्तः ।
भवान्या रुषा प्रौढसापत्यभावात्, करेणाहतास्त्वत्तरंगाजयन्ति ।।५।।
जलोन्यज्जदैरावतो दानकुम्भ- सफुरम्प्रस्खलत्सान्द्रसिन्दूररागे ।
क्वचित्पद्मिनीरेणुभंग प्रसंगे,मनः खेलतां जह्नुकन्यातरंगे।।६।।
भवत्तीखानीखातोत्थधूली- लपस्पर्शतस्तत्क्षणक्षीणपापः ।
जनो यं जगत्पावने लत्प्रसादात्,पदे पौरूहूते पि धत्ते वहेलाम् ।।७
त्रिसन्ध्यानमल्लेखकीटीरनामा- विधानौकरत्नांशुबिम्बप्रभाभिः ।
स्फुरत्पादपीठे दृढेनाष्टमूर्ते- जटाजूटतासे!नेताः समः पदं ते ।।८
इदं यः पठेदष्टकं जह्नुपुत्रया,स्त्रिकालं कृतं कालिदासन रम्यम् ।
समायास्यतीन्द्रादिभिर्गीयमानं,पदं केशवं शैशवं नो लभेत्सः ।।६

उपर्युक्त भक्ति रस युक्त भुजंगप्रयात छन्दों के माध्यम से कवि ने गंगा गौरव व्यक्त करते हुये गंगाष्टकस्तोत्र को सम्पूर्णता प्रदान की हैं। इन श्लोकों के श्रवण-मनन-चिन्तन से भावुकों का अन्तःकरण निर्मलता और पावनता प्राप्त करता है।

श्री गंगाष्टकम्

उद्धैत वेदान्त के प्रणेता जगद् गुरु आद्शंकराचार्य वास्तव में भारत के दार्शनिक धरातल पर वृष तरिणी के समान थे। उनके "ब्रह्मम सत्यं जगत मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव न अपरा:" के इस सिद्धान्त ने दार्शनिक जगत को चमत्कृत कर दिया है। अद्वैत वेदान्त के प्रोद्धा जगत गुरू आद् शंकराचार्य ने भक्ति भावना से आप्लावित होकर जन सुता गंगा,सूर्य पुत्री यमुना,और नर्मदा पर भी अष्टको की रचना की हैं, जो उनकी भक्ति भावना के साथ साथ उनकी काव्य प्रतिभा पर भी समुज्जवल प्रकाश डालते है।

" भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं, विगत विषय तृष्णः कृष्णमाराधयामि
सकलकलुषभंगे स्वर्गसापानसंगे,तरलतरतरंगे देवि गंगे प्रसीद ।। १ ।।

हे मां गंगा! तुम्हारे तट पर केवल तुम्हारे पावन जल का पान करता हुआ विषय बासनाओं से और तृष्णा से रहित हूँ मैं श्री योगीराज कृष्ण की आराधना करता रहूं,मेरी तो यही कामना हैं। तुम तो सम्पूर्ण पापों का विनाश करने वाली! स्वर्ग के लिये सोपान स्वरूपणी,उत्ताल तरंगों से युक्त हे देवि गंगे आप मुझ पर प्रसन्न हो जावे।

" भगवित भवलीलामौलिमालेतवारभ्यः, कणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति ।।
अमर नगरी नारी चामर गृाहिणीनां,विगतकलिकलङ्कातङ्कमङ्के लुण्ठन्ति ।।२।।

हे भगवति! तुम आशुतोष शंकर के मस्तक की लीलामयी माला हो, जो प्राणी तुम्हारे जलकण के अणुमात्र को भी स्पर्श करते हैं। वे कलियुग के कलंक से उत्पन्न भय का परित्याग करके देवपुरी की चांवरधारिणी अप्सराओं की गोद में शयन करते है।

" ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटा वल्लिमुल्लासयन्ती,

स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती ।

क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचमचमूर्निर्भर भर्त्सयन्ती

पायोधि पूरयन्ती सुरनगर सरित्पावनी नः पुनातु ।।३ ।।

जगत् गुरू की आंकाक्षा है कि अखिल व्रह्माण्ड का खण्डन करके,निर्गत होने वाली भगवान शंकर की जटाओं को उल्लासित करती हुयी,स्वर्गलोक से बसुन्धरा पर गिरती हुयी, सुमेरू पर्वत की गुफा और पर्वत माला से स्खलित होती हुयी, वसुधा पर लोटती हुयी और पापों की कड़ी सेना भर्त्सना करके, जलनिधि को पूरिपूर्ण करती हुयी ,माता गंगा हमारे मन वाणी और कर्म को पवित्र कर दे।

" मञ्ंजन मातंग कुम्भच्च्युतमदमदिरा मोदमत्तालिजालं,

स्नानैः सिद्धाङ्गनानां कुचयुगविगलत्कुङ्कगमाप्तंग पिगंम् ।

सायं प्रातर्मुनीनां कुशकुसुमचयैश्छन्नतीरस्थनीरं,

पायान्नौ गगांरम्भः करिकलभकराक्रान्तंरहस्यतरंगम् ।

अद्धैत दार्शनिक जगद् गुरू शंकराचार्य की कामना है कि देव स्नान करते हुये हाथियों के कुम्भ स्थल से झरते हुये मदरूपी मदिरा के गन्ध के कारण भौरें जिससे मतवाले हो रहे हैं,सिद्धों की स्त्रियों के स्तनों से बहे हुये कुकुंम के मिलने से जो पीतवर्ण हो रहा है तथा सायं प्रातः ऋषियों मुनियों द्वारा अर्पित कुश और पुष्पों के समूहों से जो किनारे पर ढका हुआ है,हाथियों के बच्चों की सूड़ों से जिसकी लहरों का वेग आक्रान्त हो रहा है वह गंगाजल वास्तव में हमारा कल्याण करे।

" आदावादिपितामहस्य नियमव्यापारपात्रे जलं,

पश्चातात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् ।

भूयः शम्भुजटाविभूषणमणि र्जह्नोर्महर्षेरिमं,

कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते। ५।।

जहनु महर्षि की कन्या,पापों का विनाश करने वाली, सर्वप्रथम सृष्टि की रचयिता, ब्रह्म के कमण्डलु से जल रूप से,फिर शेष नाग पर शयन करने वाले भगवान विष्णु के पवित्र चरणोदकरूप से और तदन्तर महादेव जी की जटाओं को सुशोभित करने वाली मणिरूप से दृष्टिगोचर हो।

“ शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले मञ्जज्जनोत्तारिणी,
पारावारविहारिणी भवभयश्रेणीसमुत्सारिणी ।
शेषाहेरनुकारिणी हरशिरोवल्लीदलाकारिणी,
काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी ।।६।।

हिमाद्रि से उतरने वाली,अपने जल में स्नान मंजन करने वालो का उद्धार करने वाली,समुद्र विहारिणी, सांसारिक संकटो का नाश करने वाली,आकार और विस्तार में शेषनाग का अनुकरण करने वाली,भगवान शंकर के मस्तक पर लता के समान सुशोभित,वाराणसी के पावन क्षेत्र में बहने वाली,मनोहारिणी गंगा जी विजायिनी हो रही है।

“ कुतो वीचिर्वीचितव यदि गता लोचन पथं,
त्वयापीता पीताम्बरपुरनिवास वितरसि।
त्वदुत्संगे गंगे पतति यदि कायस्तनुभृतां,
तदा मातः शातकृतवपद लाभोऽप्यति लघुः ।।७।।

गंगा के गौरव पर प्रकाश डालते हुये आचार्य शंकर कहते हैं कि हे गंगा माता! तरंग नेत्रों के सामने आ जाये,तो फिर संसार की तरंग कहां रह सकती है? तुम अपना जलपान करने पर वैकुण्ठ लोक में निवास देती हो।हे गंगे! यदि प्राणियों का शरीर तुम्हारी गोद में छूट जाता है,तो हे मातः! उस समय इन्द्र-पद की प्राप्ति भी अत्यन्त तुच्छ प्रतीत होती है। तुम्हारे जल का प्रभाव तो अवर्णनीय हैं।

“ गंगे त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये,
पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणजोहारिणी स्वर्गमार्गे ।

प्रायश्चितं यदि स्यात्तव जलकणिका ब्रह्महत्मादिपापे,

कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रिजगदधहरे देवि गंगे प्रसीद।।८।।

कवि कहता है कि वह तीनों लोकों की सार सर्वदेवागंनायें जिसमें स्नान करती है,ऐसे विस्तृत जलवाली पूर्ण ब्रह्मस्वरूपिणी,स्वर्ग के मार्ग में भगवान के चरणों की की धूलि का प्रच्छालन करने वाली है। हे गंगे! जब तुम्हारे जल का एक कणमात्र ही ब्रह्माइत्यादि पापों का प्रायश्चित कर देने वाला है तो हे तीनों लोको के पापों को नष्ट करके में समर्थ हे गंगा! तुम्हारी स्तुति करने में कौन समर्थ है इसलिये हे देवि ! गंगे प्रसन्न हो।

" मातजीह्नवि शम्भुसङ्गवलिते मौलो निघायांजलिं,

त्वतीरे वपुपोऽवसानसमये नारायणाङ्.धिद्वयम् ।

सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवे,

भूमाद्भन्तिरविच्युता हरिहरद्वैतात्मिका शाश्वती।।६।।

कवि अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करते हुये कहता है कि हे शिव की संगिनी माता गंगे। शरीर शान्त होने कें समय प्राण-यात्रा के उत्सव में,तुम्हारे तीरपर शिर नवाकर, हाथ जोड़े हुये,आनन्दपूर्वक भगवान् के चरणयुगल का स्वमरण करते हुये मेरी अविचल भाव से हरि-हर में अभेदात्मिका नित्य भक्ति बनी रहे।

" गंगाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्प्रयतो नरः,

सर्वपापविनिर्युक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ।।१०

जो पुरूष शुद्ध होकर इस पवित्र गंगाष्टक का पाठ करता है,वह सम्पूर्ण पापों और कल्मषों से मुक्त होकर वैकुण्ठ लोक में जाता है।

श्री गंगा स्तोत्रम्

यद्यपि भगवान आद् गुरू शंकराचार्य ज्ञानमार्गी थे तथापि उन्होने कुछ अष्टक भी लिखे है जो उनकी काव्य शक्ति पर समुज्ज्वल प्रकाश डालते है। उन्होने गंगा स्त्रोत्रम् के अन्तर्गत चौदह श्लोकों की रचना की है।

" देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे त्रिभुवनतारिणि तरलतरंगे।

शंकर मौलिविहारिणी विमले मम मतिरास्तां तव पदकमले ।।१।।"

हे देवि गंगे! तुम सम्पूर्ण देवताओं की ईश्वरी हो,हे भगवति! तुम त्रिभुवन के प्राणियों को उद्धार करने वाली हो,विमल और तरल तरंगमयी तथा शंकर के मस्तक पर बिहार करने वाली हो। हे माता! तुम्हारे पावन चरणकमलो में मेरी गति निरन्तर लगी रहे।

" भागीरथी सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमे ख्यातः।

नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम् ।।२।।"

हे भागीरथी! तुम सब प्राणियों को सुख देती हो। हे मात! वेदशास्त्र में तुम्हारे पावन जल के माहात्म्य वर्णित है।मैं तो सर्वथा तुम्हारी महिमा कुछ नहीं जानता। हे!दयानिधि मुझ अज्ञानी की रक्षा करो।

" हरिपदपाद्यतरंगिणी गंगे हिमविधुमुक्ताधवलतरंगे।

दूरीकृत मम दुष्कृतिभारं कुरू कृपया भवसागरम् ।।३।।"

हे माता गंगा! श्री हरि के चरणों की चरणोदकमयी नदी हो, हे देवि तुम्हारी तरंगे हिम,चन्द्रमा,और मोती की भांति श्वेत हैं। तुम मेरे पापों का भार दूर कर दो और कृपा करके मुझे भव सागर से पार उतारो।

" तब जलममलं येने निपीतं परमपदं खलु तेन ग्रहीतम्,

मातर्गगेत्वयि यो भक्तः किल तें द्रष्टुं न यमः शक्तः ।।४।।"

हे देवि! जिसने तुम्हारे पावन जल का पान कर लिया,अवश्य ही उसने परमपद पा लिया हैं। हे माता गंगे! जो तुम्हारी भक्ति करता है,उसको यमराज नहीं देख सकता अर्थात् तुम्हारे भक्तगण यमपुरी में न जाकर वैकुण्ठ में जाते है।

" पतितोद्धारिणि जाह्नवि गंगे खण्डित गिरिवरमण्डित भंगे।

भीष्मजननि हे मनिवर कन्ये पतित निवारिणि त्रिभुवनधन्ये।।५।।"

हे पतित जनों का उद्धार करने वाली जह्नुकुमारी गंगे! तुम्हारी तरंगे गिरिराज हिमालय को खण्डित करके बहती हुई सुशोभित होती हैं।तुम भीष्म पितामह की जननी और जह्नुमुनि की कन्या हो। पतितपावनी होने के कारण तुम त्रिभुवन में धन्य हो।

कल्पलतामिव फलदां लोके प्रणमयि यस्त्वां न पतित शोकं।
पारावारविहारिणि गंगे विमुख युवति कृत तरलापंगि।।६।।"

हे मातः! तुम इस लोक में वृक्ष की भांति मनोबांच्छित फल प्रदान करने वाली हो।तुम्हें जो प्रमाण करता है,वह कभी शोक में नहीं पड़ता। हे गंगे,तुम समुद्र के साथ बिहार करती हो और तुम्हारा नेत्र-कोण विमुख वनिता की तरह चंचल है।

" तव चेनमातः स्त्रोतः स्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः।
नरक निवारिणी जाह्नवि गंगे! कलुषविनाशिनी महिमोत्तुंगे ।।७।।"

हे गंगे! जिसने तुम्हारे प्रवाह में स्नान कर दिया, वह फिर मातृगर्भ में प्रवेश नहीं करता अर्थात् वह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। हे जान्हवि! तुम भक्तों को नरक से बचाती हो और उनके पापों का नाश करती हो,तुम्हारा माहात्म्य वास्तव में अत्यन्त उच्च है।

" पुनरसदंगे पुण्य तरंगे जय जय जाह्नवि! करूणापांगे।
इन्द्रमुकुट मणिराजितचरणे सुखदे शुभदे भृत्यशरण्मे ।।८।।

भगवान आद् शंकराचार्य गंगा के माहात्म्य पर प्रकश डालते हुये कहते है हे करूणाकटाक्षवाली जह्नुपुत्री गंगे! मेरे अपवित्र अंगों पर अपनी पावन तरंगों से युक्त होकर उल्लसित होने वाली हे गंगा तुम्हारी जय हो! जय हो! तुम्हारे चरण इन्द्र के मुकुट मणि से प्रदीप्त हैं।तुम सबको सुख और शुभ देने वाली हो और अपने सेवक को आश्रय प्रदान करती हो।

" रोगं शोकं तापं पारं हर मे भगवति कुमतिकलापमू,
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे।।६।।"

हे भगवति! तुम मेरे रोक,शोक,ताप,पाप,कुमति-कलाप को नष्ट कर दो, तुम त्रिभुवन की सारभूत और वसुधा का हार हो। हे देवि! इस विशाल संसार में एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो।

“ अलकानन्दे परमानन्दे कुरू करूणामयि कातरबन्द्ये।

तब तट निकटे मस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः ।।१०

हे सन्तप्त जनो की वन्दनीया देवी गंगे। तुम अलकापुरी को आनन्द देनेवाली और परमानन्दमयी हो, तुम मुझ पर कृपा करो,हे मातः जो तुम्हारे तट के निकट वास करता है वह मानो विषणु लोक में ही वास करता है।

“ वरमिह नीरे कमणे मीनः किं वा तीरे शरटः क्षीणः,

अथवा श्रपचोमलिनो दीनस्तव न हि दूरे नृपतिकुलीनः ।।११।।

हे देवि! तुम्हारे जल में कच्छप या मीन बनकर रहना अच्छा है,तुम्हारे तीनरपर दुबला-पतला गिरगिट (कृकलास) बनकर रहना अच्छा है,या अति मलीन, दीन चाण्डाल कुल में जन्म ग्रहण कर रहना अच्छा है,परन्तु दूर कुलीन नरपति होकर रहना भी अच्छा नहीं।

“भो भुवनेश्वरि पुण्ये धन्ये देवि द्रवमयि मुनिवरकन्या,

गंगास्तवयिमममलं नित्यं पठति नरो यः स जगति सत्यम् ।।१२।

आचार्य जगदृ गुरू शंकराचार्य जी लिखते है कि हे देवि! तुम त्रिभुवन की ईश्वरी हो, तुम पावन और धन्य हो,जलमयी तथा मुनिवर की कन्या हो जो व्यक्ति प्रतिदिन इस गंगास्तव का पाठ करता है,वह निश्चय ही संसार में भी जयलाभ कर सकता है।

“ येषां हृदये गंगाभक्तिस्तेषां भवति सदा सुखयुक्तिः,

मधुराकान्तापंझनटिकाभिः परमानन्दकलित ललिताभिः ।।१३।।

जिनके हृदय में गंगा के प्रति अचल भक्ति है,वे निरन्तर ही आनन्द और मुक्ति लाभ करते है,यह स्तुति परमानन्दमयी सुललित पदावली से युक्त, मधुर और

कमनीय है।

" गंगास्त्रोत्रमिदं भवसारं वाञ्छितफलदं,विमलं सारम् ।

शंकरसेवशंकंररचितं पठति सुखी स्तव इति च समाप्तः ।।१४।।

"इस आसार-संसार में उक्त गंगा स्तव ही निर्मल साखान् पदार्थ है,यह भक्तों को अभिलषित फल प्रदान करता है,शंकर के सेवक शंकराचार्य कृत इस स्त्रोत को जो पढ़ता है,वह सुखी होगा-इसप्रकार यह स्त्रोत्र इस के बाद समाप्त हुआ।

नवम् शती ई० में केलर के कालटी नामक गांव में उत्पन्न सनातन धर्म के महान उद्धारक भगवान शंकराचार्य ने अल्पायु में ही ब्रह्मसूत्र का शारीरिक भाष्य,उपनिषदों एवं गीता का भाष्य तथा सौन्दर्यलहरी,अमृतलहरी,विवेकचूड़ामणि सरीखे स्वतन्त्र ग्रन्थों का प्रणयन कर अपनी दिव्य प्रतिभा का परिचय दिया। अनेक स्तोत्रों का कृतित्व भी उन्हें दिया जाता है।

अब्दुल रहीम खान खाना का व्यक्तित्व एवं कृत्तिव-

संस्कृत साहित्य की मन्द मन्दाकिनी के मध्य युगीन भारत में मुस्लिम शासकों में धर्मसहिष्णुता भी संस्कृत प्रेम भी भली भाँति पल्लिवित एवं पुष्पित था।

सुप्रसिद्ध मुगल शासक अब्दुल मुजफ्फर जलारूद्दीन अकबर की सभा के नवरत्नों में अन्यतम अब्दुल रहीम खान खाना का जन्म लाहौर नगर में १५५६ ई० में हुआ था। परमपराक्रमी,निष्काम सेवा के प्रतीक, वैरम खां इनके पिता थे, जो अकबर से प्रेरित हज यात्रा में मुबारकखान लुहानी गुजरात नरेश द्वारा शत्रुता के कारण मार दिये गये। अनाथ अब्दुल रहीम खान खाना को उनकी मां ने चार वर्षों तक शत्रुओं से बचाकर अहमदाबाद के अज्ञात वास में इनका लालन पालन किया ।

कालान्तर में सम्राट अकबर द्वारा इनकी समुचित शिक्षा दीक्षा की व्यवस्था की गयी, जहां इनके विराट व्यक्तित्व का विकास हुआ। ये एक शस्त्र और शास्त्र के धनी श्रेष्ठ सेनानी विद्वान ज्योर्विद्,हिन्दी संस्कृत,अरबी,फारसी भाषाओं में परम निष्णात महान कवि, अद्वितीय नीतिकार और महान दानवीर थे।

सम्राट अकबर के दिवगंत होने पर अपने शिष्य जहांगीर की कृपा को कुछ समय तक इन्होने प्राप्त किया किन्तु दुर्भाग्य वश साम्राज्ञी नूरजहां के कोपभाजन बनकर आगरा से अन्हें निष्कासित होना पड़ा.तथा शासन द्वारा सर्वस्व हरण किये हुये भिक्षुक की तरह राजपथ पर निकल पड़े। चार सन्तानों और पत्नी के मरण सन्ताप को समेटे लाखों रजत मुद्राओं के दान दाता रहीम अकिंचन बनकर निष्काम सन्यासी की तरह भटकने लगे। अपने ७० वर्ष के सुदीर्घ जीवन में अपना विराट व्यक्तित्व समेटे संयोग वश में लाहौर में १६२७ ई: में दिवंगत हो गये।

हिन्दी के मूर्धन्य गंगा आदि कवियों ने इनकी शूरता, दानवीरता का अपनी कविता में उल्लेख किया है रुद्र कवि के द्वारा वीराग्रणी वैरमखां तनय अब्दुल रहीम खान खाना इस प्रकार वर्णित हुये हैं-

" कलिः कृतयुगायते सुरपदायते मेदिनी,
सहस्त्र किरणायते भुजयुगप्रतापोदयः ।
यशोहिमकरायते गुणगुणोऽपि तारायते,
सहस्त्र नयनायते नृपनवावबीराग्रणीः ।।"

यह महानपुरूष महान दानवीर,गुणी,विद्वान और विद्वान कवियों के आश्रय दाता थे।

" मन्ये विश्वकृता दिशामधिपता त्वयूमेव संस्थापिता,
यस्याज्जिष्णुरसि प्रभो शुचिरसि त्वं धर्मराजोऽप्यसि।
राजन् पुण्यजनोऽसि विश्वजनताधार प्रचेता जगत् ,
प्राणस्त्वं धनदो नहेश्वर इह श्री खान खाना प्रभो ।।"
"श्री मान् कल्पनहीरूहः किमवनौ किं वा स चिन्तामणिः ।

---

१. अभिनव चिन्तनम्- डा. कैलाश नाथ द्विवेदी प्रथम संस्करण २००३

किं कर्णः किमु विक्रमः किमभवा भोजोऽवतीर्णः परः ।

इत्थं यत्र विलोकते मतिमतां बुद्धिः समुज्जृम्भते,

सोऽयं सम्प्रति खानखाननृपतिर्जीयात् सतां भूतये।।

(रूद्र कवि)

अब्दुल रहीम खानखाना संस्कृत के भी सिद्ध हस्त कवि थे। इन्होने भगवान श्री कृष्ण की भक्ति भावना से से अनुप्राणित होकर मदनाष्टक अथवा रहीम काव्य की रचना की जिसके निम्न लिखित छन्दों में इन्होंने भगवान श्री कृष्ण के प्रति अपनी अनन्य भक्ति इस प्रकार व्यक्त की है-

" रत्नाकरोऽस्तिसदनं गृहिणी च पद्मा,

किं देयमस्ति भवते जगदीशवराया।

राधागृहीतमनसेऽमनसे च तुभ्यं,

दत्तं ममा निजमनस्तदिमं ग्रहाण ।।

उपिच

अनीता नटनन्मया तव पुरः श्री कृष्ण मा भूमिका,

व्योमाकाशरवशाम्बराव्धिावसवस्त्वत् प्रीतयेऽद्मावधि ।

प्रीतिस्तस्य निरीक्षणे हि भगवन् मत्प्रार्थितं देहि मे,

नो चेद् ब्रूहि कदापि मा नय पुनर्मामीदृशी भूमिकाम् ।।

कविवर अब्दुल रहीम खान खाना ने कलि कलमषनाशिनी, पतितपावनी,पापहारिणी,गंगा के प्रति भी अपनी अनुपम भक्तिभावना प्रकट की है। जिसमें सुन्दर संस्कृत कविता की सरलता,सरसता,प्रासादिकता सर्वत्र संलक्षित होती है। इस दृष्टि से इनकी 'गंगाष्टकम्' शीर्षक स्तोत्रात्मक रचना को यहां अविकल रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है।

अब्दुर्लरहीम खानखाना कृतं गंगाष्टकम्[१]

अच्युतचरणतरंगिणि मदनान्तकमौलिमालतीमाले ।
त्वयि तनुवितरणसमये हरता देया न मे हरिता ।।१।।

चिरं विंरचिविष्णुपूज्यपादवारिथरिणे
प्रतापकेतुपट्टिकाम्बुयाष्टिका विहारिणी ।
शशान्तिकान्तिपूरकेण पापकूटकन्दिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।२।।

शिवोत्तमांगवेदिका विहारसौख्यकारिणी
ततो भगीरथांगसगयर्त्यलोकचारिणी ।
त्रिमार्गगा त्रितापहा त्रिलोकशोकखण्डिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।३।।
हिमाद्रिकन्दराविहारसिद्धचारणांगना
सुगीतनृत्यतालभेदकामकेलिनन्दना ।
सुकंजपुंजवंजुलप्रफुल्लसूनुगन्धिनी
जगद त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।४।।

---

१. प्रस्तुत रचना की एक हस्तलिखित प्रति, जोकि अब से प्रायः सौ वर्ष पूर्व रामबाबू नामक किसी ब्राह्मण द्वारा लिखी गई थी, श्री लक्ष्मण नारायण शुक्ल (इन्दौर) को भरतपुर में प्राप्त हुई। श्री शुक्ल ने इसका प्रकाशन संगमनी के २/२ अंक में कराया संगमनी (संस्कृत त्रैमा०) दारागंज, इलाहाबाद ।

सरस्वतीप्रपूरसूरकन्यकाम्बुसंगिनी
मुनीन्द्रवृन्दवन्दिता त्रिवेणिका तरंगिणी ।
मुमुक्षुसंगसेविता सुतीर्थबुद्धिवन्दिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।५।।

चकोरचक्रवाकहंसवृन्दकूलराजिता
मृणालखण्डधूमवायुपूतत्वसंजिता ।
शवांगगन्धपूतहासिसिरिराशिसन्दिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।६।।

रसालवेतसीतमालसालकुंजपावनी
मयूरकोकिलाप्रमत्ततीरशोभितावनी ।
अनेकदेशकूलवातकालभीति दण्डिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।७।।

नरेन्द्रपुत्रमुक्तिरा सुरेन्द्रलोकसाधनं
स्वसेवकाय दात्रिका सुतं सुमित्रकंधनम् ।
नदीशपूरसंगमेन विश्वतापकन्दिनी
जगत् त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी ।।८।।

नवप्रवाहसंचलद् विलोलवीचिदोलितं
श्वमीनकंकर्चितं श्रृंगालकाकभक्षितम् ।
नरं विलोक्य सादरं विकुण्ठलोकगामिनं
वदन्ति देवि! देवता भृशं त्वदीयविस्मयम् ।।६।।

विधेहि देवि! मे मतिं त्वदीयवाारिसेवने
शुभेतटस्य मे कदा प्रतीतिरस्तु सा प्रधे ।
तवाम्बुपानमादरात् प्रकुर्वतः प्रतिक्षणं
त्वदीयवीचिमीक्षतः प्रमातु देवि! मे दिनम् ।।१०।।

मुरारिपादसेविना विरामखानसूनुना
शुभाष्टकं शुभं मया कृतं गुरुप्रभावतः ।
पठेदिदं सदा शुचिः प्रभातकालतस्तु सः
लभेत वांछित फलं स जाह्नवीप्रभावतः ।।११।।

गंगा स्तुति -

१. प्रस्तुत स्तोत्र ''धर्मसिन्धु'' नामक ग्रन्थ में उद्धृत है, परन्तु संभवतः यह किसी परवर्ती पुराणकार की कृति का अंश प्रतीत होता है।

श्री गंगा स्तुति -में पुराणों की प्रतिच्छाया में गंगा का लोकविश्रुत स्वरुप, गौरव एवं माहात्म्य निरुपित है। इसके सरल ब्रह्मोवाच और ललित अनुष्टुप बहुल पद्यों का प्रभाव प्रत्येक सहृदय भावुक के मन पटल पर पड़ता है, जिससे वह सर्वथा विष्कलुष और पवित्र हो जाता है।

ब्रह्मोवाच-

नमः शिवायै गंगायै शिवदायै नमोनमः ।
नमस्ते रुद्ररुपिण्यै शाकर्ये ते नमो नमः ।।१।।

नमस्ते विश्परुपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोनमः ।
सर्वदेवस्वरुपिण्यै नमो भेषजमूर्तये ।।२।।

सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्श्रेष्ठ्यै नमो स्तुते।
स्थाणुजंगमसंभूत विषहन्त्र्यै नमो नमः ।।३।।

भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमोनमः ।
मन्दाकिन्यै नमस्ते स्तु स्वर्गदायै नमो नमः ।।४।।

नमस्त्रैलोक्यभूषायै जगद्धात्र्यै नमोनमः ।
नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै तेजावत्यै नमोनमः ।।५।।

नन्दायै लिंग-धारिण्यै नारायण्यै नमो नमः ।
नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः ।।६।।

बृहत्यै ते नमोस्त स्तु लोकधात्र्यै नमोनमः ।
नमस्ते विश्वमित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः ।।७।।

पृथव्यै शिवामृतायै च सुवृषायै नमो नमः ।
शान्तायै चवरिष्ठायै वरदायै नमो नमः ।।८।।

उस्तायै सुखदोग्ध्रयै च संजीवन्यैनमोनमः ।
ब्रहिम्ष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितहन्यै नमो नमः ।।९।।

प्रणतार्तिप्रभंजिन्यै जगन्मात्रे नमो स्तुते ।
सर्वापत्प्रतिपक्षायै मंगलायै नमो नमः ।।१०।।

शरणागत दीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि! नारायणि नमो स्तुते ।।११।।

निर्लेपायै दुर्गहन्त्र्यै दक्षायै ते नमो नमः ।
परात्परतरे तुभ्यं नमस्ते मोक्षदे सदा ।।१२।।

गंगे! ममाग्रतोभूया गंगे में देवि पृष्ठतः ।
गंगे में पाश्वयोरेहित्वपि गंगे स्तु में स्थितिः ।।१३।।

आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्व त्वं गां गते शिवे ।
त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं हि नारायणः परः ।।१४।।

गंगे त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे ।
य इदं पठति स्तोत्रं भक्त्या नित्यं नरो पियः ।।१५।।

श्रृणुयात् श्रद्धया युक्तः कायवाक्चित्तसंभवैः ।
दशधा संस्थितैर्दोषैः सर्वैदेव प्रमुच्यते ।।१६।।

सर्वान् कामानवाप्नोति प्रेत्य ब्रह्माणि लीयते ।
ज्येष्ठमासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता ।।१७।।

तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गंगाजले स्थितः ।
यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः ।।१८।।

सोपि तत्फलमाप्नोति गंगां संपूज्य यत्नतः ।
अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः ।।१९।।

परदारोपसेवा च काविकं त्रिविधिं स्मृतम् ।
पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि सर्वशः ।।२०।।

असम्बद्धप्रलापाश्च वाड्मयं स्याच्चवतुर्विधम् ।
परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसा निष्टचिन्तनम् ।।२१।।

वितथाभिनिवेशश्च मानसं त्रिविधं स्मृतम् ।
एतानि दश पापानि हर त्वं मम् जाह्नवि ।।२२।।

दशपापहरा यस्यात्तस्माद्दशहरा स्मृता ।
त्रयस्त्रिंशंच्छतं पूर्णान् पितृनथ पितामहान् ।।२३।।

उद्धरत्येव संसारान्यंत्रेणानेन पूजिता ।।२४।।

नमो भगवत्यै दशपापहरायै गंगायै नारायण्यै ।
देवत्यै शिवायै दक्षायै अमृतायै विश्वरुपिण्यै ।
नन्दिन्यै ते नमो नमः ।।२५।।

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णात्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम् ।
विधिहरिहररुपां सेन्दुकोटीरजुष्टां
कलितसितदुकलां जाह्नवीं तां नमामि ।।२६।।

आदावादिपितामहस्य निगमव्यापारपात्रे जलं
पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् ।
भूयः शंभुजुटाविभूषणमणिर्जह्नोमहर्षेरियं
देवी कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ।।२७।।

गंगा गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ।।२८।।

समासतः सरस और ललित धर्माब्धिस्था 'गंगास्तुति' सुनकर प्रत्येक सहृदय का अन्तःकरण गंगा के प्रति भक्तिभावना से आपूरित होकर अत्यन्त निर्मल हो जाता है तथा पापों के प्रति प्रवृत्ति पुरुषों की समाप्त हो जाती है। इससे गंगा

माहात्म्य प्रत्यक्ष परिलक्षित है।

गंगा-लहरी

पं. राज जगन्नाथ मुगल सम्राट शाहजहाँ से सम्मानित संस्कृत राजकवि थे । 'दिल्ली' बल्लभ पाणि पल्लव तले नीतम् नवीनम् वयः' कहकर उन्होनें अपनी युवावस्था लवन्गिं नाम की यवन कन्या के साथ विवाह कर दिल्ली में बितायी। जिससे काशी के पण्डितों ने कुपित होकर इन्हें जाति से वहिष्कृत कर दिया, तथापि वृद्धावस्था में कुष्ठ ग्रस्त होकर भी काशी के गंगा तट पर जाकर इन्होनें माँ गंगा की शरण लेते हुए गंगा-लहरी नाम के शिखरणी छन्दों में दिव्य-स्तोत्र की रचना की ।

कहा जाता है कि गंगा लहरी के भक्ति भावपूर्ण ललित सरस पद्यों को सुनकर गंगा प्रत्येक छन्द के साथ प्रत्येक घाट की सीढ़ी पार करती जाती थी और अन्ततः ५२ छन्दों को सुनकर सभी ५२ सीढ़ियाँ डुबोकर माँ गंगा ने पण्डित राज को अपनी गोद में लेकर शरण प्रदान की। इससे दिव्य स्तोत्र काव्य की सार्थकता प. राज को मुक्ति पद प्राप्त कराने में सर्वथा सिद्ध हुई ।

गंगा लहरी के अधोलिखित कुछ छन्दों के उदाहरण से प. राज जगन्नाथ की प्रगाण भक्ति भावना तो व्यक्त होती ही है इसके साथ गंगा का दिव्य प्रभाव एवं माहात्म्य भी उजागर होता है।

मुगल सम्राट शाहजहाँ (१६२८-१६५६ ई०) के राजकवि तथा शहजादा दाराशिकोह के विद्यागुरु पण्डितराज जगन्नाथ अपने युग के उद्भट अलंकारशास्त्री रससिद्धकवि एवं महान भगवद्भक्त थे । उन्होंने गंगा तथा यमुना को लक्षितकर दो लहरियाम् लिखी, जिन्हें क्रमशः पीयूष-लहरी तथा सुधालहरी कहा जाता है। पीयूषलहरी की प्रसिद्धि गंगा लहरी के रुप में अधिक हैं। इसमें ललितशिखरिणी में कुल ४८ तथा अन्य छन्दों में ५ छन्द है।-

समृद्धं सौभाग्यं सकलवसुधायाः किमपि तन्
महैश्वर्यं लीलाजनितजगतः खण्डपरशोः ।
श्रुतीनां सर्वस्वं सुकृतमथ मूर्तं सुमनसां
सुधासौन्दर्य ते सलिलमशिवं नः शमयतु ।।१।।

बधान द्रागेव प्रष्मिरमणीयं परिकरं
किरीटेबालेन्दुं नियमय पुनः पन्नगगणैः।
न कुर्यास्त्वं हेलामितरजनसाधारणधिया
जगन्नाथस्यायं सुरधुनि! समुद्धारसमयः ।।४७।।

शरच्चन्द्रश्वेतां शशिश्कलश्वेतालमुकुशै
करैः कम्भाम्भोजे वरमयनिरासौ विदधतीम् ।
सुधाधाराकाराभरणवसनां शुभ्रमकर -
स्थितां त्वां मे ध्यायन्त्युदयति न तेषां परिभवः ।।४८।।

दरस्मितसमुल्लसद्वदनकान्तिपूरामृतै-
र्भवज्वलनभर्जितानिशमूर्जयन्तीनरान्
चिदेकमयचन्द्रिकाचयचमत्कृतिं तन्वती
तनोतु मम शं तनोः सपदिशन्तनोरंगना ।।४६।।

मंत्रैर्मीलितमौषधैर्मुकुलितंत्रस्तंसुराणांगणैः
सृस्तं सान्द्रसुधारसैर्विदलितंगारुत्मतैग्रविभिः ।
वीचिक्षालितकालियाहितपदे स्वर्लोकल्लोलिनि
त्वं तापं तिरयाधुना मम भवव्यालावलीठात्मनः ।।५०।।

घूते नागेन्द्रकृत्तिप्रमथगणफणिश्रेणिनन्दीन्दुमुख्यं
सर्वस्वं हारयित्वा स्वमथ पुरभिदि द्राकू पणीकर्तुकाये ।

साकूतं हैमवत्या मृदुलहसितया वीक्षितायास्तवाम्ब
व्यालोलोल्लासिवल्गल्लहरिभटघटीताण्डवं नः पुनातु ।।५१।।

विभूषितानंगरिपूत्तमाँगा,
सद्यः कृतानेकजनार्तिभंगा ।
मनोहरोत्तुंगचलतरंगा
गंगा ममांगान्यमलीकरोतु ।।५२।।

समासतः संस्कृत स्तोत्र साहित्य में गंगा लहरी अपने अनुपम सचना विधान काव्यात्मक विभिन्न विशेषताओं (पद, रीति, गंण, अलंकार, छन्दोयोजना, रसनिष्पत्ति) से महत्वपूर्ण स्थान की अधिकारिणी है। इसका प्रत्येक ललित पद्य अत्यन्त सरल, सरस तथा हृदयावर्जक है। इसका सस्वर पाठकर प्रत्येक सहृदय श्रद्धालु अपने चित्त,मन और अन्तःकरण को निर्मल और पावन बना सकता है। इसके अतिरिक्त इस स्तोत्र के श्रवण और पाठ से देवनदी गंगा के प्रति भक्ति-भावना भी समृद्ध होती है, जिससे भावात्मक राष्ट्रीय चेतना तथा अनन्य निष्ठा भी उत्पन्न होती है।

गंगाष्टकम्

इस स्तोत्र की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि संन्यासी स्वामी श्री सत्यज्ञानानन्दतीर्थ काशी के निवासी थे। उन्होने भगवान् शिव की कृपा से उपनिषदों का ज्ञान प्राप्त किया था और गंगातट पर ही वह रहते थे। सम्भवतः वह वर्तमान शती के ही प्रारम्भ में थे।श्री सत्यज्ञानानन्दतीर्थ विरचित गंगाष्टकम् गंगा गौरव, स्वरूप और अलौकिक माहात्म्य निरूपित करता है।

श्री सत्यज्ञानानन्दतीर्थकृतं गंगाष्टकम् सरस मालिनी छन्द में निबद्ध है,[illegible] ललित सानुप्रासिक पदावली अत्यन्त हृदयावर्जक है- यथा

“ यदवधि तव नीरं पातकी नैति गंगे।
तदवधि मलजालैर्नैव मुक्तः कलौ स्यात् ।

तव जलकणिका लं पापिनां पापशुद्ध्यै
पतितपरमदीनांस्त्वं हि पासि प्रपन्नाम् ।।१।।

तपशिवजललेशं वापुनीतं समेत्य
सपदि निरयजालं शून्यतामेति गंगे।
शमलगिरिसमूहाः प्रस्फुटन्ति प्रचण्डा-
स्त्वपि सखि! विशतां नः पापशंकाकुतःस्यात् ।।२।।

तव शिवजलजालं निःसृतं पर्हिगंगे ।
सकलभुवनजालं पूतपूतं तदाभुत् ।
यमभटकलिवार्ता देवि! लुप्मा ययोपि
व्यधिकृतवरदेहाः पूर्णकामाः सकामाः ।।३।।

मधुमधुवनपूगौ रत्नपूगैर्न्नृपूगै-
र्मधुमधुवनपूगैर्देवि! पूगैः सपूगैः ।
पुरहरपरमागे भासि मायेव गंगे
शमयसि विषतापं देवदेवरूप बन्ध्यम् ।।४।।

चलितशाशिकला भैरूत्तरंगैस्तरंगैा-
रमितनदनदीनामंमसंगैरसंगैः।
विहरसि जगदण्डे खण्डयन्ती गिरीन्द्रान्
स्मयसि निजकान्तं सागरं कान्तकान्ते ।।५।।

तव परमहिमानं चित्तवाचायमानं
विधिहरिहरराका नापि गंगे! विदन्ति।
श्रुतिकुलमभिधत्ते शांकितं ते गुणान्तं
गुणगणसुविलापैर्नेति नेतीति सत्यम् ।।६।।

तव नुतिननतिनामान्यप्यहां पावयन्ति

ददति परमशान्तिं दिव्यभोगान् जनानाम् ।

इति पतितशरण्ये!त्वां प्रपन्नोस्मि मात-

र्ललिततरतरंगे चांगगंगे! प्रसीद ।।७।।

शुभतरकृतयोगाद् विश्वनाथप्रसादाद्

भवहरवरविद्यां प्राज्य काश्यां हि गंगे!

मुदित हृदय कंजे नन्दसूनुं भजेहम् ।।८।।

उपयुक्त गंगाष्टकम् स्त्रोतपाठ का फल निम्नलिखित श्लोकों में वर्णित है।

गंगाष्टकमिदं कृत्वा भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणाम् ।

सत्यज्ञानानछतीर्थमतिना स्वर्पितं शिवे ।।६।।

तेन प्रीणातु भगवान् शिवो गंगाधरो विभुः ।

करोतु शंकरः काश्यां जनानां सततं शिवम् ।।१०

समासः सत्यज्ञानानन्दतीर्थ विरचित गंगाष्टक सम्पूर्णता प्राप्त कर श्रद्धालु सामाजिकों के अन्तःकरण को निर्मल एवं पावन बनाकर भक्ति-मुक्ति प्रदान करने में परम सहायक सिद्ध हो सकता है।

समीक्षा-

समृद्ध संस्कृत गीतिकाव्य के अर्न्तगत स्तोत्र साहित्य विधा अत्यन्त समृद्ध और लोकप्रिय है अतः गंगा पर आधृत अनेक उत्कृष्ट स्तोत्रों की रचना पुराण काल से अबतक निरन्तर प्राप्त होती है। श्री मद् देवी भागवत नवम् स्कन्ध के १२ वें अध्याय में विष्णु पदी स्तोत्रम् स्कन्धपुराण के काशी खण्ड पूर्वाद्ध में अगस्त्य एवं स्कन्ध के संवाद रूप में गंगा सहस्त्रनाम् स्तोत्र, बृह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खण्ड में गंगा स्तोत्रम् कल्किपुराण के अनुभागवत भविष्य के तृतीयांश में गंगास्तव, मत्स्य पुराण में गंगा पुण्य नामानि श्री हनुमत विरचित गंगा स्तव,बाल्मीकि विरचित गंगाष्टकम्,कालिदास कृत शार्दूलविक्रीडित छन्द में प्रथम गंगाष्टकम् तथा भुजगंप्रयाग छन्द में द्वितीय गंगाष्टकम्,शंकराचार्य विरचित गंगाष्टकम् तथा गंगा स्तोत्रम् अब्दुल रहीम खान खाना कृत गंगाष्टकम्,धर्मसिन्धु में विद्यमान गंगा स्तुति,पण्डित राज जगन्नाथ कृत गंगा लहरी सत्यज्ञानानन्द तीर्थ विरचित गंगाष्टकम् आदि महत्वपूर्ण स्तोत्र कृतियां उल्लेखनीय है।

इन विभिन्न स्तोत्र ग्रन्थों में गंगा का नैसर्गिक स्वरूप,दिव्य उत्पत्ति,

दिव्य गुण युक्त महात्म्य वर्णित है। जिससे गंगा के प्रति लोक जीवन की सहज श्रद्धा एवं भक्ति का होना सर्वथा स्वाभाविक है। यही कारण है कि मातृ देवी के रूप में जगत पालिनी,पतितपावनी,मोक्षदायिनी गंगा का गौरव एवं महात्म्य स्वतः संसार में संवर्धित है। सप्त नदियों में सर्वश्रेष्ठ गंगा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को अपने हरिद्वार और प्रयाग के कुम्भ पर्वों से निरन्तर बढ़ाती रहती है। इन स्तोत्र काव्यों में गंगा का यही अलौकिक वैशिष्ट्य व्याख्यायित हैं।

षष्ठम

अध्याय

गंगा पर आधृत
अर्वाचीन संस्कृत
काव्यों का अध्ययन

षष्ठ अध्याय

गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्यों का अध्ययन

प्राचीन संस्कृत वाङ्.मय का अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि गंगा सम्बन्धी अनेक आख्यान एवं ऐतद् विषयक रोचक काव्य हमें प्राप्त होते है। जिनमें गंगा के स्वरूप का नैसर्गिक चित्रण एवं इनके अनुपम महत्व का सुन्दर निरूपण किया गया है। वर्तमान परपेक्ष्य में लोकजीवन से प्रभावित पर्यावरण प्रदूषित विकृत प्रायः गंगा के विभिन्न सामाजिक,आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक अक्षुण्ण प्रभावों को भी अर्वाचीन काव्य कारों ने सरस रूप से व्याख्यायित किया है। प्रस्तुत अध्याय में गंगा पर आधृत ऐसे अर्वाचीन संस्कृत काव्यों का संक्षेप में समीक्षात्मक परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है। जिनमें गंगा की अलौकिक उत्पत्ति, स्वरूप एवं दिव्य महत्व निरूपित है।

गंगा सागरीयम्

इस काव्यकृति की रचना पं. विष्णुदत्त शुक्ल द्वारा की गयी थी। इनका जन्म सन् १८८५ में उ०प्र० ग्राम कर्नाईपुर जिला उन्नाव में हुआ था। इनके पिता स्व. पं. मिश्रीलाल शुक्ल तथा माता श्रीमती शिवरानी देवी थी शुक्ल जी की प्रारम्भिक शिक्षा उन्नाव में ही हुयी तत्पश्चात् वाराणसी चले गये। अपने पिता के एक मात्र पुत्र होने पर भी वह बाहर जाकर कुछ असाधारण कार्य कलाप से सम्बद्ध होकर सार्वजनिक हित साधना में प्रवृत्त होना चाहते थे। इसलिये वे बम्बई कलकत्ता और कानपुर जैसी महानगरियों में रहें । कानपुर में अमर शहीद स्व०. गणेश शंकर विद्यार्थी के दैनिक प्रताप समाचार पत्र में भी कुछ समय तक सम्पादकीय विभाग में कार्य किया जहां उनकी पं. बालकृष्ण शर्मा नवीन श्री कृष्णदत्त पालीवाल,पं. बनारसी दास चतुर्वेदी,प्रभृति साहित्य सेवियों तथा देशभक्तों का सम्पर्क लाभ हुआ।

शुक्ल जी ने बम्बई,कलकत्ता के बाद कानपुर में निजी प्रेस लगाया। बाराणसी में स्नातकीय शिक्षा के पूर्व ही आचार्य जे.पी. कृपलानी के नेतृत्व में असहयोग

आन्दोलन में सम्मलित हुये, इसी कारण उनको हिन्दू कालेज काशी छोड़ना पड़ा। आचार्य कृपलानी, सम्पूर्णानन्द जी तथा शिवप्रसाद गुप्त की प्रेरणा से काशी विद्यापीठ में कुछ दिन शिक्षा प्राप्त की तथा वहां अध्यापन कार्य भी किया

कवि ने गंगा सागरीयम् के अतिरिक्त सौलोचनीयम् की भी रचना की थी उन्होने हिन्दी साहित्य में भी सुलोचना सती नामक एक अद्वितीय कृति की रचना की। आपने संस्कृत साहित्य के संर्वधन के लिये अपनी हिन्दी कृति सुलोचना सती का संस्कृत में अनुवाद भी किया।

शुक्ल जी ने अपनी सुप्रसिद्ध कृति ''गंगासागरीयम्'' का प्रकाशन बृजलाल वर्मा के द्वारा करया जावे ऐसा एक पत्र में लिखकर उन्हें भेजा। तत्पश्चात १९६४ में यह आत्मा परमात्मा में लीन हो गयी। तदन्तर बृजलाल वर्मा ने १९८२ में इसका विधिवत् प्रकाशन कराया। यह काव्य साहि[illegible]की अनुपम कृति है।

उन्होंने गंगा सागरीयम् में सुन्दर परिव[illegible]के गंगा का विवाह सागर से कराने दिया तथा इसी प्रयोजन से इसका नाम गंगा सागरीयम् रखा। इसके शीर्षक [illegible]ाकिंत है-

१. राज्यवर्णनम् २. कथारम्भः ३. वरप्रदानम् ४. गंगाजन्म ५. बाल लीला ६. दूतानुबन्धः ७. उद्योग प्रकरणम् ८. प्रस्थानम् ९. सागरमिलनम्

इस गंगासागरीयम् कृति में कवि ने पहले हिमालय के राज्य का मनोहारी वर्णन किया इनका राज्य आसाम् से पेशावर तक फैला हुआ था राज्य में सुन्दर वाटिकाये वृक्ष,लता,हरियाली थी।अतः राज्य सम्पूर्ण रूप से सम्पन्न था।

दृश्यानि रम्याण्यभिरजंनाय,पयोविहाराय जल प्रवाहा ।
आखेट हेतोश्च वनप्रदेशा,विनिर्मितास्ते स्वयमेव राज्ञा ।।

राज्यवर्णनम्-७

दूसरे शीर्षक में राजा को सन्तान प्राप्ति के लिये चिन्तित दिखलाया गया

तथा तीसरे शीषर्क में भगवान शंकर द्वारा वर प्रदान का वर्णन है। चतुर्थ शीर्षक में गंगा का जन्म तथा पंचम शीर्षक में उनकी बाल क्रीडा का वर्णन बड़ा ही चिन्ताकर्षक है। षष्ठ शीर्षक में गंगा का सागर से विवाह के लिये दूत भेजा गया फिर वह उद्योग प्रकरण में काशी पहुंची और उन्होने प्रस्थान किया। नवें शीर्षक में सागर से मिलन का मनोहरी चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

गंगा सागरीयम् में प्राकृतिक दृश्यों का मनोहारी चित्रण प्रस्तुत किया गया है। गंगा सामगरीयम् की भाषा बहुत ही सरल,चिक्ताकर्षक एवं हृदयग्राही है। इसमें अलंकारों की छटा सुस्पष्ट दिखलायी देती है। इनमें छन्दों का प्रयोग भी हुआ है।

गंगा सागरीयम् की कथावस्तु को आधार बनाया जावे तो इस कृति को खण्डकाव्य की गणना में रख सकते है,परन्तु यदि इसके लक्षणों को देखा जावे तो इसे महाकाव्य की श्रेणी में रखा जावेगा अतः इसे खण्डकाव्य और महाकाव्य के बीच की कोटि में रखा जा सकता है।

गंगा सागरीयम् काव्य रचना का सम्पादन लोक सेवा आयोग उत्तर प्रदेश के पूर्व सदस्य डा० बृजलाल वर्मा द्वारा किया गया तथा उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादमी के आर्थिक सहयोग से इसका प्रकाशन भावना प्रकाशन इलाहाबाद से १५ अगस्त १९८२ को किया गया। जिससे इसके रचनाकार दिवगंत स्वाधीनता सेनानी पं. विष्णुदत्त शुक्ल को श्रद्धाजंलि समर्पित की गयी।

वस्तुतः गंगासागरीयम् गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्य कृतियों में एक अनुपम काव्य रचना है। जिसका आद्योपान्त अनुसंधान पूर्ण अनुशीलन अवश्य किया जाना चाहिये जिससे गंगा गौरव को यथावत ग्रहण किया जा सके।

रक्षत गंगामु

रक्षत गंगाम् घाट काशी से प्रकाशित डा० कमला पाण्डे द्वारा रचित एक अनूठी संस्कृत कविता पुस्तक है। विवेच्य रचना मूलरूप से देववाणी संस्कृत के सन्तुलित छन्दों में विरचित हैं। उन्होनें इस काव्य में गंगा की व्यथा का चित्रण किया है।

इस काव्य कृति में गंगा के गौरवमय अतीव,मलिन वर्तमान और संकटापन्न वातावरण के उत्पन्न होने की पर्याप्त चेष्टा है। वास्तव में 'रक्षत गंगाम्' पर्यावरण प्रदूषित गंगा रक्षा की करूण पुकार है। पर्यावरण चेतना के प्रति सामाजिक पुर्नजागरण का मुखर आवह्मन हमें इस कार्य के लिये पर्याप्त प्रेरणा देता है। विदुषी अनुवादिका अनुराधा वैनर्जी ने तरल शैली में अग्रेजी भावानुवाद प्रस्तुत कर रक्षत गंगाम् को विश्व चेतना के उन्मीलन का सुन्दर माध्यम बनाया है। इस पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर मकरासन पर बैठी हुयी गंगा मानो देवी रूप में दर्शन देकर स्वयं को दूषित न करने का संकेत दे रही है।

गंगा केवल सामान्य जलधारा नहीं, भारतीय एकता और अखण्डता की सम्वाहिका तथा सभ्यता और संस्कृति की धारा है। भारत के गरिमामय अतीत की पहचान है। इस देश के ऋषियों,मुनियों और विचारकों ने इसके तट पर सच्चे जीवन दर्शन को समझा। भारत की सभ्यता और संस्कृति इसके तट पर फूली-फली। गंगा कोई साधारण नदी नहीं,संसार भर की नदियों की प्रतिनिधि है।

किन्तु आज के प्रदूषण भरे माहौल में सबसे बड़ी समस्या जल-प्रदूषण की है,जो मानव के अस्तित्व के लिये भयंकर खतरा बन चुकी है। इस संकट के विषय में आज गहराई से सोचने की आवश्यकता है। आज जीवन के आधार भूत तत्व जल की रक्षा के लिये एकजुट होने की जरूरत है। इस जल प्रदूषण को रोकने की शुरूआत क्यों न गंगा प्रदूषण को रोकने से की जाये।

गंगा को प्रदूषण मुक्त करने का तात्पर्य है उसमें मिलने वाली सभी सहायक नदियों के प्रदूषण को रोकना। गंगा की प्रदूषण मुक्त करने का तात्पर्य है, विश्व की सभी नदियों को प्रदूषण मुक्त करने की चेतना का अह्मवान करना।

भारत की आस्था गंगा के दैवी रूप से जुड़ी है,इसीलिये उसे स्वर्ग की नदी कहा जाता है। भारत की आस्था आध्यात्म से जुड़ी है,इसीलिये गंगा पराचेतना है। भारत की आस्था तीर्थो में है, इसीलिये गंगा सतत् प्रवहमान नदी है।

भारतीय मनीषा ने गंगा को निराकार,नरकार और नीराकार माना है। इसी अवधारणा को केन्द्रित कर 'रक्षत गंगाम्' महाकाव्य उत्पत्ति,यात्रा,आध्यात्म,प्रदूषण और निवारण पांच प्रकरणों में विभक्त है। रसों की मधुरता एवं अलंकारो की सहजता से सर्जी-संवरी यह कृति ग्यारह सर्गों में पूरी होती है। उत्पत्ति प्रकरण में गंगा के आर्विभव और अवतरण की कथाओं का आख्यान करते हुये उसके महिमामय अतीत का चित्रांकन है।

यात्रा में श्री गंगा के मूल उद्गम गोमुख से प्रारम्भ कर तमाम तीर्थों के महत्व का प्रतिपादन तो है ही साथ ही वर्तमान समय में प्रदूषण से बोझिल गंगा का करूण चीत्कार उपभोक्तावादी अपसंस्कृति पर करारी चोट है। आध्यात्म प्रकरण में गंगा के उस चिरंतन स्वरूप को दर्शाया गया है, जिसके अनुशीलन से वर्तमान सभ्यता के मानसिक प्रदूषण का निराकरण सम्भव है। अमृत जल की संवाहिनी गंगा का नदी रूप दिनों-दिन मलिन होता जा रहा है। ऐसा ही रहा तो उसके स्वरूप के खो जाने की आंशका है। इसी पीड़ा को प्रदूषण सर्ग में बड़े मार्मिक शब्दों से उकेरा गया है।

गंगा को प्रदूषण से बचाने के लिये छोटे-मोटे संकल्पों को नहीं भीष्म प्रतिज्ञा की आवश्यकता है। आज के उन्नत वैज्ञानिक युग में गंगा को गंदगी से बचाना न तो कठिन है और न ही असम्मभव। कुशल तकनीकीवेत्ता एवं संसाधनों से युक्त वैज्ञानिक उन प्रदूषणकारी अवजल संवाहको को गंगा में मिलने से रोक सकते है,जो उसे तेजी से नष्ट कर रहे है। उन रासायनिक द्रवों को,जो जल के जीवतत्व को नष्ट कर रहे है, रोकना ही होगा, जिन्हे पचाने की शक्ति गंगाजल में नहीं हैं। उन विषैले पदार्थों को गंगा में जाने से रोकने का काम आज का विकसित समाज यदि चाहे तो अवश्य कर सकता है। यदि जनमानस भोगवादी मनोवृत्ति से ऊपर उठकर अपनी आराध्यदेवी गंगा को स्वच्छ बनाने के लिये कटिबद्ध हो जाये और अपने उपकारक प्रकृति और पर्यावरण के संतुलन को बनाये रखने का दृढ़ संकल्प करे तो प्रदूषण की गम्भीर समस्या से निपटा सा सकता हैं।

संस्कृत,हिन्दी एवं अंग्रेजी तीन भाषाओं में गुथी हुई यह काव्यकृति गंगा

के त्रिपथगा नाम को सार्थक कर रही है। 'रक्षतगंगाम्' का प्रकाशन १९९८ में श्रीमती पब्लिकेशन्स बी ४/६० हनुमान घाट वाराणसी से हुआ। हिन्दी और अंग्रेजी में अनुराधा बनर्जी द्वारा भावानुवाद किये जाने से 'रक्षत गंगाम्' काव्य रचना अत्यन्त सुबोध एवं भावगम्य हो गई है।

गंगा विषयक अर्वाचीन काव्य साहित्य में इस रचना का वस्तुतः महत्वपूर्ण स्थान है।

> The Ganga, especially,is the river of india. beloved of her people,round which are enterturied her racial memories her hopes and fears, her songs of triumph,her victories and her defeats,She has been a symbol of India's age-long culture and civilization,ever-changing ever-flowing and yet ever the same Ganga.

भारत के स्वनाम धन्य दिवगंत प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने अपनी पुस्तक में गंगा के स्वरूप को अनेक प्रकार से महिमा मण्डित किया है। नेहरू जी लिखते है कि गंगा प्रमुख रूप से भारत की नदी है जहां के व्यक्ति इसके बहुत प्रेम करते है।

उसकी जातिगत स्मृतियां,उसकी आशायें, भय, विजयगीत, विजय और पराजये गुम्फित है। गंगा नदी भारत के बहुत पुरानी सभ्यता और संस्कृति के प्रतीक है यद्यपि यह सदैव परिवर्तन होती रहती है फिर भी यह वही गंगा है।

नेहरू जी लिखते है। कि यह मुझे वर्फ से ढकी हुयी चोटियों हिमालय की गहरी घाटियों का स्वमरण कराती रहती है और इन सब से मुझे बहुत प्रेम है। यह मुझे समूह और विशाल नीचे के मैदानों का स्मरण दिलाती है। जहां पर हमारा जीवन

व्यतीत हुआ है और जो हमारे कार्य क्षेत्र रहे है। गंगा प्रातःकाल सूर्य के प्रकाश में मुस्कराती और नृत्य करती है और जब सायंकाल की काली छाया पड़ती है तो यह काली और गम्भीर दृष्टिगोचर होती है।

जाड़े के दिनों में यह धीमी,कम चौड़ी और रम्म धारा के रूप में रहती है। परन्तु बरसात में यह विशाल और गरजती हुयी धारा के रूप में परिवर्तित हो जाती है। उस समय इसका वक्षस्थल इतना विराट हो जाता है। जितना की समुद्र उस समय उसमें नेहरू के अनुसार समुद्र के समान ही विनाशात्मक क्षमता ही सृजित हो जाता है। नेहरू जी लिखते है कि गंगा मेरे लिये भूतकाल की स्मृति और अतीव का प्रतीक है। यह वर्तमान में भी चल रही है। और भविष्य के विशाल सागर की ओर बढ़ती रहती है।

गंगा गरिमा

<u>जीवन परिचय</u>- गंगा गरिमा काव्य रचना के रचयिता साहित्यवारिधि डा० कैलाश नाथ द्विवेदी का जन्म ११.१.१९४२ को ग्राम बैना (कानपुर देहात) में हुआ। इनके पिता का नाम पं. श्री सुदर्शन लाल द्विवेदी हैं। द्विवेदी जी की शिक्षा,दीक्षा वैना,राजपुर और कानपुर में हुई जहां से इन्होने साहित्याचार्य,साहित्य रत्न पी०एच०डी० और डी०लिट्०की उपाधियाँ ससम्मान प्राप्त की। ये जनता महाविद्यालय अजीतमल (इटावा) में १९६७ से १९९० संस्कृत विभाग में अध्यक्ष रह चुके है और बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोंच जालौन के पूर्व प्राचार्य एवं संयोजक संस्कृत पाठयक्रम शोध उपाधि समिति कलासंकाय तथा कार्य परिषद के सदस्य थे।

<u>सम्मान एवं पुरस्कार</u>- डा० कैलाशनाथ द्विवेदी जी ने १९९३ में आगरा विश्वविद्यालय से उ०प्र० कुलाधिपति पदक,१९८५ और ९२ में उ०प्र० संस्कृत अकादमी पुरस्कार १९८६ में बिहार सरकार का अखिल भारतीय डा. काशी प्रसाद जायसवाल पुरस्कार,१९९५ में महावीर पुरकार,१९९९ एवं २००० में दिल्ली संस्कृत अकादमी पुरस्कार,२००० में विश्व हिन्दी सम्मेलन में ''राष्ट्रीय सहस्त्राब्दी हिन्दी सेवी सम्मान'' संस्कृत अकादमी पुरस्कार प्राप्त किया और अनेक साहित्यिक श्रेष्ठता सम्मान एंव पुरस्कार प्राप्त किये है।

...व ...का ...क्तित्व एवं कृतित्व

<u>व्यक्तित्व</u>- ... ...क्ति की सम्पूर्ण शारीरिक विशेषताओं एवं मानसिक प्रवृत्तियों की समन्वित ई...इ ... ...त्व है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत जिनकी परिगणना होती है, उन में प्रेरणा..., ...ओं, अनुभव जन्म मानसिक दशायें, रूचि, दृष्टिगोचर कोण,विचार आदर्श एवं अ... ...त्र है। यद्यपि व्यक्तित्व के पक्ष अनन्त है फिर भी तथ्यात्मक विभाजन में ... ...कार का हो जाता है।

१. शारीरिक २. मानसिक ३. चारित्रिक

...यदि उन्हें व्यक्तित्व का प्रकार मात्र कहा जाये तो व्यक्तित्व को इनका सक्रिय संगठन मात्र कहा जा सकता है कोई भी कलाकृति उसकी सर्जना करने वाले कलाकार के ...प होती हैं।यदि हमें कलाकार के व्यक्तित्व का ज्ञान हैं,तो हमें उसकी कृति क... ...ुशीलन में सहायता प्राप्त होती है।

...हरण में सम्प्राप्त काव्य प्रकाश के एक श्लोक में यह बात अभिव्यक्ति को प्राप्त ... है।

...रमिव हसन्ती कविवदनाम्बुरूहबद्धविनिवेशा।
दर्शयाते भुवनमण्डलमन्यदिव जायतु स वाणी।।''

(काव्यप्रकाश चतुर्थ उल्लास)

यह वाणी विजयनी हो,जो मानो बुढ़े ब्रह्म का उपहास करती हुई कविके वदन कमल में निवास करती हुई संसार का कुछ दूसरे ही प्रकार से प्राकट्य करती है।कहने का तात्पर्य हैं कि जिसप्रकार इस संसार के वैविध्य,वैचित्र्य या सौन्दर्य में हम प्रजापति के विराट् व्यक्तित्व का अनुमान लगा सकते हैं उसी प्रकार काव्य के अध्ययन से हम कवि के व्यक्तित्व को समझ सकते है।

व्यक्तित्व के विषय में कुछ बातें बतलाते हुये मैं डा० कैलाश नाथ द्विवेदी के सहज एवं उदात्त व्यक्तित्व की कुलीन कल्लोलिनी में अवगाहन को तत्पर हो रही हूँ। इस बात में बिल्कुल सन्देह नहीं किया जा सकता है कि डा० कैलाशनाथ द्विवेदी के व्यक्तित्व का प्रत्येक पक्ष परम आकर्षक है। डा.साहब एक आदर्श व्यक्तित्व के व्यक्ति है,इनके सहज एवं सर्वजनाभिन्ध व्यक्तित्व का चाहे शारीरिक पक्ष हो, सामाजिक पक्ष हो चाहे मानसिक पक्ष हो, हार्दिक पक्ष हो, आत्मिक पक्ष हो, सामाजिक पक्ष हो, सैद्धान्तिक पक्ष हो सर्वत्र समान रूप से मनोहरता एवं सरलता प्रकट हुआ करती है। एक महान व्यक्ति के व्यक्तित्व में जो गुण होते है, वे सारे गुण डा० कैलाशनाथ द्विवेदी के व्यक्तित्व में विद्यमान है। द्विवेदी जी का चारू चरित्र आदरणीय है। उनके बहुआयामी आनन्त्य,भावावेष्टित,विशद व्यक्तित्व में तुच्छता एवं [illegible] राग,द्वेष,ईर्ष्या,असूया प्रभृति कलुषाधृत भावनायें प्रवेश नहीं कर पाती है। उनकी ओजस्विनी वाणी एवं तेजपूर्ण मुखमण्डल के समक्ष दुष्प्रवृत्तियों एवं दुर्भावनाओं की सत्ता का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता हैं।

इस प्रकार हम कह सकते है कि एक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति में जितने गुण होते है, उन सभी गुणों के वे धनी है। एक सहृदय विद्वान् व्यक्ति के समान डा० कैलाशनाथ द्विवेदी एक [illegible] व्यक्तित्व के धनी है एवं हम जितना भी इनके व्यक्तित्व के विषय के विषय में कहे वह बहुत कम हैं।

कृतित्व- द्वि[illegible] प्रमुख कृतियां इस प्रकार है:

१. कुसुमांजलि २. गुरुमहात्म्यशतकम् ३. शाकुन्तलीयम् ४. कालिदासीयम्

५.गंगा-गरिमा ६. लेखांजलि ७. महाकवि कालिदास ८. कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थलों का प्रत्यभिज्ञान ९. ऋग्वैदिक भूगोल १०.भारतीय संस्कृति की रूपरेखा ११. भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा की भूमिका १२ नाटककार हस्तियल्य १३ कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र १४ संस्कृत कवियत्रियों का व्यक्तित्व एवं कृतियॉं १५ जीवन अपराजित १६ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक निबन्ध १७ ममता के बन्धन आदि। इसके १०० से भी अधिक शोध निबन्ध शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित है। कैलाशनाथ द्विवेदी द्वारा रचित गुरू महात्मयशतक एक अनुपम कृति हो जो कि गुरू के महात्म्य में लिखी गयी हैं, जिसमें गुरू की विशेषतायें बतलायी गयी है। जिससे गुरू के बारे में पढ़कर हमारे मन में गुरू के प्रति श्रद्धा का भाव उत्पन्न होता है।

राष्ट्रीय स्तर की स्तरीय संस्कृत एवं हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में डा० द्विवेदी की अधिसंख्य साहित्यिक रचनायें-कविता,कथा,रूपक,(एकांकी नाटक) लेख प्रकाशित हो चुके हैं तथा आकाश वाणी के लखनऊ और छतरपुर केन्द्रों से प्रायः प्रसारित होती रहती है, जो साहित्य प्रेमियों से प्रशंसित और बहुचर्चित है।

गंगा गरिमा

गंगा गरिमा शीर्षक काव्य रचना में पौराणिक पृष्ठ भूमि पर डा. द्विवेदी ने गंगा गौरव को व्याख्यायित किया है। इसके वर्ण्यविषय में प्रख्यात वृत्तासुर वध के पास से इन्द्र का पावन गंगा जल सेवन करना काव्यात्मक रूप में वर्णित किया गया है। यथा-

कदाचिदिन्द्रो दनुनाशखिन्नः संतापतो वृत्रवधाद्विभीतः ।
आगत्य भूमौ सुरलोकधाम्नः पवित्रगंगासलिलं सिषेवे ।।

गंगा गरिमा 1

गंगा की अलौकिक उत्पत्ति के सम्बन्ध में रचनाकार की यह अवधारण सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है।

या ब्रहणो दिव्य मण्डलोर्वैं,या विष्णुपादात् खलुनिष्क्रमन्ती ।
शम्भोः शिरस्था शुचितां दधानां, नगाय गंगा गुरूतां ददाति ।।

गंगा गरिमा २

गंगा के उद्भव के सन्दर्भ में सूर्यवंशी सम्राट भगीरथ का साधना जन्य अवदान सर्वथा सराहनीय ओर स्मरणीय हैं। इस सन्दर्भ में निम्नांकित पद्य दृष्टव्य है-

भगीरथस्याद्भुतभक्तिधारा, पुण्या पतकेव रथस्य तस्य।
संसिद्धिरूपा तपसेव लब्धा,भागीरथी भारतभव्यभावा ।।

गंगा - गरिमा।३

[illegible] राष्ट्रीय समृद्धि के मूल में मानव की प्रगति बढ़ाने वाली है जैसा कि [illegible] का [illegible]न है-

[illegible]न्तु [illegible]ंगा गतिरेव दिव्या,भव्या च भक्तिर्भुवि भारतनाम्।
इयं वरेण्या भवभूतिदात्री,धात्रीव पुष्णाति पवित्रराष्ट्राम् ।।

गंगा गरिमा ४

सांसारिक सुख शान्ति के मूल में भी गंगा ही है,लोकजीवन के सन्ताप को हरने वाली गंगा ही हैं। रचनाकार की इस सन्दर्भ में सरस अवधारणा है।

इयं हि गंगा भवतापहंत्री,गंत्रीव लोकं गतिमानदात्री ।
इयं प्रदात्री सुखशान्तिभावं, धात्रीवपुष्णाति जनं सदैव।।

गंगा गरिमा ५

वस्तुतः गंगा पुरूषार्थ चतुष्टम की सिद्धि स्वरूपा मोक्ष दात्री मानी गयी है तथा सांसारिक समस्त सिद्धियों की सोपान स्वरूपा संलक्षित है। इस सन्दर्भ में रचनाकार की यह अवध ारणा समीचीन प्रतीत होती है।

इयन्तु सर्वेन्नतिसिद्धिभूता,सोपानरूपा सततं नाराणाम्।
भागीरथी ज्ञानविमुक्तिदात्री,नेत्रीव मार्ग नयतीव पुण्यम् ।।

गंगा गरिमा ६

पौराणिक पृष्ठभूमि पर इन्द्र को ब्रह्म हत्या के पातक से मुक्त करने के लिये गंगा तटीय वर्तमान शक्रतार शक्रावतार आज भी तीर्थ के रूप में सुविख्यात है जैसा कि कवि का कथन है।

स्वकीय पापादनुतापमुक्तो,विमुक्तिकायः सुरनाथ आशु।
गंगाजले यत्र ममज्ज भीत्या,शुक्रावतारं कथयन्ति सर्वे।।

गंगा गरिमा ७

सुप्रसिद्ध तीर्थ के रूप शक्रावतार अथवा शचितीर्थ का महत्व शकुन्तला ने भी समझा था। आज भी यहां गंगा दर्शन और तीर्थ स्नान का महत्व मानव मुक्त के लिये सर्वविदित है।

गंगा दर्शनपुण्यार्थी स्नानं कृत्वा शुभाय वै।
गंगालाभे विमुक्तोऽस्ति गंगैव सुगतिन्नृणाम् ।।

गंगा गरिमा ८

समासतः गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्य कृतियों में गंगा-गरिमा एक महत्वपूर्ण रचना हैं। जिसमें भारत वर्ष की सप्त नदियों में सर्वप्रथम इस गंगा के स्वरूप एवं महात्म्य का निर्वचन इस सरस काव्य रचना में प्राप्त होता है। जिसके आद्योपान्त अध्ययन की अत्यन्त आवश्यकता है।

दृष्टव्य काव्यामाला प्रणेता डा. कैलाश नाथ द्विवेदी कुसुमकुलाय अजीतमल औरय्या २००३

डा० चन्द्र भानु त्रिपाठी द्वारा विरचित मङ्.गल्या नामक कृति संस्कृत साहित्य की एक अनूटी कृति है। चन्द्र भानु त्रिपाठी का जन्म फाल्गुन शुक्ल की दशमी को सवत् १६८१ में यमुना के किनारे इकडला नामक ग्राम जिला फतेहपुर उ०प्र० में हुआ था। इनके पिता वेदों को जानने वाले थे उनका नाम बालक राम त्रिपाठी था। इनकी माता का नाम शिवा देवी था। इन्होंने आचार्य की (नव्यव्याकरण साहित्य) में उपाधि हासिल की।

साहित्य कृतयः

१. वेद-दीपिका २. संस्कृत-निबन्धादर्शः ३. 'चारूदत्तम्' (टीका) ४. 'मेघदूतम्' (टीका)५. 'चारण-काव्य रामकीर्ति कुमुद माला' (संस्कृत हिन्दी टीका) (उत्तर प्रदेश-संस्कृत अकादमी प्रदत्तानुदानेन प्रकाशिता) ६. 'संस्कृतगीतामाला गीताली' (उत्तरप्रदेश शासकेन पुरस्कृता) ७. 'संस्कृत नाटिका सुजाता' (उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादेमी-पुरस्कृता) ८. ज्योतिषग्रन्थ टीका जातक [illegible]रः (उत्तरप्रदेश संस्कृत पुरस्कृतश्च प्रदत्तानुदानेन प्रकाशितः पुरस्कृतश्च)

६. संस्कृत नाटिका उर्वशी (उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादेमी पुरस्कृता) १०. मंगल्या (गीतकाव्यसं.) शक्ति प्रकाशन,प्रयाग,सं. २०४५ (१६८८ ई.)

हे तुडं तरंगे गंगे!

संस्कृत सु[illegible]वि एवं नाटककार स्वर्गीय डा. चन्द्रभानु त्रिपाठी ने हे तुंग तरंगे गंगे..........शीर्षक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर गंगा पर आधृत अपने सुन्दर भावोद्‌गार व्यक्त किये है। उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं यहाँ गंगा विषयक एक सरस गीत जिसमें गंगा की उत्पत्ति,उसके नैसर्गिक स्वरूप एवं भौतिक महत्व पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है-

हे तुगं तरंगे गंगे! तव पुण्यं वृत्तं विदितम्।
हरिपादाङ्.गुष्ठसम्भूतं ब्रह्मणः कमण्डलुभरितम्,
तव जलं भगीरथतपसा शिवशिरसि समापतितम्,
शीतले [illegible]ने स्वच्छन्दोच्छलनं बलनम्,
हिममये हिमवतः क्रोडे कूर्दनमुच्चलनं ललितम्,

गह्वरः- प्रतिध्वनिपूर्णम् ते वारि ब्रजत्यतितूणम्

क्वचिदस्ति गभीरमगम्यम् क्वचिदुपलबन्धुरे स्खलितम् ।

हे तुगं तरंगे गंगे! तव पुण्यं वृत्तं विदितम् ।

अधोलिखित पक्तियों में हिमालय से निकलने वाली गंगा के सुप्रसिद्ध महत्वपूर्ण तीर्थों एवं सहायक नदियों को इस प्रकार परिचित कराया गया है।

हिमगिरेरिदं ते गमनम् लवणार्णवजले विलयनम्

सुस्थलं वारि-परिपूतम् गंगायाः क्षेत्रं कथितम्,

कनखले गत प्रतिषिद्धम् मातृत्वं तत्र चारब्धम्

तव पयसोत्पादितमन्नं बहुफलमस्माभिः स्वदितम्,

गोमती-गण्डकी-सरयू-शोणाद्याः सरितोमिलिताः,

तस्माते वपुः स्थविष्ठं जातं च महत्त्वं गुणितम् ।

हे तुगं तरंगे गंगे......................................

गंगा तटीय पावन मोक्ष धाम काशी का महत्व एवं प्रभाव निम्नलिखित प्रासादिक पद में वर्णित है।

तव तट इतिहास-सुवेत्ता माऽतीता देश महत्ता

यद्धरिद्वारमाख्यातम् तद्यशः सुरैरपि गीतम् ,

यत्रासन् दशाश्वमेधाः ब्रह्मणः प्रयागः सोऽयम्

यमुनया यत्र सगंत्या सितजलेनासितं मिलितम् ,

शिवपुरी सुविदिता काशी मरणेन यत्र भव-मुक्ति,

यन्मगधवैभवं भूतं पाटलीपुत्र-संवदितम् ।

हे तुगं तरंगे गंगे.........................

गंगा को मोक्षप्रदायिनी मानते हुये कवि का यह विचार सर्वथा समीचीन प्रतीत होता हे। इसमें सगर सुतों के भागीरथ प्रयास से मोक्ष लाभ होने की मार्मिक

अभिव्यंजना इन शब्दों में दृष्टव्य है।

मृत-सागर-सुतोद्धारार्थ सन्तप्तजन-त्राणार्थम्,
पयसा पुष्णन्त्याः सर्व ते व्वारि पयोधौ मिलितम्,
तद् गंगा-सागरनाम्ना तीर्थ पवित्र माख्यातम्
अद्यापि वेदयति सर्व कपिलस्य महर्षेश्वरितम्,
यद्यपि नानानादेय गीयते तदपि तद् गांगम्
पावनता सैवाऽक्षुण्णा तद् यशो न किचिंद्‌गलितम् ।
हे तुगं तरंगे गंगे...

डा. त्रिपाठी ने भागीरथी गंगा का महात्म्य इन ललित शब्दों में निरूपित किया है-

तव वारि पवित्रं पीत्वा मुनिभिंस्तत्वं विज्ञातम्
त्वत्तीरवासिभिः सद्भिः सुकृतं स्वं साध्यं विहितम्,
भूरियं संस्कृते सीता भूमौ गरीयसी गीता
मृत जीवस्यास्थिविसर्गो गंगाडम्भसि जरयति दुरितम्,
भुक्ति युक्ति प्रददाना योगक्षेयं कुर्वाणा।
या भवति नाकनिश्रेणी सा कुर्याद्राष्ट्रं मुदितम् ।
हे तुगं तरंगे गंगे.................................

समासत गंगा पर आधृत अर्वाचीन संस्कृत काव्यकारो में डा. चन्द्रभानु त्रिपाठी का सारस्वत अवदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनकी गंगा विषयक अनेक गीत रचनायें आज भी सहृदयों का कण्ठहार बनी हुयी है।

गंगा पर आधृत अन्य प्रकीर्ण संस्कृत काव्य-

गंगा के गौरव और महत्व को ध्यान में रखते हुये संस्कृत के रस सिद्ध अनेक कवियों ने गंगा विषयक सुन्दर काव्य कृतियों की समय-२ पर रचना की है। अर्वाचीन संस्कृत काव्य साहित्य में इन रचनाओं का निसन्देह महत्वपूर्ण स्थान है। गंगा विषयक इन काव्यकृतियों एवं उनके रचनाकारों का संक्षेप में यहां हम परिचय प्रस्तुत कर

रहे है।

गंगा सुर तरंगिणी

गंगा विषयक इस उत्तम काव्य कृति के रचयिता सुकवि श्री विश्वेश्वर विद्याभूषण हैं जिनका आविर्भवि २०बी. शताब्दी में ही हुआ। इनकी अनेक काव्य रचनायें संस्कृत काव्य प्रेमियों को सुलभ हुई है। जिनमें गंगा सुरतरंगिणी के अतिरिक्त 'काव्यकुसमांजलि' बनवेषु' (गीतिकाव्य) उल्लेखनीय है।

गंगा सुरतरंगिणी एक सरस एवं ललित काव्य रचना है जिसमें देवापगा गंगा की दिव्य उत्पत्ति अलौकिक स्वरूप तथा दिव्य प्रभाव,पौराणिक आख्यानों के आधार पर सुकवि श्री विश्वेश्वर विद्याभूषण द्वारा व्याख्यायित है। गंगा सुरतरंगणि का काव्य सौष्ठव, भाव पक्ष, तथा कला पक्ष दोनों में ही अत्यन्त उत्कृष्ट है।

वैदर्भी रीति की यह उत्तम काव्य रचना अपने स्वाभाविक रचना शिल्प के द्वारा सर्वथा सहृदय संवेदय हैं।

गंगा लहरी

पं. राज जगन्नाथ के अतिरिक्त एक अन्य अनुपम काव्य रचना गंगा लहरी भी प्राप्त होती है जिसके रचनाकार 'यशस्वी कवि' श्री के.वी.एन. आप्पाराव है। श्री आप्पाराव संस्कृत कालेज कोब्बूर (आन्ध्रप्रदेश) के प्राचार्य थे तथा इनके द्वारा यह काव्य रचना गंगा लहरी कोब्बूर में ही प्रकाशित की गई गंगा लहरी का पद लालित्य छन्दोलंकार योजना सराहनीय हैं। जिसमें इस काव्य कृति का गीति तत्व अत्यन्त सशक्त और प्रभावी प्रतीत होता हैं। गंगा लहरी में गंगा का श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक महात्म्य कवि द्वारा कीर्तित हैं। गीतकाव्य साहित्य में गंगालहरी एक महत्वपूर्ण काव्य रचना है।

अर्वाचीन सांस्कृतिक कवियत्रियों ने भी गंगा पर आधृत सरस रचनायें समय समय पर प्रकाशित की है। इस दृष्टि से यहां सेण्ट जॉन्स कालेज आगरा की संस्कृत प्राध्यापिका डा. मंजूलता शर्मा की गंगे शीर्षक रचना उदाहरणार्न्थ प्रस्तुत है।

गंगे

गंगे त्वं प्रवहसि युगे-युगे

त्वं विहरसि शश्वद् युगे-युगे

1. आगत्य जटाजूटे शम्भो त्वं समागता धरणीपृष्ठे
   मुक्तिं दत्वा मनुजेभ्यस्त्वं प्रपुनासि भवं हे भवनिष्ठे
   स्वर्गे लोके पातालेऽहं कथयन्ती नन्दसि युगे-युगे
2. सर्वान्कम्पित हृदयान्मलिनान्प्रक्षालनकर्मभिराचुम्बसि
   त्यागस्ते जीवनमिह मातः त्वं पापं नैव समालम्बसि
   एवं भूतां शुभ्रां पूतां प्रणमामि सदा त्वां युगे-युगे
3. त्वं व्यथिता शोक समाकृष्टा प्रतिभासि युगान्ते भागीरथि
   दूषिता प्राणिभिर्मन्दाकिनि न तथापि निसर्गमथाक्रामसि
   सर्वदा हृदुल्लासैर्दिव्यै- रभिलषसे भीष्मं युगे-युगे

गंगे त्वं प्रवहसि युगे युगे, त्वं विहरसि शाश्वद् युगे युगे।

द्रष्टव्य- अर्वाचीन संस्कृतम्, अर्वाचीन संस्कृतपरकं त्रैमासिकं पत्रम् त्रयोविंशे वर्षे द्वितीयोऽकः १५ अप्रैल २००१

गंगा तरंगम्

इस काव्य रचना के प्रणेता यशस्वी राजनेता चक्रवर्ती श्री राजगोपालाचार्य है। संस्कृत साहित्य के गम्भीर अध्येता,विद्वान एवं सुकवि श्री राजगोपालाचार्य जी की संस्कृत साहित्य पर आधृत अनेक अनुसंधानात्मक कृतियों हमें प्राप्त होती है। जिनमें महाभारत में वर्णित गंगा विषयक रोचक आख्यान ध्यान में रखकर गंगातरंगम् की रचना अनेक काव्यशास्त्री विशेषताओं को आत्मसात किये हुये है। गंगा तरंगम् में गंगा का उद्भव स्वरूप एवं महात्म्य सरसतापूर्ण रीति में प्रस्तुत किया गया है। जिससे गंगा के प्रति रचनाकार की श्रद्धा समन्वित भक्तिभावना स्वतः सुस्पष्ट हो जाती है।

अर्वाचीन गंगा विषयक काव्य कृतियों में गंगा तरंगम् का महत्वपूर्ण स्थान है।

समीक्षा- उपरि विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अर्वाचीन संस्कृत काव्यों में गंगा-गौरव सशक्त रूप से प्रतिपादित है। इन काव्यों में अनेक काव्यशास्त्रीय,छन्दशास्त्रीय एवं वर्ण्य विषयगत विशेषतायें विद्यमान है,जिनसे इन काव्यकृतियों की पर्याप्त प्रभावशीलता परिलक्षित है। इन काव्य कृतियों में कविवर स्व. पं० विष्णुदत्त शुक्ल विरचित **'गंगा सागरीयम्'** अर्वाचीन संस्कृत कवयित्री डा. कमला पाण्डेय प्रणीत 'रक्षतगंगाम्', साहित्यवारिधि डा. कैलाशनाथ द्विवेदी कृत 'गंगा गरिमा', सुकवि विश्वेश्वर विद्याभूषण प्रणीत,'गंगा सुरतरंगिणी', प्राचार्य के.वी.एन. आप्पाराव रचित 'गंगा लहरी' सुविख्यात राजनेता चक्रवर्ती श्री राजगोपालाचार्य विरचित 'गंगा तरंगम्' आदि उल्लेखीनय हैं। इन अर्वाचीन सशक्त संस्कृत काव्य रचनाओं से गंगा का दिव्य स्वरूप एवं अनुपम माहत्म्य लोक मानस में प्रतिष्ठापित हुआ है,जिससे गंगा भारत की नहीं,अपितु विश्व की सर्वश्रेष्ठ नदियों में मूर्धन्य मानी जाती है।

सप्तम

अध्याय

गंगा सागरीयम के कर्ता
पं. विष्णुदत्त शुक्ल का
जीवन परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

सप्तम अध्याय

गंगासागरीयम् के कर्ता पं0 विष्णुदत्त शुक्ल का जीवन परिचय व्यक्तित्व एवं कृतित्व-

भारत का गौरवमय अतीत देश के तपःपूत साधकों,चिन्तकों दार्शनिकों और मनीषियों की गौरव गाथाओं में परिवेष्टित है। यहां अनेक कवि हुये जो काव्यसृजन की अनुपम प्रतिभा से अन्वितथे साहित्य में अमर हैं। कालिदास को तो कविकुलगुरू की उपाधि से विभूषित किया गया है। उनका रस-परिपाक अद्भुत और अनुपम है। अंग्रेजी साहित्य में मूर्धन्य मनीषी विलियम् शेक्सपियर को उन नाटकों की रचना से जो यश प्राप्त हुआ,कालिदास को केवल 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' से ही उससे अधिक गौरव प्राप्त हुआ,निस्सन्देह कालिदास विश्व साहित्य के धरातल पर सर्वोच्च है।

जीवन परिचय- संस्कृत साहित्य की काव्यधारा अब भी प्रवाहित हो रही है, वर्तमानकाल में उसके संवर्धन में जिन कवियों का योगदान रहा हैं। उनमें श्रद्धेय पं० विष्णुदत्त शुक्ल का नाम अग्रगण्य है। उनका विलक्षण व्यक्तित्व भव्य हैं और कृतित्व के दृष्टिकोण से उनकी जितनी प्रशंसा की जावे वह न्यून ही हैं,वस्तुतः उनका कृतित्व वर्णनातीत हैं। पूज्य शुक्ल जी का जन्म सन् १८८५ ई० में उत्तरप्रदेशस्य उन्नाव जनपद के कर्नाईपुर ग्राम में हुआ था। उनके पूज्य जन्मदाता का नाम पं० मिश्री लाल शुक्ल और माता जी का नाम श्रीमती शिवरानी देवी था।

शिक्षा-दीक्षा

शुक्ल जी की प्रारम्भिक शिक्षा उन्नाव [illegible] हुई, तत्पश्चात वे वाराणसी चले गये। वहां उन्होने हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में [illegible] लिया। वे इन्टरमीडिएट कक्षा के छात्र थे, तभी आचार्य जे.वी. कृपलानी जी और श्री [illegible]र्णानन्द की प्रेरणा से शुक्ल जी ने काशी विद्यापीठ में शिक्षा प्राप्त की। कालान्तर में वहीं [illegible]ध्यापन कार्य भी किया। राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर उन्होंने हिन्दी साहित्य की भी समर्पण भाव से

सेवा की। आपने पत्रकारिता के क्षेत्र में पदार्पण किया और जीवनान्त तक उस क्षेत्र से जुड़े हुये है। आपने दैनिक प्रताप में कार्य किया और पं. बालकृष्ण शर्मा नवीन,पं. कृष्णदत्त पालीवाल और पं. बनारसी दास चतुर्वेदी के निकट सम्पर्क में रहकर देश सेवा के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिया ।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

स्व. पं. शुक्ल जी ने कानपुर में स्थायी निवास बना लिया और सहयोगी नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। श्री प्रतापनारायण श्री वास्तव, पं. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी जैसे मूर्धन्य विद्वानों से आपका निरन्तर सम्पर्क बना रहा। कानपुर में वे अपने परिवार के साथ ही निवास करते थे। वे अपने पिता के एकमात्र पुत्र थे और उन्होने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अपने वंश का नाम समुज्वल कर दिया। शुक्ल जी सुयोग्य कवि,प्रसिद्ध पत्रकार और श्रेष्ठ साहित्यकार थे, वे विनोदी और हास परिहास प्रिय थे।

डा. रामजी उपाध्याय के मतानुसार[१]

'सुलोचना सती' हिन्दी साहित्य में उनकी एक उल्लेखनीय कृति है। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में आपने सक्रिय भाग लिया, आपने संस्कृत साहित्य के लिये 'सुलोचना सती'[२] नाम हिन्दी काव्य का संस्कृत में काव्यानुवाद किया और इसप्रकार दोनों भाषाओं के साहित्य पर अपनी छाप छोड़ी। शुक्ल जी संस्कृत साहित्य के आदिकवि वाल्मीकि से बहुत प्रभावित हुये थे। अतः उन्होने "सौलोचनीयम्" में उसी

---

१. द्रष्टव्य" संस्कृत साहित्य का आलोचनात्क इतिहास"
डा.राम जी उपाध्याय,इलाहाबाद

२. सैलोचनीयम् - पं. विष्णुदत्तशुक्ल वाणी प्रकाशन,२०/१
कस्तूरबा गांधी मार्ग कानपुर-२०१५ संस्करण

ढ़ंग से प्रकृति चित्रण को प्रस्तुत किया है। इसमें प्रातः वर्णन अत्यन्त मनोरम शैली में प्रस्तुत किया गया है-

"पक्षिव्रजानां कलकूजनेन यथा वनान्तं मुखरं बभूव।
कक्षाश्च सर्वेऽपि तथा ग्रहाणां बालैर्हसद्भिः मुखरा बभूवुः।।"

कवि का कथन है। कि प्रातःकाल के समय उड़ते हुये पक्षियों के सुन्दर गुंजन से बन भाग ऐसा मुखरित हो रहा था जैसे कि घर के कक्ष हंसते हुये बालकों की ध्वनि से गुंजित होते है या शब्दायमान होते है।

शुक्ल जी की संस्कृत साहित्य की दूसरी रचना 'गंगासागरीयम्' है। अर्थाभाव के कारण इसका प्रकाशन असम्भव हो गया। आपने श्री बृजलाल वर्मा को जिनके प्रति उनके हृदय में पुत्रवत् स्नेह था, एक मार्मिक पत्र लिखा और इच्छा प्रकट की, कि 'गंगासागरीयम्'३ का प्रकाशन करााय जावे। वर्मा जी उस समय लोक सेवा आयोग के सदस्य थे। उन्होने शुक्ल जी की अन्तिम इच्छा का समादर करते हुये,उनके दिवगंत होने के बाद १९८२ में उसका विधिवत् प्रकाशन कराया। यह काव्य संस्कृत साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

'गंगा सागरीयम्' गंगावतरण के पौराणिक आख्यान पर आधारित है,परन्तु शुक्ल जी ने उसमें नवीनतम् शैली व का भी समावेश किया है काव्य में निम्नाकिंत शीर्षक है।

राज्यवर्णन,कथारम्भ,वरप्रदान,गंगाजन्म,बाललीला,दूतानुबन्ध,उद्योगप्रकरणम्, प्रस्थान और सागर मिलन। इसप्रकार इसमें नौ शीर्षक है और ४९२ सरस छन्द है। कुशल कवि की मौलिक उद्भावना और विलक्षण कल्पना उसे काव्य के साथ-२ उपन्यास

---

१. गंगासागरीयम् पं. विष्णु दत्त शुक्ल,भावना प्रकाशन ६० ए,टैगोर टाउन इलाहाबाद,१९८२ ई० संस्करण

का स्वरूप भी प्रदान करता है। भाषा में सुन्दरता के साथ-साथ माधुर्य और प्रवाह भी है।

शुक्ल जी कविकुलगुरू कालिदास से बहुत प्रभावित थे, अतः उन्होने कुमारसम्भवम[२] की भांति अपने काव्य में नगराज हिमालय की विराटता, प्राकृतिक सुषुमा और गगनचुम्बी चोटियों का अत्यन्त भव्य वर्णन प्रस्तुत किया है।

''अस्त्युत्तराखण्ड पदे समृद्धे स्वनाम धन्यो हिमवान् महीभृतं
आश्याम् पेशावर विस्तृतस्य राज्यस्य नान्तं विभवस्यतस्यां।।''

राज्यवर्णनम्१

ग्रन्थ के प्रारम्भ में पर्वतराज हिमालय की विषदता का वर्णन करते हुये शुक्ल जी लिखते है कि वैभव से परिपूर्ण उत्तराखण्ड में हिमवान् नाम का स्वनाम धन्य पर्वत है। आसाम् से पेशावर तक अर्थात् भारतवर्ष की पूरी उत्तरी सीमा पर विस्तृत राज्य के ऐश्वर्य का अन्त नहीं है,वास्तव में उसका वैभव तो वर्णनातीत है।

प्राकृतिक शोभा और रम्य पार्वती परिवेश चित्रण में कहीं-कहीं स्पष्ट रूप से रघुवंश महाकाव्य की झलक है-

''शस्यैर्मयूरैः परिसेवितानि हरिततृणाच्छादन सज्जितानि
तत्रैव गंगैक्षत शार्द्वलानि श्यामायमानानि च विस्तृतानि।''

(गंगाप्रस्थानम् 25)

---

२. तुलनीयम्-कुमारसम्भवम्

अस्त्यन्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नागाधिराः ।
पूर्वोपरौ तोयनिधीऽवगाहस्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः ।।

शुक्ल जी रघुवंश महाकाव्य[१] की भांति प्रकृति चित्रण प्रस्तुत करते हुये लिखते है कि नृत्य में संलग्न,मयूरो द्वारा सेवित,हरी घास के आच्छादन से सुशोभित,गंगाजल,संचित शाद्दबल श्यामवर्ण के प्रतीत हो रहे थे।

कवि ने राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में,उत्तरभारत के प्रमुख तीर्थों का भव्य चित्रण प्रस्तुत किया है। श्री बदरीनाथ के चित्रण को प्रस्तुत करते हुये कवि श्री विष्णुदत्त शुक्ल जी लिखते है-

"निःसृत्य गेहात् हिमवत् सुता सा,प्रापद् द्रुतं श्री बदरीशधाम्
नरस्वररूपेण जगद्धिताय नारायणो यत्र तपश्चकार ।।"

(गंगा प्रस्थानम् 12)

कवि बदरीशधाम का चित्रण करते हुये कहता हैं कि पर्वतराज हिमालय की पुत्री अपने घर से निकलकर तीव्रगति से बदरीशनाथ में पहुंची,जहां पर स्वयं भगवान नारायण ने जन-कल्याण के लिये मनुष्य का स्वरूप धारण करके तपस्या की थी। वह स्थान वास्तव में इतना पावन और पुण्य प्रद हैं। कि लोक मंगल के लिये स्वयं भगवान् ने भी वहां तपसचर्या की थी।

" सैषैव भूमिः परगा पवित्रा नारायणो यत्र नरो बभूव ।
अनेन पुण्येन च कारणेन तीर्थीकृता भारतवासिभिः सा।।"

(गंगा प्रस्थानम् 13)

इसी बदरीशधाम के गौरव पर प्रकाश डालते हुये कवि कहता है कि यहां कि भूमि इतनी पवित्र है कि जहां पर भगवान विष्णु भी जनमंगल की भावना से मनुष्य के रूप में अवतरित हुये थे। इसी कारण से भारत वासियों के द्वारा बदरीनाथ धाम को तीर्थ के रूप में समादृदत किया गया है।

१.रधुवंशे- १७

"स पल्वलोत्तीर्ण वराह यूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि ।
ययौ मृगाध्यासि शाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन् ।।

सुन्दरतम् उत्तराखण्ड के पावनतीर्थ स्थल में देवप्रयाग का भी शुक्ल जी ने एक पद में वर्णन किया हैं। कवि ने इसी तारतम्य में देव प्रयाग का भी सुरम्य चित्रण प्रस्तुत किया है।

"तस्यात् यदाग्रे तनया चचाल, देव प्रयागं सहसा ससाद
तत्रैव गंगा मिलितं सरागं,सखी समेतालक नन्दिनीति "

(गंगाप्रस्थानम् १४)

गंगा की गति और प्रवाह का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि वह धारा बदरीनाथ के द्वारा

चलते हुये पवित्र देव प्रयाग नामक स्थान पर वही पर और छोटी नदियों के साथ अलकनन्दनी बड़े प्रेम के साथ गंगा नदी में मिल गयी।

शुक्ल जी ने ऋषिकेश और लक्ष्मण झूला को भी काव्य में सुन्दर स्थान दिया है-

"शनैः शनैः सा ब्रजती पुरस्तात्, समागता लक्ष्मण युक्त झूलाम् ।
सीमां स्वराज्यस्य विहाय यत्र देशं नवीनं प्रविवेश तावत् ।।"

गंगा.प्रस्थानम् १६

गंगा की पावन गति का चित्रण करते हुये कवि लिखता है कि उसी क्रम से आगे बढ़ती हुयी नदी लक्ष्मण झूला नामक स्थान पर पहुंची और वहां उसने अपने राज्य की सीमा को छोड़कर उत्तरांचल को पार करके नवीन क्षेत्र में प्रवेश किया।

गतिशालिनी गंगा हरिद्वार के निकट स्थित कनखल नगरी को देखकर राजा दक्ष के यज्ञ का स्मरण करते हुये सती की पतिभक्ति का सत्कार करती है।

"अनेन दृश्येन पुनः प्रलुब्धा, माया विमूढेव चमत्कृता सा
तत्रैव तिष्ठासति लक्ष्मरिक्तां दक्षाश्रमं पश्यति तावदग्रे।।"

(गंगा प्रस्थानम् ४१)

निरन्तर गति का चित्रण करते हुये शुक्ल जी लिखते है कि इस मनोरम दृश्य को देखकर माया से भृमित सी होकर वह वही रूक गयी,फिर उसने आगे दक्ष के आश्रम को देखा।

तत्पश्चात् गंगातीर्थराज प्रयाग के निकट आती है जहाँ महर्षि भरद्वाज की तपः स्थली थी।

''यदाश्रमं दुःखिन आप्नुवन्ति,बिना प्रयासैश्चिरकालंमेत्य।
अतोऽचिरेणैव तपः पुनीतं, गंगा भरद्वाज पदं तदाप ।।''

(गंगा प्रस्थानम् १४७)

गंगा के शतत् प्रवाह का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि जहां दुखी व्यक्ति भी बिना प्रयत्न के आश्रय और शान्ति प्राप्त कर लेते है,वही गंगा ने पवित्र महर्षि भारद्वाज के आश्रम को प्राप्त किया।

शुक्ल जी ने गंगा यमुना संगम स्थल प्रयाग का निम्नांकित श्लोक में सुन्दर चित्रण किया है।

''तथापि सा प्राप्त सरवीं प्रयागे, गंगा स्वमार्गे क्रमशश्चरन्तीयम् ।
द्वयोस्तयोस्मम्मिलिन प्रसंगात्, अभूत् प्रयागोऽपि च तीर्थराजः।

(गंगा. सागर. १०)

मनीषी कवि प्रयाग का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि यमुना ने प्रयाग में अपनी सहेली गंगा को प्राप्त कर लिया । गंगा और यमुना के सम्मिलन के कारण ही प्रयाग को तीथराज होने का गौरव प्राप्त हुआ था।

''उभे च गंगायमुने वरेण्ये, शुद्धात्मसत्वे यदि सर्वथा स्ताम् ।
तयोः प्रपेतुश्चरणानि यत्र बभूव धन्यस्स च भूमिभागः।।''

(गंगा. सागर. ११)

गंगा और यमुना के दिव्य स्वरूप का चित्रण करते हुये कि आध्यात्मिक शक्ति से विभूषित गंगा और यमुना के जिस भूभाग पर चरण पड़े अर्थात् ये नदियां

जहां होकर प्रवाहित हुयी वह क्षेत्र धन्य और महिमा मण्डित हो गया।

"एतावतीनां मिलनं सरवीनां, दिव्यात्मनां यत्र बभूव सोऽयम्।
पवित्रतां प्राप्त विलक्षणं किमभूत् प्रयागो यदि तीर्थराजः।"

(गंगा.सागर. १६)

प्रयाग के गौरव का चित्रण करते हुये शुक्ल जी लिखते है कि दिव्य आध्यात्मिक शक्ति से विभूषित इन सहेलियों (नदियों) का जहां पर मिलन हुआ,वहां विलक्षण पवित्रता को प्राप्त करके प्रयाग वास्तव में तीर्थराज बन गया। गंगा यमुना संगम वर्णन पर रघुवंश की अनुच्छाया पड़ती परिलक्षित है। तत्पश्चात् गंगा वाराणसी पहुंचती है। यह नगरी अनादि काव्य से संस्कृत साहित्य की तपस्थली रही है। कवि ने निम्नाकिंत श्लोकों में वाराणसी की महत्ता को चित्रित किया है-

"सा कीर्तिमाना नगरी मनोज्ञानक्तंदिवं रक्षति भैरवोयाम्।
जहाति विघ्नामपि ढुन्टिराजः,विभर्ति भाण्डारमथान्नपूर्णा।।"

(गंगा सागर २१)

गंगा की निरन्तर गति का मनोरम शैली में वर्णन करते हुये दोनों सहेलियों (नदियों) गंगा और यमुना का पारस्पिरिक मनोरंजन और विनोद करती हुयी विन्ध्याटवी को पार करके बड़े सुख के साथ काशी नगरी में पहुंच गयी।

"गुजंति वेदध्वनिनोषकालाः धर्मोपदेशेन दिनानि गयी ।
रात्रौ समाविश्य सुखेन सर्वे, तत्रात्मबोधाय चिरं यतन्ते।।"

(गंगा. सागर. १२)

काशी नगरी का धार्मिक और आध्यात्मिक चित्रण प्रस्तुत करते हुये शुक्ल जी लिखते है कि "भैरवनाथ" उस नगरी की सदैव रक्षा करते है। वहां वेदों की पावन ध्वनि सदा गुजिंत होती रहती है और धर्मोपदेश के कारण दिन का समय व्यतीत

होता रहता है। रात्रि में सभी साधक सुख पूर्वक बैठकर आत्मज्ञान के लिये प्रयत्न करते है।

"अमूं पुरी यः प्रशशास राजा स विश्वनाथः प्रथितो यशस्वी।
तस्योत्तराखण्डपतेर्धनिष्ठं आजन्मनः ह्यविच सख्यमासीत् ।।"

भगवान विश्वनाथ और भगवान शंकर का वर्णन करते हुये शुक्ल जी कहते हैं कि भगवान विश्वनाथ इस काशी नगरी पर शासन करते थे, उनकी जन्म से ही उत्तराखण्ड के अधिपति से धनिष्ठ मित्रता थी।

"श्री विश्वनाथेन कृते प्रयत्ने गंगा दृढार्था शिशथिली बभूव।
कदाचिदेतेन च कारणेन काश्यां जुधूर्णेऽबहुसोत्तराशाम् ।।"

(गंगा. सागर. २५)

कवि कहता है भगवान विश्वनाथ के द्वारा गम्भीर प्रयत्न करने पर दृढ़निश्चय करने वाली गंगा थोड़ी सी शिथिल हो गयी अर्थात् उसका पूर्व दिशा की ओर तीव्र प्रवाह रुक सा गया। सम्भवतः इसी कारण से काशी में गंगा उत्तर दिशा की ओर थोड़ी सी मुड़ गयी अर्थात् भगवान विश्वनाथ ने गंगा पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से थोड़े से हठ का प्रयोग किया,परिणाम स्वरूप उसका पूर्व दिशा की ओर प्रवाह कुछ ठहर सा गया।

कवि प्रवर ने बिहार राज्य में स्थित पाटालिपुत्र और बंगाल में वर्तमान महर्षि कपिल के आश्रम को भी भव्यता के साथ चित्रित किया है-

"मुक्त्वा पथे पाटलि पत्तनं च, विदेह देशं ह्यपि वंग देशम् ।
निष्ठावती तत्र परो जगाय प्रापत् तदा श्री कपिलाश्रमं सा ।।"

(गंगा.सागर. २७)

गंगा नदी के सतत् प्रवाह का चित्रण करते हुए शुक्ल जी लिखते हैं- वह नदी पाटलिपुत्र(पटना), जनक स्थली और बंगदेश को छोड़ते हुए महर्षि कपिल के आश्रम में पहुँच गयी।

गंगा- सागरीयम् में शुक्ल जी की काव्य प्रतिभा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। हिमाच्छादित नगराज हिमालय के वर्णन में उनका काव्य सौष्ठव असाधारण है-

''कस्तूरिका केसर गन्ध योगात् स्वयं प्रकृत्या कृत चारू वेशात् ।
ऐश्वर्य संभार निधेर्धरित्र्याः नाकालकां राज्यमपाकरोति ।।''

(गंगा. राज्यवर्णनम् १०)

उत्तराखण्ड राज्य के सुन्दर वातावरण का चित्रण करते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि वह क्षेत्र कस्तूरी और केसर की सुगन्ध से परिपूर्ण था। ऐसा प्रतीत होता था कि प्रकृति ने उनका स्वयं श्रृंगार किया है। वह राज्य हर प्रकार के ऐश्वर्य और सौन्दर्य के भण्डार से विभूषित था और अलका नगरी के सौन्दर्य को भी पराजित कर देता था।

'' कलस्वरो निर्झर निम्नगानां सुकूजनं चारू विहंगमानाम्।
चलन्मरूद्भ्यो निःसृतो निनादः, कुर्वन्ति संगीमयं पदं तत् ।''

(गंगा. राज्यवर्णनम्. ११)

राज्य के प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कवि लिखता है कि नीचे की ओर बहने वाले झरनों का मधुर स्वर, पक्षियों का सुन्दर कूजन और चलती हुई वायु से उत्पन्न होने वाला शब्द संगीतात्मक वातावरण उत्पन्न कर रहा था अर्थात् ्हाँ प्रकृति अपने पूरे स्वरुप से मधुर मधुमय वातावरण का सृजन कर रही थी।

श्रद्धेय शुक्ल जी के इस काव्य में कलापक्ष की सुन्दरता के भी सर्वत्र दर्शन होते है। आपने वैदर्भीरीति का अनुसरण करते हुये प्रसादगुण समन्वित ललित पदावली का सर्द ् ्रयोग किया है। कवि ने अलंकारों का भी मनोहारी प्रयोग किया है।

कवि ने ् ्वज्रा और उपेन्द्रवज्रा का बड़ी कुशलता के साथ प्रयोग किया है।

'' कीटाः विहंगा पशवो मनुष्याः, सर्वाः प्रजास्सम्यगभेदभावैः ।
मुक्तास्समस्त प्रतिबन्धनेन,स्वातंत्र्यपूर्ण विहरन्ति राज्ये ।।''

(गंगा. राज्यवर्णनम्. ३१)

राज्य के स्वतन्त्र वातावरण का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि उस राज्य में मनुष्यो को ही नही पशु पक्षियों को भी पूर्ण स्वतन्त्रता थी,इसलिये मनुष्य कीड़े मकोड़े पशु और पक्षी भी बिना किसी भेद-भाव के और हर प्रकार के बन्धन से मुक्त होकर स्वतन्त्रतापूर्व राज्य में बिहार करते थे।

निम्नांकित श्लोक में उपमा अलंकार का मनोहारी प्रयोग किया गया है।

"तस्मान्महाशोक समाकुला सा, प्राप्नोति सौख्यं ननिमेषमात्रम्।
सुतावियोगात् व्यथते सदैव, मत्स्यो यथा वारिनिधि विहाम ।।"

(गंगा. राज्यवर्णनम्. ५६)

शुक्ल जी कहते है कि अत्यन्त शोक से व्याकुल रानी क्षणमात्र के लिये भी सुख को प्राप्त नहीं कर पाती थी, वह पुत्री के वियोग के कारण ऐसी दुखी रहती थी जैसे मछली जल के भण्डार को छोड़कर दुखी होती है।

निम्नांकित अनुष्टुप छन्द में अलंकार का प्रयोग अत्यन्त मनोहारी है।

" एवं दिनानि दम्पत्योः सुखं दुःखमयानि च ।
शीततापमया यान्ति वार्षिका ऋतवो यथा ।।"

(गंगा.राज्यवर्णनम् ५७)

पति-पत्नी की दिनचर्या का वर्णन करते हुये कवि लिखता है कि दुखों-सुखों,ग्रीष्म-सर्दी के दिन, वर्षे और ऋतुये बीतती चली जाती थी।

वह बसन्ततिलका छन्द अर्थगौरव का अति मनोरम उदाहरण प्रस्तुत करता है।-

"चांचल्यमद्भुतमिदं हि बलान्निगूढं व्यक्तीकृतं तदपि लोलविलोचनेने।
प्रायोबलात् मनसि गूहति यं मनुष्याः, चित्ताशयं प्रकटयन्ति दृश्स्तमेवा ।

(गंगा.बरप्रदानं ४४)

राजा की स्थिति का वर्णन करते हुये कि राजा बलपूर्वक अपनी भावनाओं को छिपाने का प्रयास करते थे परन्तु चंचल नेत्रों से वह बात प्रकट ही हो जाती थी। मनुष्य बलपूर्वक जिस बात को मन में छिपाना चाहता है। नेत्र हृदय की उस भावना को प्रकट कर ही देते हे।

मन्दाक्रान्ता छन्द में रचित यह श्लोक कितना मनोरम है।

''नीत्वा संगे सलिल-कलश मूर्त भूतस्ववांञ्छं,
पूर्णीकर्तु तत उदसहिष्टेप्सितस्वप्रियायाः ।
''सन्तुष्टात्मा परिणतमनः कामनोऽति प्रसन्नः ,
आयाद् गेहे सफल हिमवान् सत्प्रवासात् स्वकीयात् ।।''

(गंगा. वरप्रदानं 51)

राजा के द्वारा जलकलश को अपने महल में ले जाने का चित्रण करते हुये शुक्ल जी कहते है कि अपनी आंकाक्षा के साकार स्वरूप उस जल कलश को जो कि पत्नी की मनोकामना को पूर्ण करने वाला था, राजा प्रसन्न चित्त और सन्तुष्ट होकर साधना स्थल से अपने घर को लौट आये।

कवि कुल गुरू कालिदास के मेघदूत का भी स्मरण करता है।

''प्रखरतर निदाघैरूत्तराखण्डजीवा,विहगपशुमनुष्याः व्याकुलास्ते तदासन्
स्थितिमिति परिवीक्ष्य ज्ञानवान् मेघदूतः परम्सुखमयच्छत् छायया तेभ्य आरात्

(गंगा.दूतानुबन्धः २२)

कवि कुल गुरू कालिदास ने मेघदूतं नामक काव्य में मेघ सी यात्रा का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया हैं उस काव्य में रामगिरि पर्वत पर निवास करता हुआ यक्ष मेघ को दूत बनाकर अल्कापुरी भेजता है, ताकि उसकी वियोगनी यक्षिणी को यह ज्ञात हो सके कि उसका पति सकुशल हैं शुक्ल जी ने कविकुलगुरू का अनुसरण करते हुये मेघ को दूत बनाया है। कवि ने गंगा को नायिका समुद्र को नायक तथा बादल को दूत के रूप में प्रस्तुत किया गया है। गंगा और सागर,दूत बादल के द्वारा एक दूसरे के गुण

सौन्दर्य का श्रवण कर परस्पर आकृष्ट होते है तथा मिलन संयोग की आकुलता में वियोग की वेदना नायक या नायिकों को पीड़ित करने लगती है मेघ के उत्दात्त हृदय का चित्रण करते हुये कवि कहता हैं।कि-

भीषण ग्रीष्मऋतु के कारण उत्तराखण्ड का अंचल पशु पक्षी और मनुष्य बहुत अधिक व्याकुल थे। ज्ञानवान मेघ ने ऐसी स्थिति समझकर अपनी छाया से सभी को सुख प्रदान किया ।

शिखरिणी छन्द की रचना में शुक्ल जी लिखते हुये अत्यन्त सफल प्रतीत होते हैं-

" व्यवस्था लोकानां स्वयमपि च लौकैर्विरचिता,
विकर्तुशक्यन्ते निजकृतिमतस्ते नियमतः ।
पदार्थ यत् कोऽपि प्रजनयति लोके निजबलात्,
तदायतृो नाशोऽपि च भवति तस्य प्रकटतः ।।"

(गंगा. उद्योगप्रकरणम् १२)

शुक्ल जी कहते है कि मनुष्यों ने ही स्वयं ही मनुष्यो के हित के लिये लोक व्यवस्था का निर्माण किया है। अतः वे ही अपने द्वारा बनायी गयी व्यवस्था का खण्डन करने नें सम्भवतः व्यस्त है। अलंकृत शैली में इसका वर्णन करते हुये कवि कहता है कि जो कोई भी इस संसार में अपने बल से किसी पदार्थ को उत्पन्न करता है, उस वस्तु का विनाश भी उसी के अधीन रहता है।

इस शालिनी वृत्त में श्रद्धेय शुक्ल जी की रसिकता के दर्शन होते हैं-

"फुल्लेकंजे कोषवद्धद्विरेफाः, मुक्तिलब्ध्वातिअतिप्रसन्नाः बभूबुः,
कमार्तानां किन्तु भुक्त्वा परागं, नासीत् तेषां क्वापि मानाभिलाषः ।

(गंगा,गंगाजन्म-६)

प्रातः काल का सुरम्य वर्णन करते हुये कवि कहता है कि कमलों के खिल जाने पर सम्पुट बन्द और मुक्ति प्रापत करके बहुत प्रसन्न हुये किन्तु मधुर पराग का भोजन करके भी उन काम-पीड़ित भौरों की आंकाक्षा तृप्त नहीं हुयी।

''नीडानमुक्त्वा पक्षिणस्तादृदगेव, हर्षोन्मत्ता यत्र तत्रोडडयन्तः,
व्याजेनैव स्वीयमञ्जुस्वरस्य,सृष्टारं स्वं भक्तिभावैः स्तुवन्तः ।।''

(गंगा.गंगा जन्म ८)

प्रातःकालीन प्रकृति सौन्दर्य का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि पक्षी ऊषाकाल में अपने-अपने घोसलों को छोड़कर आनन्द विभोर होकर इधर उधर उड़ने लगे। ऐसा प्रतीत होता था मानो कि वे अपने मधुर स्वर से विश्व के रचयिता भगवान की स्तुति कर रहे हो।

दिव्य गंगोत्री के जल के पावनता और प्रभावशालीनता का वर्णन करते हुये कवि शुक्ल जी निपुणता पूर्वक लिख रहे है-

''शीलैर्नम्रा लोकवृत्या सलज्जा, स्वेच्छापूर्तेराशया च प्रसन्ना।
देवान् वृद्धान् भक्तिपूर्व प्रणम्य, गंगोत्रयेम्बृ श्रेष्ठरीत्या चचाम् ।।''

(गंगा- जन्म २८)

प्रातः काल की मंगल वेला पर अत्यन्त विनम्र शीलवती और अपनी इच्छापूर्ति से उत्यन्त प्रसन्न रानी ने देवताओं और वृद्ध पुरूषों को भक्तिपूर्वक प्रणाम करके समुचित ढ़ग से पवित्र गंगाजल का आचमन किया।

'' तन्नीरस्य क्षेमकारि प्रभावैः राज्ञी लेभे पूर्ण शान्तिं तदानीम्।
प्रातेकाले स्वेष्टदेव प्रसादात्,अन्तः कान्तं सा तु गर्भ दधारं ।।''

(गंगा.गंगा-जन्म २६)

पावन गंगा जल के कल्याणकारी प्रभाव के द्वारा उस समय रानी ने पूर्ण शान्ति को प्राप्त किया । प्रातःकाल ही अपने इष्ट देव के प्रासाद से कुच्छ में सुन्दर गर्भ को धारण किया।

सुकवि का आदर्श जीवन सदैव अध्यवसाय,साधना व निष्काम कर्म से अनुप्राणित रहा। कवि ने अधोलिखित श्लोको में श्रम के महत्व का प्रतिपादन किया है।

" निशायां दिवावा प्रभाते प्रदोषे,न तस्याः क्षणं चापि विश्रान्तिरासीत्।
अविच्छिन्न गत्या सदाग्रे प्रयाणां बभूवाथं तस्याः क्रभं जीवनस्य ।।"
(गंगा. बाललीला २६)

गंगा की गति का वर्णन करते हुये कवि कहता हे कि रात्रि दिन प्रातःकाल और सायंकाल में अर्थात् प्रतिक्षण वह गतिशील ही रहती थी और उसका थोड़ी देर के लिये भी विराम नहीं होता था अविच्छिन्न गति से आगे बढ़ने वाली गंगा का यह जीवन क्रम ही बन गया ।

"अनेन क्रमेण स्वकेनेह गंगा, महत्तत्वं श्रमस्य प्रतिष्ठा पयन्ती,
जनान् सा समुद्वोधयाभास संवनि, श्रमाभ्यासमेवेहि कुर्यात् यत्नैः।।"
(गंगा. बाललीला २७)

कवि कहता है इस क्रम से गंगा ने परिश्रम के महत्व को स्थापित किया और मानव समाज को यह उद्बोधन दिया कि उसे अपने विकास के लिये यत्नपूर्वक परिश्रम करना चाहिये।

"श्रमेणैव सिध्यन्ति कार्याणि लोके,श्रमेणैव लोकोत्तरं चावि लभ्यम्।
श्रमेणैव चोत्कर्षतां यान्ति लोकाः,श्रमं साधयध्वं श्रमं साधमध्वम्।।"
(गंगा. बाललीला २८)

श्रम के महत्व पर प्रकाश डालते हुये कवि कहता है कि संसार में परिश्रम के द्वारा ही कार्य सफल होते है,परिश्रम से ही दिव्यलोक की भी प्राप्ति होती है,

वास्तव में परिश्रम के द्वारा ही मनुष्य उत्कर्ष को प्राप्त होता है,इसलिये कवि प्रेरणा देते हुये कहता है कि हमें निरन्तर श्रम की ही साधना करना चाहिये।

''श्रमस्यैव चास्य प्रभावैः कदाचित्,जयं सर्वदा जीवने सा प्रपेदे,
गते वासरे वर्धमाना स्वकीर्त्या, विशेषेण सा मानपात्रं बभूव।।''

(गंगा.बाल-लीला २६-२६)

श्रम के महत्व पर समुज्जवल प्रकाश डालते हुये शुक्ल जी कहते है कि गंगा ने परिश्रम के प्रभाव से ही सम्भवतः जय को प्राप्त किया,दिन प्रतिदिन बहती हुयी,कीर्ति से यह विश्व में आदर की पात्री बन गयी।

अन्त में कवि ने काव्य साधना की सफलता के लिये माता गंगा की ही आराधना की है-

''इयं धरा शैव जटाकलापो विष्णोः पदं ब्रह्मकमण्डलुश्च,
पूता समस्ता कृपया यथा सा गंगा गिरो मे विमली करोतु

(गंगा.सागरीयम्)

गंगा के गौरव पर भव्य प्रकाश डालते हुये कवि शुक्ल जी कहते है कि यह पृथ्वी,भगवान शंकर की जटाओं का समूह,भगवान विष्णु का पद और सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा का कमण्डल,इन सब को पवित्र करने वाली गंगा मेरी वाणी को भी पवित्र कर दे।

इस कथन में कोई अतिरजंना नहीं है कि स्वतन्त्रता सेनानी जी श्री शुक्ल जी का कृतित्व वस्तुतः सर्वश्रेष्ठ है। वे बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। कवि,साहित्यकार,पत्रकार,राष्ट्रप्रेमी,स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी और समाजसेवी के रूप में भारतीय मनीषी उन्हें सदैव याद रखेगे। वे इस क्षेत्र में अमर रहे।

''जयन्तु ते सुकृतिनः रससिद्धः कवीश्वराः,
नास्ति येषां यशः काथे जरामरणजं भयम् ।।''

किसी कवि ने उचित ही कहा है कि वे पुण्यवान,रससिद्ध,कवीश्वर सदैव विजयी

हो जिनके यश रूपी शरीर पर वृद्धावस्था व मृत्यु का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

अर्थात् उनके साहित्यिक कृतित्व के कारण ही वे यश रूपी शरीर के द्वारा अजर व अमर रहे।

''याता यान्ति च मातारो, लोकाः शोकाधिका भुवि,
काव्य सम्बन्धिनी कीर्तिः, स्थायिनी निरपायिनी ।।''

(शार्ङ्धरपद्धति)

इस श्लोक में काव्य सम्बन्धिनी कीर्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुये शुक्ल जी कहते है कि इस संसार में जाने वाले व्यक्ति जाते ही रहते है अर्थात् मृत्यु एक शाश्वत सत्य है जिसने इस वसुधा पर जन्म लिया है। उसकी मृत्यु सुनिश्चित है किन्तु काव्य से उत्पन्न कीर्ति स्थायी रहती है और किसी भी प्रकार के भय की छाया नहीं रहती है।

समीक्षा-

गंगा-सागरीयम् तथा सौलोचनीयम् के रचयिता पं.विष्णुदत्त शुक्ल का जन्म सन् १८८५ ई० में उ०प्र० के उन्नाव जनपद में अवस्थित कर्नाईपुर नामक ग्राम में हुआ था उनके पूज्य पिता पं. मिश्री लाल शुक्ल और माता का नाम शिवरानी देवी था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा उन्नाव में तत्पश्चात् उच्च शिक्षा वाराणसी के हिन्दू विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। आचार्य जे.वी. कृपलानी और डा. सम्पूर्णनन्द की प्रेरणा से कालान्तर में काशी विद्यापीठ में भी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात अध्यापन कार्य भी किया। पं. विष्णु दत्त शुक्ल एक आदर्श अध्यापक,उत्साही,साहसी,स्वाधीनता सेनानी तथा दैनिक प्रताप एवं सहयोगी नामक पत्रों से जुड़े एक निर्भीक पत्रकार,समर्पित साहित्य से भी और श्रेष्ठ सामाजिक कार्य कर्ता थे श्री शुक्ल निश्चल हृदय के हास,परिहास प्रिय परविनोदी एवं जीवन्त सत पुरूष थे। आजीवन अर्थाभाव अनुभव करते हुये भी ये जीवन संघर्ष से कभी विमुख नहीं हुये और कर्मण्ठता पूर्वक साहित्य सर्जना के साथ समाज और राष्ट्र की सेवा की । जिससे ये आज भी एक आदर्श महापुरूष के रूप में हम सब के लिये सम्मानीय एवं स्मरणीय बने हुये हैं।

अष्टम

अध्याय

गंगा सामरीयम की
साहित्यिक समीक्षा

अष्ठम अध्याय

गंगा सागरीयम् की साहित्यिक समीक्षा

स्व. पं० विष्णुदत्त शुक्ल की गंगा सागरीयम्' एक उत्कृष्ट काव्य कृति है,जिसकी संक्षेप में साहित्यिक समीक्षा सोदाहरण प्रस्तुत है।

कथावस्तु

गंगा सागरीयम्,स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी आदरणीय शुक्ल जी की एक रसात्मक रचना हैं।जिसे पढ़कर मस्तिष्क में कविकुल गुरू कालिदास की प्रतिभा का स्मरण होने लगता है इस काव्य का कथानक तो पौराणिक कथा पर आधारित है परन्तु कवि ने अपनी मौलिक प्रतिभा के द्वारा इसमें अनेक परिवर्तन कर दिये है,फिर भी कथा की आत्मा पूर्ण रूप से सुरक्षित है।

कथानक के अनुसार उत्तराखण्ड में नगराज के एक प्रतापी राजा थे। यद्यपि उनके यहां किसी प्रकार की न्यूनता नहीं थी, तथापि वे सन्तान के अभाव में अनवरत खिन्न रहा करते थे। एकबार उन्होने बड़ी श्रद्धा और अविचल भक्ति के साथ वरूण देव की आराधना की। उन्होने कहा कि मुझ में यह क्षमता नहीं है जिससे आप की कामना की पूर्ति हो सके, तथापि मैं तुम्हें एक उपाय बता रहा हूं। यदि उनसे चरण पखार कर,उनका पान कर लिया तो कामना सिद्धि सुनिश्चित है।

भूपति ब्रह्मा और विष्णु के पास गये, उन्होने कहा कि तुम्हारी प्रार्थना विचारणीय है,परन्तु वह जल कमण्डलु से मुक्त किये जाने पर इतनी तीव्रता से प्रवाहित होगा कि आप उसे हाथों में ले ही न सकेगे। अतः भगवान शंकर की आराधना करो। जब कमण्डलु का जल छोड़ा जावे तो उसे अपनी जटाओ में धारण कर लें, तत्पश्चात उनकी जटाओं से मुक्त जल की धार मन्द होगी और तुम उसे पान कर सकोगे। उन्होने तपस्या द्वारा भगवान आशुतोष को प्रसन्न कर दिया।

उन्होने उस पावन जल को धारण कर लिया, तब राजा उस पावन जल का पान कर सके। साधना के प्रभाव से उनकी रानी गंगोत्री ने एक सुन्दर कन्या को

जन्म दिया, जिसका नाम जाह्नवी रखा गया । गंगा को यमुना की बहिन भी माना गया है।

वरूण देव ने इस कन्या को शाप दिया कि वह एक स्थान पर स्थायी रूप से नहीं रहेगी, बल्कि निरन्तर गतिशीलता उसके स्वभाव का एक आवश्यक अंग होगा। परिणाम स्वरूप जन्म के उपरान्त वह चल पड़ी। राजा और रानी ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु सब कार्य व्यर्थ हुआ। उन्होने उसे प्रेम से पुचकारा ओर गति को उवरूद्ध करने के लिये बाधायें भी उपस्थित की परन्तु उसकी गति में विराम न लग सका। नगराज बहुत दूर तक उसे वक्षस्थल से चिपकाये चलते गये, परन्तु सब निरर्थक गया।

अन्त में नृप ने उसे अपनी माता वसुन्धरा को सोंपा और स्वयं विवश होकर लौट गये। शनैः शनैः कन्या की अवस्था भी ढलती गई। राजा ने सोचा कि अब उसकी अवस्था विवाह योग्य हो चुकी होगी अतः उसे इस बहाने से घर बुलाया जा सकता है। अन्य उपाय न देखकर राजा ने अब अपनी दूसरी पुत्री यमुना को भेजा कि वह उसे समझा-बुझाकर घर ले आवे।

यमुना तीव्रगति से बढ़ी और अन्त में गंगा को प्रयाग में पकड़ ही लिया। उसने बहिन को प्रयत्नसः समझाया कि वह लौट चले,परन्तु प्रयत्न निष्फल हुआ। अब दोनों साथ-साथ आगे बढ़ी और सोचा कि बाराणसी में भगवान् विष्णु (विश्वनाथ) से विवाह रचाया जावे, दुर्भाग्य वश शंकर ने उनकी और प्रेमदृष्टि से देखा ही नहीं। तब उन्होंने समुद्र में डूब मरने की प्रतिज्ञा की और ऊबड़ खबड़ मार्ग पर चलती हुई। समुद्र तट पर पहुंची और समुद्र में डूबकर अपने जीवन को समाप्त कर लिया। मार्ग में अनेक सन्तों ने गंगा को समझाया परन्तु उन्होने अपना दृढ़ निश्चय नहीं छोड़ा । उनका तो एक ही निर्णय था कि या तो भगवान शंकर पति बनेगे और या प्राणान्त होगा। इस प्रकार विशाल सागर ही उनका पति बना ।

शेक्सपियर के दुःखान्त नाटक बहुत प्रसिद्ध है,परन्तु संस्कृत साहित्य में काव्य की सुखद समाप्ति अच्छी मानी जाती हैं। इस प्रकार कवि ने गंगा का सागर से

विवाह करा के काव्य को सुखान्त बनाने का सफल प्रयत्न किया है।

भाषा शैली

'गंगा सागरीयम्' वस्तुतः एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें गंगा जी के जीवन के एक अंश को सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। पतितपावनी गंगा का व्यक्तित्व मानव कोटि में नहीं,बल्कि देव कोटि में आता है। उनके अवतरण से लेकर सागर मिलन तक की कथा इस काव्य में चित्रित की गई है।

प्रबन्ध काव्य की जो भी विशेषतायें हैं वे इस काव्य में पूर्ण रूपेण विद्यमान हैं। कवि ने अनेक ऋतुओं,उषःकाल,निशा हिमवान का वैभव, राज्य की स्थिति, पर्वतीय,नदी,नद निर्झर सरोवर पशु विंहगों,वनो,उपवनो,सूर्य चन्द्रमा,नक्षत्रों आदि का मोहक चित्र प्रस्तुत हुआ है। इस काव्य में इन चित्रों को बड़े ही मनोरम शैली से वर्णित किया गया है।

यदि कथावस्तु को आधार बनाया जावे तो यह कृति खण्ड काव्य प्रतीत होती है,परन्तु यदि इसके लक्षणों को देखा जावे तो यह रचना महाकाव्य प्रतीत होती है,अतः उसे खण्डकाव्य और महाकाव्य के बीच की कोटि में रखा जा सकता है।

छन्दोलंकार योजना-

महाकाव्य में विविध प्रकार के छन्दो का प्रयोग किया जाता है और आदरणीय शुक्ल जी ने काव्य में इन्द्रबज्रा,उपेन्द्रबज्रा,उपजाति,शिखरिणी, वसन्ततिलका, भुजगंप्रयात,मन्दाक्रान्ता,प्रभृति छन्दों का बड़ी विद्‌दन्ता के साथ मनोहारी प्रयोग किया है।

निम्नाकित श्लोक इस कथन की पुष्टि सर्वथा करते हैं।

"कीट विंहगाः पश्वो मनुष्याः सर्वाः प्रजास्यम्यगभेदभावैः ।
मुक्तास्समस्त प्रतिबन्धनेन, स्वातन्त्र्यपूर्व विहरन्ति राज्ये ।।"

(गंगा.राज्यवर्णनम् ३१)

कवि कहता है कि उस राज्य में मनुष्यो को ही नहीं पशु पक्षियों को भी पूर्ण स्वतन्त्रता थी इसीलिये मनुष्य कीड़े मकोड़े पशु और पक्षी भी बिना किसी भेद-भाव के और हर प्रकार के बन्धन से मुक्त होकर स्वतन्त्रतापूर्वक राज्य में बिहार करते थे।

अधोलिखित श्लोक उपजाति छन्द का एक सुन्दर उदाहरण है साथ ही इस श्लोक में उपमा अलंकार के भी दर्शन होते है।

" तस्मान्नमहाशोक समाकुला सा, प्राप्नोति सौख्यं ननिमेषमात्रम्,
सुतावियोगात् व्यथते सदैव, मत्स्यो यथा वारनिधि विहाय ।।"

(गंगा.राज्यवर्धनम् ५६)

शुक्ल जी कहते हैं कि अत्यन्त शोक से व्याकुल रानी क्षणमात्र के लिये भी सुख को प्रापत नहीं कर पाती थी वह पुत्री के वियोग के कारण ऐसी दुखी रहती थी जैसे मछली जल के भण्डार को छोड़कर दुखी रहती है।

निम्नांकित श्लोक में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया है साथ ही सानुप्रासोपमा की छटा भी देखने को मिलती है।

" एवं दिनानि दम्पत्योः सुखं दुःखमयापि च,
शीतताप मया यान्ति वार्षिका ऋतवो यथा।।"

(गंगा.राज्यवर्णनम् ५)

कवि लिखता है कि दुखो-सुखो,ग्रीष्म सर्दी के दिन वर्षे और ऋतुयें बीतती चली जाती है अर्थात् सब नियमित गति से चलता ही रहता है।

निम्नांकित श्लोक बसन्ततिलका छन्द का एक सुन्दर उदाहरण है तथा बड़े ही सुन्दरतम् ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है। साथ ही भारवि जैसी अर्थ गौरव की विशेषता भी उसमें प्राप्त होती है।

" चाञ्चल्यमद्भुतमिदंहि बलान्निगुढं व्यक्तीकृतं तदपि लोक विलोचनेन,
प्रात्योबलता् मनसि गूहर्ति यं मनुष्याः चित्ताशयं प्रकटयन्ति दृशस्तमेवा ।।

राजा की स्थिति का वर्णन करते हुये कि राजा बलपूर्वक अपनी भावनाओं

को छिपाने का प्रयास करते थे परन्तु चंचल नेत्रों से बह बात प्रकट ही हो जाती थी। मनुष्य बलपूर्वक जिस बात को मन में छिपाना चाहता है नेत्र हृदय की उस भावना को प्रकट कर ही देते है।

निम्नाकिंत श्लोक में मन्दाक्रान्ता का मनोहारी प्रयोग किया गया है। साथ ही इसकी सरसता भी देखने योग्य है।

"नीत्वा संगे सलिलकलशं मूर्तभूतस्ववांच्छं
पूणीकतुं तत उदसहिष्टेप्सितं स्वप्रियायाः ।
सन्तुष्टात्मा परिणतमनः कामनोऽति प्रसन्नः
आयाद् गेहे सफल हिमवान् सत्प्रवासात् स्वकीयात् ।।"

(गंगा.वर-प्रदानम् ५१)

राजा के द्वारा जलकलश को अपने महल में ले जाने का चित्रण करते हुये शुक्ल जी कहते है कि अपनी आंकाक्षा के साकार स्वरूप उस जल कलश को जा कि पत्नी की मनोकामना को पूर्ण करने वाला था, राजा प्रसन्न चित्त और सन्तुष्ट होकर साधना स्थल से अपने घर को लौट आये।

श्रद्धेय शुक्ल जी का निम्नांकित श्लोक मालिनी छन्द का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है-

"प्रखरतर निदाधैरूत्तराखण्डजीवा, विहगपशुमनुष्याः व्याकुलास्ते तदासन्,
स्थितिमिति परिवीक्ष्य ज्ञानवान् मेघदूतः, परमसुखमयच्छत् छायया तेभ्यआरात् ।।"

(गंगा.दूतानुबन्धः २२)

कवि कुल गुरू कालिदास ने मेघदूतं नामक काव्य में मेघ सी यात्रा का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया है। उस काव्य में रामगिरि पर्वत पर निवास करता हुआ यक्ष मेघ को दूत बनाकर अल्कापुरी भेजता है ताकि उसकी वियोगिनी पत्नी को यह ज्ञात हो सके कि उसका पति सकुशल है, शुक्ल जी ने कवि कुलगुरू का अनुसरण करते हुये मेघ को दूत बनाया है। कवि ने गंगा को नायिका समुद्र को नायक तथा बादल के द्वारा

एक दूसरे के गुण सौन्दर्य का श्रवण कर परस्पर आकृष्ट होते है तथा मिलन संयोग की आकुलता में वियोग की वेदना नायक या नायिकों को पीड़ित करने लगती है। मेघ के उदात्त हृदय का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि-

भीषण ग्रीष्मऋतु के कारण उत्तराखण्ड का अंचल पशु,पक्षी और मनुष्य बहुत अधिक व्याकुल थे। ज्ञानवान मेध ने ऐसी स्थिति समझकर अपनी छाया से सभी को सुख प्रदान किया।

कवि ने निम्नांकित श्लोक में शिखरणी छन्द का मनोहारी प्रयोग किया है। अर्थगौरव भी श्लोक की एक विशेषता है।

''व्यवस्था लोकानां स्वयमपि च लौकैर्विरचिता,
विकुर्तशक्यन्ते निजकृतिमतस्ते नियमतः ।।
पदार्थयत् कोऽपि प्रजनयति लोके निजबलात् ।
तदायप्तो नाशोऽपि च भवति तस्य प्रकटतः ।।''

(गंगा.उद्योग प्रकरणम् १२)

शुक्ल जी कहते है कि मनुष्यों ने ही स्वयं ही मनुष्यो के हित के लिये लोक व्यवस्था का निर्माण किया है अतः वे ही अपने द्वारा बनायी गयी व्यवस्था का खण्डन करने में सम्भवतः व्यस्त है। अलंकृत शैली में इसका वर्णन करते हयु कवि कहता है कि जो कोई भी इस संसार में अपने बल से किसी पदार्थ को उत्पन्न करता है,उस वस्तु का विनाश भी उसी के अधीन रहता है।

कवि में रसिकता का भी गुण है। निम्नाकिंत शालिनी छन्द में यह प्रतिभा स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है-

''फुल्लेकंजे कोषवद्धद्विरेकाः, मुक्तिलबध्वा अति प्रसन्नाः बभूबुः।
कामार्तानां किन्तु मुक्त्वा पराग, नासीत् तेषां क्वापि मानाभिलाषः ।।''

(गंगा.गंगाजन्म ६)

प्रातःकाल का सुरम्य वर्णन करते हुये कवि कहता है कि कमलो के खिल जाने पर सम्पुट बन्द और मुक्ति प्राप्त करके बहुत प्रसन्न हुये किन्तु मधुर पराग का भोजन करके भी उन काम पीड़ित भोरो की आंकाक्षा तृप्त नहीं हुयी।

शुक्ल जी ने इस काव्य में प्रायः अनुप्रास,उपमा,रूपक,उत्प्रेक्षा,विशेषोक्ति, अतिशयोक्ति,भ्रांतिमान,सन्देह,मानवीकरण आदि अलंकारों का बड़ी सफलता के साथ प्रयोग किया है। अलंकार बड़े ही स्वाभाविक ढंग से गुम्फित है और उसमें कृत्रिमता के लेशमात्र भी दर्शन नहीं होते हैं।

यह बात शत प्रतिशत सही है कि शुक्ल जी कालिदास से बहुत प्रभावित है। यह प्रभाव इस काव्य पर आद्योपान्त लक्षित होता है,किन्तु यह अद्यानुकरण नहीं है। घटनाओ के चित्रण, शब्द सौन्दर्य, विविध छन्दो का प्रयोग इन सभी में कवि ने रघुवंश,मेघदूत,कुमारसम्भव,अभिज्ञानशाकुन्तलम् से प्रेरणा प्राप्त की है। कवि ने मेघदूत की परम्परा में ही गंगासागरीयम् में क्षेत्र को संस्कृत भाषा में प्राप्त मिलते ही नहीं हैं। शुक्ल जी की धारणा है कि कवि तो निरंकुश होता है। उसे कहीं-कहीं स्वतन्त्र मार्ग पर भी चलना चाहिये। कविता कामनी कान्त,वाणी विलास,महाकवि,कालिदास में भी यह विशेषता दृष्टिगोचर होती है। कारकों के प्रयोग में भी शुक्ल जी ने कहीं-कहीं स्वतन्त्र मार्ग अपनाया है पर ऐसे उदाहरण नगण्य है।

कवि ने प्राकृतिक सौन्दर्य चित्रण के साथ-साथ सम्बन्धित वातावरण के सृजन पर विशेष ध्यान दिया है। पर्वत,नदी,समुद्र,समतल भूमि,पशु,पक्षी,आदि के चित्रण में यह विशेषता विशेष रूप से परिलक्षित होती है।

शरीर के उत्कर्षाधायक हारादि अलंकारों के समान शब्द एवं अर्थ के जो अस्थिर धर्म (स्थिर धर्म तो गुण होते है) उसकी शोभा का अतिशय उत्पन्न करते है।उन्हें अलंकार कहते हैं। १

---

१. शब्दार्थमोरस्थिरा धर्मा ये शोभातिशामिनः।

- द्वारादिवदलंकाराः

ये अलंकार दो प्रकार के होते हैं-शब्दालंकार तथा अर्थालंकार। जो अलंकार शब्दार्थोभय-निष्ठ हैं,उन्हें कुछ आचार्यो ने उभयालंकार भी कहा है।

अलंकारों की प्रतिष्ठा सर्वप्रथम आचार्य भरत (ई०पू०चतुर्थ शती) में की। अपने नाट्यशास्त्र नामक पृथुल ग्रंथ में उन्होने उपमा,रूपक,दीपक और यमक को व्याख्यात किया परन्तु यही चारालंकार आचार्य भामह,दण्डी,उद्भट् रूद्रट,कुन्तक,मम्मट विश्वनाथ,जयदेव,जगन्नाथ के व्याख्यानों से उत्तरोत्तर विकसित होते हुये,आचार्य उप्पयदीक्षित प्रणीत कुबल्यानन्द (१७वी. शती ई०) में १२५ की संख्या में विभक्त हो गये। अलंकारों के विकास की यह कथा अत्यन्त रोचक एवं कौतुहलयुक्त हैं, जिसे उपर्युक्त आचार्यों के काव्याशास्त्रीय ग्रंथों के परिशीलन से समझा जा सकता है-

प्रस्तुत सन्दर्भ में इतना ही निर्दिष्ट कर देना पर्याप्त होगा कि गंगापरक काव्य- वाड्.मय समूचे संस्कृत काव्य-वाड्.मय का नवनीत हैं। क्योंकि उसमें काव्य,इतिहास तथा धर्म की त्रिवेणी विद्यमान हैं। भावसम्पदा की दृष्टि से,अलंकार की दृष्टि से, विम्बविधान एवं छन्दयोजना की दृष्टि से गंगापारक काव्य सचमुच अप्रतिम है प्रायः समस्त उत्तम अलंकारों का प्रयोग गंगावाड्.मय के सर्जक कवियों ने किया है।

अब कुछ प्रमुख अलंकारों की सोदाहरण व्यख्या की जा रही है-

१. अनुप्रास अलंकार

स्वर की विषमता रहने पर भी शब्द अर्थात् पद अथवा पदांश के साम्य को अनुप्रास कहते है। इसके छेक,वृत्ति,लाट आदि अनेक भेद आचार्यों ने बताये हैं। यह अलंकार इतना सहज एवं स्वाभाविक हैं कि काव्य में बिना यत्न के ही पद-पद पर आता रहता है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं।

''कस्तूरिका केसर गन्ध योगात्, स्वं प्रकृत्याकृत चारू वेशात् ।
ऐश्वर्य संभार निधेधरित्र्याः, नाकलकां राज्यमपाकरोति ।।

(गंगाराज्यवर्णनम् १०)

---

१. अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत् । साहित्यदर्पणः

प्रस्तुत उदाहरण में क-क, ध-ध,य-य,र-र में में स्वर वैषक्य के रहते हुये भी पद्यांशों की आवृत्ति अनुप्रास उत्पन्न कर रही है।

शीर्षे श्लथः श्वेत जटा कलापो,
यद्दृष्टि मार्गे सहसा समायात्
प्रदर्शयत्येव तदन्य चिन्ता
न वर्तते लोक हितैषिताग्रे।।

(गंगा कथारम्भः ३८)

प्रस्तुत उदाहरण में रा-श की आवृत्ति अनेक बार है अतः अनुप्रास अलंकार द्रष्टव्य हैं

२.उपमाअलंकार

(उपमान तथा उपमेयका) भेद होने पर दोनों के गुण,क्रिया धर्म की समानता का वर्णन उपमालंकार है।२

दया दृष्टिमेतेषु सापि क्षिपन्ति
दयन्यार्द्रतां शान्तिमेंताश्च सर्वान्
तथा कुर्वती निर्मलान् मार्गदेशान्
चचालोति लोकार्थ दात्रीव गंगो ।।

(गंगा.बाललीला ३२)

न सा केवलं निर्मलत्वं ससर्ज
समस्ते स्वके शोभने मार्गदेशे।
परं तं धनेनापि धान्येन पूर्ण
चकारोपकारण्मिं खण्डं प्रदेशम् ।।

(गंगा.बाललीला ३३)

---

२. साधर्म्यमुपमा भेदे । काव्यप्रकाशः

३. उत्प्रेक्षा अलंकार

उपमेय की उपमान के रूप में सम्भावना ही उत्प्रेक्षा है।[१] उदाहरण द्रष्टव्य है-

अन्यत्र यस्त्रासमते मनुष्यान्, प्रचण्ड तापैर्दहतीव पृथ्वीम् ।
तुषारयोगेन निगृह्यमाणो, ग्रीष्मोऽस्य राज्येषुसुखं तनोति ।।

(गंगा.राज्यवर्णनम्- १८)

४. रुपक अलंकार

उपमान एवं उपमेय के अभेद को ही रुपक कहते हैं।[२] उदाहरण इस प्रकार है-

मकरझष पताकैः कूर्मशंखध्वजैस्वै, रतुलितरणवीरैस्सैन्य सञ्चालकैश्च।
समरविधि सहस्त्रै रक्षितं क्षेमपूर्ण, इयदवधिनजेये वर्तते तस्यराज्यम् ।।

(गंगा.इतानुबन्धः- ३३)

५. श्लेष अलंकार

अर्थ भेद के कारण भिन्न-भिन्न होकर भी जहाँ शब्द एक उच्चारण के विषय होते हुए श्लिष्ट(एकरुप) प्रतीत होते है,[३] वह श्लेष अलंकार है। उदाहरण दृष्टव्य है-

यत्स्यात् तत् स्यात् वालसूर्यः प्रभाते, मुक्ताभूतान् कीर्णनीहार बिन्दून्।
चित्वैकैकान् सप्रयासैः करैस्स्वैः, चिन्तापूर्व मार्जमायास पृथ्वीम् ।।

(गंगा.गंगा-जन्म-१३)

---

१. भवेत् संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना । साहित्यदर्पण

२. तद्रूपकमभेदो यं उपमानोपमेययोः ।। काव्यप्रकाशः

३. वाच्यभेदेन भिन्ना यद् युगपदभाषणस्पृशः।
शिलष्यन्ति शब्दाः, श्लेषोऽसावक्षरादिभिरष्टधा ।। काव्यप्रकाशः

६. पर्यायोक्ति अलंकार

जब प्रकारान्तर से व्यंग्य बात को ही अभिध्या कह दिया जाये तो पर्यायोक्ति अलंकार होता हैं।

गेहे गेहे हर्षणं बालकानां, कुञ्जे कुञ्जे कूजनं वा खगानां।

जन्तूल्लासं कानने कानने च, दृश्यं च क्रुव्यापकस्योत्सवस्य।।

(गंगा. गंगा-जन्म-१७)

६. विशेषोक्ति अलंकार

कारण के होते हुए भी कार्य के न होने पर विशेषोक्ति अलंकार होता है।

पितुर्गेहेवासश्चिरमिह वरेण्यो न दुहितुः,

भवत्यस्याश्शोभा स्वपतिसंदने ह्येन सततम् ।

कथं तल्लोकानां स्थितिमिति च जानन्नपि पिता,

शुभात् कार्यादस्मात् कथम सहसा वारयसि माम् ।।

(गंगा.उद्योग-प्रकरणम् ४५)

पिता रुप कारण की उपस्थिति में बेटी रुप सुख से न होने के कारण विशेषोक्ति अलंकार है।

८. स्वभावोक्ति अलंकार

स्वभावोक्ति वह अलंकार है, जहाँ बालक यदि(पदार्थों) की स्वआश्रित क्रिया तथा रुप आदि का वर्णन किया जाता है। उदाहरण दृष्टव्य है।३

फुल्ले कञ्जे कोष बद्धद्विरेफाः,मुक्तिं लब्धवातिप्रसन्ना बभूवुः ।

कामार्तानां किन्तु भुक्त्वा परागं,नासीत् तेषां क्वापि मानाभिलाषः ।।

गंगा-जन्म ६

---

१. पर्यायोक्तं यदा भग्या गम्यमेवाभिधीमते। साहित्यदर्पणः

२. सति हैतो फलाभवे विशेषोक्तिस्तथाद्विधा ।। साहित्यदर्पणः

३. स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रिमारुपवर्णनम् ।। काव्यप्रकाशः

गुञ्जन्तस्ते रेभिरे कञ्जकत्यां, वारं वारं तत्र सर्वे भ्रमन्तः।

कल्यः कल्यः गन्धमाघ्राम रेणोः, मत्ता भूत्वा मद्यपानुक्रमेण ।।

गंगा-जन्म ७

६. अर्थान्तरन्यास अलंकार

सामान्य- विशेष तथा कार्य-कारण का जहाँ परस्पर समर्थन हो, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है।[१] सामान्य से विशेष का समर्थन गंगापरक प्रस्तुत पद्य में दृष्टव्य है-

श्रमेणैव सिध्यन्ति कार्माणि लोके, श्रमेणैव लोकोन्तरं चापि लभ्यम्।

श्रमेणैव चोत्कर्ष तां यान्ति लोकाः, श्रमं साधयध्वं श्रमं साधयध्वम् ।।

(गंगा. बाललीला-२८)

प्रकृति चित्रण

कवि ने गंगा सागरीयम् काव्य में प्रकृति चित्रण को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। प्रकृति वस्तुतः मानव की सहचरी है। इस काव्य में शुक्ल जी ने हिमालय पर्वत उसकी उपत्यका,अद्यस्थित,मैदानी क्षेत्र के बनों उपवनों वृक्षों लताओं, बनस्पितियों,सुरभित, पुष्पों,झरनों,पशुओ,पक्षियों,और सरिताओं को नैसर्गिक वर्णन किया है। वर्णन में विशदता और यथार्थता दोनो ही गुण विद्यमान है। कवि ने हिमवान का प्रत्यक्ष भ्रमण किया था अतः उनका वर्णन कल्पना प्रसूतन ही नहीं बल्कि वास्तव है। भौगोलिक दृष्टिकोण से कोई भी वर्णन अप्रीति जनक नहीं है। निम्नाकित श्लोक उनकी चित्रण कला पर पर्याप्त

---

१. सामान्यं वा विशेषण विशेषस्तेन व यदि

कार्य च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते।

साध्र्म्येणेतरेणायन्तिरन्यासो ष्टधा मतः ।। सहित्य दर्पण

प्रकाश डालते है-

''वाट्यादिभिस्सुन्दर वृक्षवर्गै:,र्लता प्रतानैर्हरितैस्तृणैश्च ।
सरीसृपै: पक्षिमृगादि यूथै:, सम्पन्नमस्त्यस्य पदं समग्रम् ।।''

(राज्यवर्णनम्-२)

वाटिकाओं से सुन्दर,वृक्ष वर्गो से सुशोभित,लताओं ओर झाड़ी से सुशोभित,हरी-हरी घास के द्वारा और पक्षी एवं मृगादि के समूहो से सम्पूर्ण पद (क्षेत्र) सम्पन्न व सुशोभित है।

''जल प्रपातै: पयसो नदीभि, बनैर्मनोज्ञै: पवनै: बनान्तै: ।
संशोभितोऽसौ हिमवत् प्रदेश:, ईर्ष्यास्पदं स्यात् सुरपत्तनस्य ।।''

(गंगा.राज्यवर्णनम् ३)

कवि शुक्ल जी प्रकृति वर्णन का सुन्दरतम् व्याख्यान करते हुये लिखते है-

झरनों के जलों से,पानी वाली नदियों से,मन को हरण करने वाले वनों से,वन में बहने वाली हवा से हिमालय के समान यह वर्फ से आच्छादित प्रदेश सुशोभित हो रहा है तथा इन्द्रपुरी अमरावती भी इससे ईर्ष्या करती है।

प्राकृतिक दृश्यों को कवि ने कहीं आलम्बन के रूप में तो कहीं उद्दीपन के रूप में प्रस्तुत किया है।

'' वनस्पतीनां बहुभिर्निकुंजै,नाना विधैश्यामल शस्य पुञ्जै: ।
फलोच्चयै: प्रस्फुटितै: प्रसूनै:,रूद्यान शोभा विधेहि राज्यम् ।।''

(गंगा.राज्यवर्णनम् -३)

बहुत सी वनस्पितियों की निकुञ्जो से,बहुत से हरे भरे पुष्पों के पुञ्जो से तथा खिले हुये पुष्पो और फलों के समूह से यह उद्यान की शोभा राज्य की शोभा

को बढ़ा रही है।

प्राकृतिक चित्रण में कवि ने अत्यन्त कोमलकान्त पदावली तथा भाषा के सरलतम रूप का उपयोग किया है। यहां तक कि उसमें समासों और सन्धियों में व्याकरण निषिद्ध स्वांतत्र्य का उपभोग किया है। जहां दो शब्दों में सन्धि हो रही है। कवि ने अभिव्यक्ति की जटिलता एवं दुरूहता से रक्षा करने के प्रयोजन से सन्धि नहीं होने दी। कई स्थलों में कवि ने संस्कृत भाषा में नितान्त अप्रचिलत शब्दों तथा कारको का प्रयोग किया है।

''कस्तूरिका केसर गन्ध योगात्, स्वयं प्रकृत्याकृतचारूवेशात्,
ऐश्वर्य संभार निधेर्धरित्र्याः,नाकालकां राज्यमपाकरोति ।।''

(गंगा.राज्यवर्धनम् १०)

यह कस्तूरी व केसर की गन्ध से सुशोभित था तथा स्वयं ही उसने प्रकृति का श्रंगार किया था। प्रकृति की सुषमा से तथा ऐश्वर्य की निधि से यह धरती से युक्त यह राज्य ने स्वर्ग को भी तिरस्कृत कर दिया था ।

'' क्षेत्राणि शस्येन समाकुलानि, पयः प्रपूर्णा अपि धेनुवर्गाः,
संतुष्ट चिन्तास्सततं मनुष्या, हेमन्त ऐश्वर्यमयो विभाति ।''

(गंगा.राज्यवर्णन २१)

हरे भरे क्षेत्रों के समूहों से,दूध देने वाली गायों के समूहों से ओर सन्तुष्ट चित्त वाले मनुष्यों के द्वारा हेमन्त के ऐश्वर्य के समान यह राज्य सुशोभित हो रहा है।

कवि कुल गुरू कालिदास ने दिलीप गो सेवा सन्दर्भ में सघन वनों और सौन्दर्य शोभा का मनोहारी चित्रण किया है। लगभग वैसा ही भव्य वर्णन शुक्ल जी द्वारा रचित इस श्लोक में दृष्टि गोचर होता है-

''शस्यैर्मयूरैः परिसेवितानि, हरिततृणाच्छादन सज्जितानि ।
तत्रैव गंगैक्षत् शादूलानि, श्यामायमानानि च विस्तृतानि ।।''

(गंगा. प्रस्थानम् २५)

शुक्ल जी रघुवंश महाकाव्य की भांति प्रकृति चित्रण प्रस्तुत करते हुये लिखते है कि नृत्य में संलग्न,मयूरो द्वारा सेवित,हरी घास के आच्छादन से सुशोभित,गंगाजल सिंचित साद्दबल श्यामवर्ण के प्रतीत हो रहे थे।

कुमार सम्भव में कालिदास ने हिमालय पर्वत की विशिष्टता का मनोहारी चित्रण किया है। लगभग वैसा ही चित्रण गंगा सागरीयम् में भी दृष्टिगोचर होता है-

गंगा सागरीयम् का प्रारम्भ कालिदास के विश्रुत काव्य 'कुमारसम्भव' के उद्धात की भांति ही होता है। शब्दावली भाव,छन्द सभी में शुक्ल जी प्रभावित है-

"अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा, हिमालयो नाम नगाधिराजः,
पूर्वा परौ तोयनिधिऽवगाह्य, स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः ।।"

(कुमार सम्भव)

चित्रविचित्र पंखो से सुशोभित,होने वाले मयूरो से हरी भरी घास के विद्वानों से पूर्व तथा पश्चिम में फेले हुये समुद्र के द्वारा अवगाहित यह पृथ्वी के मानदण्ड के समान यह हिमालयन सुशोभित हो रहा है।

" अस्युत्तराखण्ड पदे समृद्धे,स्वनाम धन्यो हिमवान् महीभृत ।
आश्याम् पेशावर विस्तृतस्य राज्यस्यनान्तं विभवस्य तस्य ।।"

(गंगा.राज्य वर्धन १)

ग्रन्थ के प्रारम्भ में पर्वतराज हिमालय की विषदता का वर्णन करते हुये शुक्ल जी लिखते हैं कि वैभव से परिपूर्ण,उत्तराखण्ड में हिमवान् नामक स्वनाम धन्य पर्वत है। आसाम् से पेशावर तक अर्थात् भारतवर्ष की पूरी उत्तरी सीमा पर विस्तृत राज्य के ऐश्वर्य का अन्त नहीं है, वास्तव में उसका वैभव तो वर्णनातीत है।

दोनों ही कवियों ने हिमालय को पर्वताधीश के रूप में प्रस्तुत किया है। दोनों ने ही हिमालय के विपुल विस्तार की चर्चा अपनी-२ काव्य शैली में की है। कालिदास ने आगे चलकर हिमालय के वैभव वर्णन में 'प्रभवस्य यस्य' शब्दावली का प्रयोग किया है और कविवर शुक्ल ने उपर्युक्त श्लोक में 'विभवस्य तस्य' शब्दावली का

प्रयोग किया है। गंगा-सागरीयम् काव्य में कालिदास का प्रभाव आद्योपान्त लक्षित होता है, किन्तु यह निष्प्राण अनुकरण कदापि नहीं हैं।

कवि कालिदास उपासना के सन्दर्भ में शैव थे। शुक्ल जी भी पैतृक परम्परा से शैव थे। उनके गांव के बाहर एक कामतेश्वर का मन्दिर हैं।जहां शुक्ल जी गांव में होने पर निरन्तर जाते थे। उन्होने भगवान कामतेश्वर पर संस्कृत में स्तुति परक कई काव्यात्मक श्लोकों की रचना की थी।

कालिदास के रघुवंश में जब दिलीप सन्ध्या में नन्दिनी को चराकर लौटते है तो देखते है अतः रघुवंश महाकाव्य का १७ श्लोक निम्नांकित है।

" स पल्लवोत्तीर्ण वराहयूथान्वास वृक्षोन्मुख बर्हिणनि,

ययौ मृगाध्यासित शाद्वलानि श्यामायमनानि बनानि पश्यन् ।।

(रधुंवश महाकाव्य)

पत्तो से सुशोभित,बराह समूहो से व्याप्त,वृक्षों की कान्ति से कमनीय, मोरो तथा मृगो के नृत्य से,सिंहो से व्याप्त यह हरा भरा बन सुशोभित हो रहा है।

इधर स्वगेह त्याग के पश्चात् गंगा का जो दृश्य दृष्गिोचर हुये उनका वर्णन शुक्ल जी ने कालिदास की न केवल परम्परा में प्रत्युत प्रायः उसी शब्दावली में किया है। यों तो गंगा सागरीयम् में ऐसे अनेक प्रसंग है किन्तु यहां यह श्लोक द्रष्टव्य है-

" शस्यैर्मयूरैः परिसेवितानि हरित् तृणाच्छादन सज्जितानि,

तत्रैव गंगैक्षत शाद्वलानि श्यामायमानानि च विस्तृतानि।।

(गंगा.प्रस्थानम् २५)

शुक्ल जी प्रकृति चित्रण का वर्णन करते हुये लिखते हैं कि नृत्य में संलग्न,मयूरो द्वारा सेवित,हरी घास के आच्छादन से सुशोभित,गंगाजल संचिंत,साद्बल श्यामवर्ण के प्रतीत हो रहे है।

श्री बदरीश धाम के वर्णन में शुक्ल जी लिखते हैं। शुक्ल जी ने पर्वत

की उपत्यका में स्थित तीर्थ स्थानों के सुरम्य चित्र प्रस्तुत किये है-

'' निः सृत्य गेहात् हिमवत् सुता सा प्रापद द्रतुं श्री वदरीश धाम्,

नरस्वाररूपेण जगद्धिताय, नारायणो यत्र तपश्चकार ।।''

(गंगा प्रस्थानम् १२)

कवि बद्रीनाथ धाम का चित्र प्रस्तुत करते हुये लिखता है कि पर्वतराज हिमालय की पुत्री अपने घर से निकलकर तीव्रगति से बदरीशधाम में पहुंची,जहां पर स्वयं भगवान नारायण ने जन कल्याण के लिये मनुष्य का स्वरूप धारण करके तपस्या की थी। वह स्थान वास्तव में इतना पावन और पुण्य प्रद है कि लोक मंगल के लिये स्वयं भगवान ने भी तपसचर्या की भी।

'गंगा सागरीयम्' काव्य एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें भागीरथी गंगा के जीवन का एक अंश प्रस्तुत किया गया है। हिमवान् कन्या गंगा का व्यक्तित्व देव कोटि में आता है। उसी के जन्म से लेकर जीवन के एक खंड की कथा इस काव्य में ध्वनित की गयी है ऋतुओं,दिवारात्रि,राज्य की स्थिति,प्रातः संध्या,पर्वतीय दृश्यों,नदी नद सरोवर,पशु पक्षियों,उद्यानों सूर्य,चन्द्र,नक्षत्रों आदि का अत्यन्त मनोहारी चित्रण किया गया है। विचित्र बात यह है कि यह कृति कथावस्तु की सीमा के आधार पर यह महाकाव्य की कोटि में आती हैं इसे हम खण्डकाव्य और महाकाव्य के बीच की कोटि में रख सकते है।

कवि ने इसी प्रसंग में देव प्रयाग काशी का भी मनोहारी चित्रण किया है-

'' तस्याद् यदाग्रे तनया चचाल,देव प्रयाग सहसा ससाद,

तत्रैव गंगा मिलितं सरागं, सरवी समेतालक नन्दिनीति।।''

(गंगा.प्रस्थानम् १४)

गंगा की गति और प्रवाह का चित्रण करते हुये कवि कहता है कि वह धारा बदरीनाथ के द्वारा चलते हुये पवित्र देव प्रयाग नामक स्थान पर वही पर और छोटी नदियों के साथ अलकनन्दनी बड़े प्रेम के साथ गंगा नदी में मिल गयी।

आदरणीय शुक्ल जी ने प्राकृतिक हाथों का आंलबन और उद्‌दीपन

दोनों ही रूपों में प्रस्तुत किया है। इतना ही नहीं कवि ने प्रकृति के कार्यों को माध्यम बनाकर मानवीय चित्त वृत्तियों का सुन्दर चित्रण किया है।

प्राकृतिक चित्रण में कवि ने अत्यन्त कोमल कान्त पदावली तथा सरलतम् भाषा का उपयोग किया है। भाषा को सरल बनाने के उद्देश्य से कवि ने कही-कही समासो और सन्धियों में व्याकरण निषिद्ध भाषा का प्रयोग किया है। कहीं कहीं कवि ने ऐसे शब्दों का प्रयोग कर दिया है जो संस्कृत भाषा में मिलते ही नहीं है। कवि ने प्राकृतिक सौन्दर्य चित्रण से साथ साथ सम्बन्धित बातावरण के सृजन पर विशेष ध्यान दिया है।

'' आश्याम् पेशावर विस्तृतस्य राज्यस्यनान्तं विभवस्यतस्य''

(गंगा.राज्यवर्णनम् १)

फिर भी यह बातें निर्विवाद रूप से सही है कि इस अनुकरण से मौलिकता में कोई अन्तर नहीं आया है।

यदि गंगा सागरीयम् को पूजा कृति कहा जावे तो इसमें कोई अतिरंजना नहीं है इसमें आशुतोष शंकर और देवापगा गंगा के प्रति कवि द्वारा अध्यात्म परक स्तवन काव्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया गया है-

'' कण्ठे त्रिलोकस्य हिताय पीतं, हलाहलं कैर्विधिभिः शुशोभ,
यथा क्वचित् राजत पात्र मध्ये, वभासते नीलमणिः प्रभावान्।।

(गंगा.कथारम्भः ३४)

तीनों लोको के हित के लिये भगवान शंकर ने जो हलाहल विष पीया,वह ऐसा सुशोभित हो रहा है जैसे चांदी के पात्र में नीलमणि सुशोभित हो रही हो इसमें कवि ने उपमा अलंकार का मनोहारी वर्णन किया है-

''नेत्रं तृतीयं पृथुमालदेशे,बर्हे यथा राजति चन्द्रबिन्दुः
ग्रन्थेषु धर्मस्य कृतं सभक्त्या,पूजा प्रसंगे तिलं यथा वा ।।''

(गंगा.कथारम्भ ३७)

भगवान शंकर के मस्तक पर तीसरा नेत्र वैसे ही सुशोभित हो रहा है जैसे मोर के पंखो में चन्द्रबिन्दु सुशोभित हो रहा है। धर्मग्रन्थों में भक्ति से जिसतरह

पूजा की जाती है वैसे ही उनके मस्तक पर तिलक सुशोभित हो रहा है

'' रूद्राक्षः मालाः परिधाय देहे, स्वीकृत्य शूलं डमरूं पिनाकम्।४
दृढ़ासने शान्त विरक्त चित्तः, आसीन आसीत् भगवान् महेश ।।

(गंगा.कथारम्भ४१)

भगवान शंकर अपने कण्ठ मे रूद्राक्ष की माला धारण कर रहे है तथा त्रिशुल,डमरू पिनाक धनुष जिनके हाथ में सुशोभित हो रहे है तथा दृढ़ आसन लगाये हुये शान्तभाव से विरक्त चित्त वाले भगवान शंकर बैठे हुये सुशोभित हो रहे हैं।

इस खण्ड महाकाव्य में पार्थिव वर्णनों के आवरण में विशुद्ध अध्यात्म नैतिकता अभिनिविष्ट की गई है।

काव्य में शान्तरस विप्रलम्भ,वात्सल्य तथा त्याग मूलक वीररस की अवधारण हुई है। केवल कथानक को आगे बढ़ाने में अभिधा का प्रयोग किया गया है। अन्यथा इसमें व्यंजना का ही प्राधान्य है।

आदरणीय शुक्ल जी का जीवन सदैव श्रम परायण, कर्मठ और साधनामय रहा। काव्य वास्तव में लेखक के विचारों का प्रतिविम्ब होती है। अतः इस काव्य में कवि ने उद्योग कर्मठता और साधना को विशेष महत्व दिया है। निम्नांकित भुजंगप्रभात छन्दों में उनकी श्रम सम्बन्धी धारणा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है-

'' निशायां दिवावा प्रभाते प्रदोषे, न तस्याः क्षणं चापि विश्रान्तिरासीत्
अविच्छिन्न गत्या सदाग्रे प्रयाणां,बभूवाथं तस्याः कृमं जीवन्यू ।।

(गंगा.बाल लीला २६)

कवि कहता है कि रात्रि,दिन,प्रातःकाल और सायंकाल में अर्थात् प्रतिक्षण वह गतिशील ही रहती थी और उसका थोड़ी देर के लिये भी विराम नहीं होता था। अविच्छिन्न गति से आगे बढ़ने वाली गंगा का यह जीवन क्रम ही बन गया।

'' अनेन क्रमेण स्वकेनेह गंगा, महत्तत्वं श्रमस्य प्रतिष्ठा पयन्ती।
जनान् सा समुद्बोधयाभास संवनि्, श्रमाभ्यासमेवेहि कुर्यात् यत्नैः ।।

(गंगा.बाललीला२७)

कवि कहता है इस क्रम में गंगा ने परिश्रम के महत्व को स्थापित किया और मानव समाज को यह उद्वोधन दिया कि उसे अपने विकास के लिये यत्नपूर्वक परिश्रम करना चाहिये।

''श्रमेणैव सिध्यन्ति कार्यणि लोके, श्रमेणैव लोकात्तरं चापि लभ्यम् ।
श्रमेणैव चोत्कर्षतां यान्ति लोकाः, श्रमं साधमध्वं श्रमं साद्यमध्वम् ।
(गंगा.बाललीला २८)

श्रम के द्वारा ही कार्य सफल होते है, परिश्रम से ही दिव्य लोक की भी प्राप्ति होती है,इसलिये कवि प्रेरणा देते हुये कहता है कि हमें निरन्तर श्रम की ही साधना करना चाहिये।

'' श्रमस्यैव चास्य प्रभावैः कदाचित्,जयं सर्वदा जीवने सा प्रपेदे,
गते वासरे वर्धमाना स्वकीर्त्या, विशेषेण सा मानपात्रं वभूब।।''
(गंगा.बाललीला २९)

श्रम के महत्व पर प्रकाश डालते हुये शुक्ल जी कहते है कि गंगा ने परिश्रम के प्रभाव से ही सम्भवतः जय को प्राप्त किया है, दिन प्रतिदिन बहती हुयी, कीर्ति से वह विश्व में आदर की पात्री बन गयी।

गंगा हमें गतिशीलता,परिश्रम,कर्मठता और हृदय के प्रति तत्परता का पाठ पढ़ाती है। शुक्ल जी भी निम्नांकित श्लोक के माध्यम से यही विचार प्रस्तुत करते है। वे अपनी काव्य साधना को सफल करने के लिये गंगा माता की ही स्तुति करते है-

''इयं धरा शैव जटा कलापो, विष्णोः पदं ब्रह्म कमण्डलुश्च।
पूता समस्ता कृपया मया सा, गंगा गिरो मे विमली करोतु।।''

इसके अतिरिक्त शुक्ल जी के कुछ महत्वपूर्ण विचार है जिन्हें उन्होंने इस काव्य के माध्यम से प्रकट किया है। माता पिता द्वारा सन्तान के विवाह में कितना हस्तक्षेप होना चाहिये,इस बिन्दु पर कन्या और पिता का जो विवाद है वह भी आत्म पर कहीं। कवि की धारणा है कि

विवाह के सम्बन्ध में सन्तान को स्वतन्त्रता होनी चाहिये उस प्रकार कवि नारी स्वतन्त्रता का भी पोषक है। कन्या द्वारा सागर को पति रूप में वरण करने में भी शुक्ल जी की आत्म भावना गुम्फित है।

"गंगा-सागरीयम्" की कथावस्तु का आधार परम्परागत गंगावतरण का ही पौराणिक आख्यान है किन्तु गंगा का पृथ्वी पर अवतरण यह घटना भले ही इस काव्य का वर्ण्य विषय मान लिया जाये कवि ने रचना में अपनी विलक्षण काल्पनिकता का परिचय दिया है।

कवि की कल्पना प्रसूत वस्तुपरक मौलिक उद्‌भावनायें,स्थापनायें एवं उपपत्तिया वर्णन में उपन्यासिक कौतूहल उत्पन्न करती है। कवि के अनुसार भारत के उत्तराखण्ड में हिमवान् नामक राजा है जिसका राज्य सर्वतोभावेन समृद्ध,सम्पन्न और वैभवपूर्ण है। उसमें किसी प्रकार के अभाव का लेश भी नहीं है।

काव्य में अलंकारों के अयत्नज उन्मेष, रसो का अव्यावसायिक उद्रेक, भावुकता के मर्मस्पर्शी मोहक आवेश सहृदय पाठक के लिये एक महद्विभूति एवं अमृतोपय रसायन का कार्य करते है। पुण्योदका भागीरथी के अप्रतिहत प्रवाह के साथ ही कृति का काव्य प्रवाह भी अव्याहत चला है। गिरिराज हिमालय का वैराट्य, उसका नैसर्गिक सुषमा संभार, उसकी व्योमसंचारी ऊंचाईयों का वैभव तथा उसके गुहावगुण्ठित अन्तराल का औदार्य जैसे गंगा जल में गल कर सागर की अतुल जलराशि में समाहित हो गया है। गंगा के इतिवृत्त चित्रण में कविता कवि से जैसे सर्वथा असम्पृक्त होकर अपने स्वतन्त्र अस्तित्व को संभाले स्वतः अग्रसर होती गयी। उसमें कल्पनाओं के उत्स भावनाओं के स्त्रोत तथा चित्रणों के मनोहारी निर्भर अपनी सम्पूर्ण मनोज्ञता को समेटे हुये अनायास प्रस्फुटित हो रहे है। कवि ने अतीव कवित्वमयी शैली में गंगा की बन्दना में जो श्लोक प्रस्तुत किया है वह अपने में जैसे पूरी कथावस्तु का यथार्थसार बन गया है । जिस पर कवि ने अपनी कल्पनावल्लरी को आकर्षक ढ़ग से प्रस्तारित किया है-

रस निष्पत्ति-

प्रबन्धात्मक इस काव्य कृति में स्वाभाविक रूप से रसो की निष्पत्ति प्राप्त होती है-

" विभावानुभाव संचारी संयोगात वस निष्पात्तिः

(काव्यप्रकाश)

अतः प्रमुख उदाहरण रस निष्पत्ति में इस प्रकार है-

वात्सल्य रस का उदाहरण-

शिशु विषयक रति स्थायी भाव, यहां शिशु की चेष्टा में उद्‌दीपन भाव आदि के कारण वात्‌सल्य रस की प्राप्ति होती है। उदाहरण द्रष्टव्य है।

" स्वकीयेन सा गौरवर्णेन गंगा, स्वभावेन वा चंचलेन स्वकेन ।

अकर्षज्जनानां मनांसि प्रसह्य,सूदूरात् समीपात् समन्तात् समानम् ।।

(गंगा.बाल लीला ५)

इस श्लोक में गंगा रूपी लड़की ने अपने गौरवर्ण के द्वारा तथा अपने चंचल स्वभाव के द्वारा दूर समीप और चारो ओर के मनुष्यों को आकर्षित कर लिया ।

" नदीनां प्रवाहोद्भवध्वान तुल्या, मनोहारिणी कन्यकायाः गिरासीत् ।

गतिश्चापि तस्याः प्रवाहेन तुल्या,क्वचित् चार्ववक्रा क्वचित् सैल वक्रा।।

(गंगा.बाल-लीला ६)

इस श्लोक में गंगा रूपी बालिका को वाणी की तुलना नदियों के प्रवाह के समय उत्पन्न होने वाली ध्वनि से की गयी है और नदी के प्रवाह के ही समान उसकी गति कभी वक्र और कभी सीधी हो जाती थी।

"यतः शैशवस्वल्प बुद्धिश्चकन्या,नवीनः पुनः सर्वमार्गः पुरस्तात् ।

अतो वाल्यकाले विशेषेण तस्याः, बभूबूः पथभ्रशं योगा अनेके।।

(गंगा.बाललीला १२)

वाल्यावस्था में उस बालिका की बुद्धि स्वल्प भी फिर उसने मागे नवीन मार्ग ग्रहण किया अतः वाल्यावस्था में उसके अनेक पथभ्रंश होने के योग उत्पन्न हुये।

" वात्सल्य भावेन शिरस्स्पृशन्ती, चाश्वासयन्ती परिरभ्य कन्याम्
विहाय मां क्वापि न गच्छ वत्से,सा प्रार्थयत् तां विनयेन भूयः।।

(प्रस्थानम् ६)

अद्‌भुत रस का उदाहरण

" तं तादृशं चारूविचित्र वेशं,पूजार्हयालोक्य विनीत चिन्तः ।
भावातिरेकात् प्रणिपत्य भूमः, सगद्‌गदं तं हिमावानुवाच ।।

(गंगा.कथारम्भः ४२)

राजा हिमवान् ने विचित्र वेषभूषा बोले,सुन्दर,पूजा के योग्य उस को देखकर विनीत चित्त होकर,प्रसन्न होकर और भावात्मक अधिकता के कारण उन्हें पुनः पुनः प्रणाम कहा।

" दृष्टवाद्भतं ते भगवन् स्वरूपं,श्रद्धाान्वितं मुह्यति मानस मे।
मौनेन तस्मात् चरणे निवेद्मि,नानाविधान् स्वान् विनय प्रणामान् ।।

(गंगा. कथारम्भः ४३)

इस श्लोक में राजा हिमवान ने भगवान शिव के इस अद्‌भुत रूप को देखकर आश्चर्य प्रकट किया और प्रसन्नचित्त हृदय से उन्हे अनेक बार प्रणाम किया।

श्रृंगार रस का उदाहरण-

भृगी मृगं सारस सारसी च तथा कपोत्या सहिते कपोतं।
वृक्षाश्रितां स्निग्धलतां पुरस्तात, तत्रैव गंगेक्षत किन्त्वकस्मात ।।

(गंगा.प्रस्थानम् २६)

इसमें श्रृंगार रस का वर्णन करते हुये कवि ने मृगी के साथ भृग,सारस के साथ सारसी तथा कपोत के साथ कपोत्या का वर्णन बड़े ही सुन्दर ढ़ंग

से किया है।

" तिष्ठत्यसौ त्वामनिशं स्मस्ती, कल्याणबुद्धिर्यम सन्निधाने।
आगम्य तां सन्नयमानपूर्व, राजोचितैस्तैस्सहितं प्रतापैः ।।

(गंगा.सागरमिलनम् ३४)

" तत्रागतं वीक्ष्य च बल्लभ स्वं, सम्पूर्णमाणं स्वमनोऽभिलाषं ।
हर्षातिरेकात् हिमवत् सुतायाः,पुस्फोर भूयो हृदयं सवेगम् ।।

(गंगा.सागरमिलनम् ४४)

" गंगापि तं प्राप्य सुपूर्णकाया,समान रूपैर्मुदिता बभूव।
भुजैस्सहस्त्रैः परिरभ्य कान्तं, तादात्म्य भावं ससुरवं प्रपेदे।।

(गंगा.सागर मिलनम् ५३)

"दैवात् यदा तन्मिलनं वभूव,सासीत् तिथिः श्रावण पूर्णिमायाः ।
तस्मात् तयोः कान्तमानोऽभिलाषाः, पूर्णा वभूवः शशिवत् समस्ताः ।

(गंगा.सागर मिलनम् ५४)

भक्ति रस का उदाहरण-

" श्रेष्ठो निकृष्टो यदि वा यथा वा, समागतोऽहं शरणं त्वदीयम् ।
अङ्.गीकुरूष्व स्वजनं दयाभि, विस्मृतय दोषानथ यामकांश्च ।।

(गंगा.कथारम्भः ६१)

इस श्लोक में राजा हिमवान भगवान शंकर से कहते है कि हे भगवान में अच्छा बुरा जैसा भी हूं आपकी शरण में आया हूॅ अतः इससे भक्ति भावना प्रकट होती है।

" जानासि सर्वांश्च मनोरथान् मे, किम् ते वदिष्यामि विमूढ़चेताः ।
कुरूष्व नूनं मम मंगलं त्वम्, निवेदनं मेऽस्ति पदे त्वदीये ।।

(गंगा.कथारम्भः ६२)

महाराज आप तो मेरे सभी मनोरथों को जानते हैं इसलिये मूढ़ हृदय वाला मैं आप से क्या कहूं। आप तो निशिचत रूप से मेरा कल्याण कीजिये, मेरा तो आपके चरणों में यही निवेदन हैं। यहां भी भक्ति रस की प्राप्ति होती है।

" दीनः कृपाभाजनमस्मि तोऽहं, त्वमेव मे केवल आश्रमोऽसि ।
त्यक्त्वावलम्वं तव सक्षमं ततु, दमानिधे सम्प्रति कुत्र यानि ।।

(गंगा.कथारम्भः ६३)

" त्वं दीनबन्धुर्जन वत्सलोऽसि,दीनोऽस्मि चाहं परमोविनम्रः ।
पात्रं दयायास्तव सर्वथैवं, तस्मात् प्रभो तारय मामपायात् ।।

(गंगा.कथारम्भः ६४)

" एवं कीर्ति गायतस्तस्यराज्ञः, कण्ठं रूद्धं गद्गदाभूच्चवाणी ।
पश्चाद् भूत्वा भूपति र्विह्लस्तः योगीशानां पादपद्म पपात ।।

(गंगा.कथारम्भः ६५)

" भक्त्या नमस्कृत्य महीपकन्या, यविन्मुनेराशिषयामयाचे ।
प्रत्येतुमेनां सुधियो मुनीशः, स्नेहेन गेहे सा शशास तावत ।।

(गंगा.प्रस्थानम् ४८)

शान्तरस का उदाहरण

" तेजस्वितद्वीक्ष्य मुखारबिन्दं प्रभांशुजलं विकिरन्तमग्रे।
देवा विमुह्यन्ति सुरालयेषु,कामर्त्य लोकेषु कथा नराणाम् ।।

(गंगा.कथारम्भः ३५)

" त्रिलोचनस्त्रीणि विलोचनानि गतण्वरस्तानि निमील्य सम्यक् ।
ध्यानस्थितश्चिन्तयति प्रशान्तः सर्वोदयं लोकहितं प्रश्नस्यम् ।।

(गंगा.कथारम्भः ३६)

" रूद्राक्षमालाः परिधाम देहे,स्वीकृत्य शूलं डमरूं पिनाकम्
दृढ़ासने शान्त विरक्त चिन्तः, आसीन आसीत् भगवान् महेशः ।।

(गंगा.कथारम्भः ४१)

" पुनः यदा सा पुरतश्चचाल,श्री याज्ञवल्क्याश्रममाजागाम ।

शान्तिप्रदं तं तपसा प्रपूतं,आलोक्य गंगा मनसाभ्यनन्दत् ।।

(गंगा.प्रस्थानम् ४५)

समीक्षा

गंगा सागरीयम् विष्णुदत्त शुक्ल प्रणीत एक संस्कृत की आधुनिक अद्यतन कृति है। यह वस्तुतः एक रसात्मक महाकाव्य है।

नायक नायिका की समासोक्ति प्रस्तुति के साथ ही दौत्य कार्य का भी काव्य में समावेश हुआ है। गंगा को नायिका समुद्र को नायक तथा मेघ को दूत बनाकर प्रस्तुत किया गया है। गंगा और सागर, दूत के माध्यम से एक दूसरे के गुण सौन्दर्य का श्रवण करते है और उसमें पारस्पिरिक आकर्षण उत्पन्न होता है।

मिलन की आतुरता में वियोग की वेदना भी नायक व नायिका को पीड़ित कर रही है। यही वेदना यदि रचना में पूर्व राग और विप्रल्म्भ श्रंगार की स्थापना का कारण बनती हैं अतो काव्य में रस श्रंगार के भी दर्शन होते है।

समासतः कथावस्तु,भाषाशैली,रीति,छन्द,अलंकार योजना प्रकृतिक चित्रण,रसनिष्पत्ति, सामाजिक परिष्कार,समाज में वैचारिक क्रान्ति की आवश्यकता,परिश्रम में महत्व और अन्त में नायक नायिका का सुखद मिलन काव्य को भव्यता प्रदान करते है।

'गंगा सागरीयम्' पं. विष्णुदत्त शुक्ल द्वारा प्रणीत काव्य कृति काव्यशास्त्रीय अनेक विशेषताओं के कारण वस्तुतः स्तुत्य और अभिनन्दनीय है। गंगा और सागर को सुकवि शुक्ल ने मानवीकृत कर सचेतन रूप में समासोक्ति के अध्ययन से नायिका-नायक रूप में निरूपित किया हैं- यही इनकी मौलिक काव्य-उद्भावना है,जिसकी अद्भुत रसनिष्पत्ति से इस काव्य के सहृदय श्रोता-पाठक-चमत्कृत और आनन्दित हो जाते है। यही इस काव्य कृति और कृतिकार की महती सारस्वत सफलता है।

लोक जीवन पर गंगा का प्रभाव

प्रत्यूषकालात् दिवसान्त यावत्,आवालवृद्धाः पुरूषाः स्त्रियश्च ।
सर्वे श्रमं मत्सरतां विहाय,कुर्वन्ति कर्तव्य सुखानुरोधात् ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३२)

पापमोचिनी मातेश्वरी गंगा के अवतरण में नगाधिराज हिमालय के प्रसंग में कृषक देवताओं का सजीव चित्रण करता हुआ कवि इस प्रकार भाव प्रकट करता है कि भारत के भाग्य विधाता मातृभूमि से स्नेह करने वाले कृषक जन प्रातःकाल से लेकर सायं पर्यन्त बच्चे,बूढ़े,स्त्रियायें सभी आलस को छोड़कर बड़े ही सुखी होते हुये बड़े मनोयोग से श्रम करते हुये कर्तव्य का पालन कर रहें।

दुहन्तिगाः गोपजनः प्रभाते,पिबन्ति गोधूम मुषा गृहिण्यः ।
प्रभातकालात् कृषिकार्यरक्ताः, क्षेत्राणि गच्छन्ति कृषीवलाश्च ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३३)

पवित्र भूमि के ब्रज भूमि के गोपजन प्रातःकाल होते ही गौ को दुहने लगते है। गृहणियों चावलों को रसपान करने लगती है, कृषक जन प्रातःकाल होते ही खेतों की ओर प्रस्थान करने लगते हैं।

क्लान्ताः यदा घोर परिश्रमेण, गतेद्विमामें कृषिकाः भवन्ति ।
प्रोत्यातदा पिष्टक वारिणी च,नीत्वा गृहिण्यः ददतेऽशनाय ।।
(गंगा.उद्योगप्रकरणम् ३४)

जब कठिन परिश्रम करके कृषक थक जाते है। तो सायंकाल धर लौट कर धर्मपत्नियां बडे प्रेम से भोजन के लिये रोटी पानी प्रदान करती है।

तान्येव भुक्त्वा परितोषबन्तः,क्षणं विरम्येतिह विश्रमाय।
सन्नीयपश्चात् नृष युग्मिकाः स्वाः,क्षेत्रेषुकार्य पुनरालभन्ते ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३५)

भोजन कर लेने के उपरान्त सन्तोषी कृषक जन क्षण भर विश्राम करके

लोक जीवन पर गंगा का प्रभाव

प्रत्यूषकालात् दिवसान्त यावत्,आवालवृद्धाः पुरूषाः स्त्रियश्च ।
सर्वे श्रमं मत्सरतां विहाय,कुर्वन्ति कर्तव्य सुखानुरोधात् ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३२)

पापमोचिनी मातेश्वरी गंगा के अवतरण में नगाधिराज हिमालय के प्रसंग में कृषक देवताओं का सजीव चित्रण करता हुआ कवि इस प्रकार भाव प्रकट करता है कि भारत के भाग्य विधाता मातृभूमि से स्नेह करने वाले कृषक जन प्रातःकाल से लेकर सायं पर्यन्त बच्चे,बूढ़े,स्त्रियायें सभी आलस को छोड़कर बड़े ही सुखी होते हुये बड़े मनोयोग से श्रम करते हुये कर्तव्य का पालन कर रहें।

दुहन्तिगाः गोपजनः प्रभाते,पिबन्ति गोधूम मुषा गृहिण्यः ।
प्रभातकालात् कृषिकार्यरक्ताः, क्षेत्राणि गच्छन्ति कृषीवलाश्च ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३३)

पवित्र भूमि के ब्रज भूमि के गोपजन प्रातःकाल होते ही गौ को दुहने लगते है। गृहणियों चावलों को रसपान करने लगती है, कृषक जन प्रातःकाल होते ही खेतों की ओर प्रस्थान करने लगते हैं।

क्लान्ताः यदा घोर परिश्रमेण, गतेद्विमामें कृषिकाः भवन्ति ।
प्रोत्यातद्म पिष्टक वारिणी च,नीत्वा गृहिण्यः ददतेऽशनाय ।।
(गंगा.उद्योगप्रकरणम् ३४)

जब कठिन परिश्रम करके कृषक थक जाते है। तो सायंकाल धर लौट कर धर्मपत्नियां बडे प्रेम से भोजन के लिये रोटी पानी प्रदान करती है।

तान्येव भुक्त्वा परितोषबन्तः,क्षणं विरम्येतिह विश्रमाय।
सन्नीयपश्चात् नृष युग्मिकाः स्वाः,क्षेत्रेषुकार्य पुनरालभन्ते ।।
(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३५)

भोजन कर लेने के उपरान्त सन्तोषी कृषक जन क्षण भर विश्राम करके

पुनः हल बैल लेकर खेतों पर जाकर पुनः कृषि कार्य में संलग्न हो जाते हैं।

एवं समस्ते दिवस यथेष्टं,कुर्वन्तिकार्य सकलाः सुखेन ।
गोधूलि काले तु निवृत्तकायमाः,हर्षान्वितास्ते स्वग्रहाणियानित ।।

(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३६)

पवित्र पापनाशिनी गंगा के किनारे वृषक जन दिनभर मनोयोग से कार्य करते हुये अपने-अपने धरो को सायंकाल बड़े प्रसन्न मन से लौटते हैं।

दिनावसाने पुनरित्थमेव, गाश्चारयित्वा सुखिगोपवालाः ।
गाननि चिन्ता रहिता गृणन्तः, आयान्ति नीत्वा निज गोकुलानि ।।

(गंगा.उद्योग प्रकरणम् ३७)

गंगा तीर पर रहने वाले कृषक जन दिन के समाप्त होने पर गौओं को चराकर बड़े सुखपूर्वक गोपजन चिन्तारहित होकर सभी प्रकार की चिन्ताओं का परित्याग करते हुये अपने-२ गोकुलों की ओर लौट आते हैं।

गृहेषु वत्साः किल मातरश्च,सोत्कण्ठया गास्तनयांश्च दृष्टुम् ।
चिरं प्रतीक्षन्त इति क्रमेण,इवे चातकः स्वाति जलं यथैव ।।

(उद्योग प्रकरणम् ३८)

धरों पर गौओं के बछड़े अपनी-अपनी माताओं को देखने के लिये वैसे ही उत्कण्ठा के साथ प्रतीक्षा करते है,जैसे आकाश में चातक स्वाति नक्षत्र के जल की प्रतीक्षा करते है।

सर्वान् समाश्वास्य कुतुन्विनः स्वान्, शिशून् समादाय पुनः सयत्नम् ।
नानाकथामिः परितोषयन्त्यः, स्वपन्ति रात्रौ सहतैः जनन्यः ।।

(गंगा.उद्योगप्रकरणम् ३६)

गंगा के किनारे रहने वाले कुटुम्वी जनों का वर्णन करता हुआ कवि लिखता है कि सायंकाल होने पर सभी भोले-भोले किसान सभी पारिवारिक जनों को सुख के साथ आश्वासन देते हुये नाना प्रकार की कथाओं से बच्चों को सन्तोष प्रदान करते हैं और बच्चे बड़े स्नेह पूर्वक कथाओं के सुन लेने के उपरान्त आनन्दपूर्वक

अपनी माताओं के साथ सोते हैं।

वस्तुतः कवि ने लोकहित और लोकरंजन के लिये जो लोकसाहित्य का सरस,सरल प्रांजुल,मंजुल संस्कृत भाषा में गंगा अवतरण में जो भाव व्यक्त किये है वे सहृदय जन के लिये अनुकरणीय पठनीय एवं आलाहृदनीय हैं ऐसे यशोपलब्ध स्वनाम ध ान्य कवि रत्नों को पाकर यह धरा बसुन्धरा धन्य होती है। अजर अमर रहने वाले यह कवि सदा सर्वदा के लिये प्रेरणा दायक और पथप्रदर्शक बन जाते हैं हमें सदैव ऐसे वरदा शारदा के वरद पुत्र का यशोगान करना चाहिये । किसी ने ठीक ही कहा है-

मनरमा रमणीय रमणीयता मिल गयी यदि विधि योग से ।

पर जिसे न मिली कविता सुधा, सरिकता सिकता सम है उसे।।

गंगा सागरीयम् का सन्देश-

गंगा सागरीयम् एक साहित्य साधक स्वाधीनता सेनानी की रचना होने के कारण इसमें मानव की स्वातन्त्र चेतना को उद्भूत करने का श्लाधनीय प्रयास हुआ है। इस काव्य ग्रन्थ के अद्योपान्त अनुशीलन से हमें अपने स्वराज्य के प्रति अनुराग तथा पराधीनता के प्रति वितृष्णा अनुभव होती हैं और राष्ट्रीय स्वाधीनता को अक्षुण्ण रखने का अनुपम सन्देश इस काव्य से प्राप्त होता है।

गंगा सागरीयम् गम्भीर अध्ययन करने से श्रम की महत्ता एवं स्वावलम्बन की भावना भी जाग्रत होती है। इस काव्य का यह शुभ सन्देश लोकजीवन में सर्वत्र प्रसारित होता है कि मनुष्य को समाज में समृद्धि अर्जित करने के लिये और राष्ट्रीय गौरव को अक्षुण्ण रखने के लिये सतत श्रम की ही साधना करनी चाहिये। गंगासागरीयम के रचयिता का परिश्रम पूर्ण कार्य करने का जो सन्देश दिया गया है वह राष्ट्रीय विकास के लिये परमावश्यक है। यथा-

" श्रमेणैव सिध्यन्ति कार्माणि लोके, श्रमेणैव लोकोत्तरं चापिलभ्यम् ।

श्रमेणैव चोत्कर्ष तो यान्ति लोकाः, श्रमं साधयध्वं श्रमं साधयध्वम् ।।

(गंगा.बाल लीला २८)

गंगासागरीयम के रचयिता का ये भी एक सुखद सन्देश है कि मनुष्यों को अपने समस्त वैर भाव को मिटाकर,सफलता प्राप्त करने के लिये प्रेमभाव से परस्पर रागद्वेष भूलकर अपने अपने कार्यो में लग जाना चाहिये। वस्तुतः लक्ष्य प्राप्ति के लिये सभी वाधाओं को दूर करने का प्रयास अहर्निश करना चाहिये क्योंकि विभिन्न भौतिक आकर्षक साधक के प्रयास को लक्ष्य भ्रष्ट कर देते है अतः लोगों को अन्य आकर्षणों से विमुख होकर लक्ष्याभिमुख होकर रहना चाहिये यथा-

" प्रभाविता तत् कथयानया सा, विचिन्तयामास पुनः यति स्वम् ।
आकर्षणान्यत्र बहूनि तस्मात्, विहाय लक्ष्याभिमुखा वभूव ।।

(प्रस्थानम् ४४)

इस प्रकार गंगा सागर के रचयिता पं. विष्णु दत्त शुक्ल ने राष्ट्रीय स्वतन्त्र चेतना, श्रम की महत्ता,लौकिक समृद्धि हेतु निरन्तर उद्योगशील रहना और लक्ष्यप्राप्ति के लिये लौकिक वाधाओं को दूर करने के लिये परस्पर प्रेम भावना बढ़ाने का व्यवहारिक और अनुपम सन्देश दिया गया है।

नवम

अध्याय

संस्कृत में गंगा विषयक अन्य प्रकीर्ण साहित्य का अध्ययन

नवम् अध्याय

संस्कृत में गंगा विषयक अन्य प्रकीण साहित्य का अध्ययन–

संस्कृत वाङ्.मय में गंगा विषयक अन्य प्रकीर्ण साहित्य में भी गंगा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण सन्दर्भ मिलते है, जिनसे गंगा का नैसर्गिक स्वरूप सांस्कृतिक गौरव एवं धार्मिक महत्व अभिव्यक्त हुआ है। ऐसे प्रकीर्ण साहित्य में लोक कथायें, नीति कथायें, आख्यायिकायें, चम्पूकाव्य नाटक आदि उल्लेखनीय है। यहां संक्षेप में इन विविध विधाओं से सम्बन्धित ग्रन्थों का संक्षिप्त अनुशीलन किया जा रहा है। जिनमें गंगा गौरव एवं माहात्म निरूपित हुआ है।

दण्डी विरचित दशकुमार चरितम्–

महाकवि दण्डी की स्थिति काल सामान्यतया ६०० ई० के आस पास स्वीकार किया जाता है। शार्ड्गधर पद्धति में 'त्रयो दण्डि प्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुता' सूक्ति के आधार पर उनके तीन ग्रन्ध माने जाते है–

१– काव्यादर्श (अलंकार शास्त्रीय ग्रन्ध)

२– दशकुमार चरित (गद्यकाव्य)

३– अवन्तिसुन्दरी कथा (अपूर्ण गद्य काव्य)

दशकुमार चरित' तथा काव्यादर्श के आधार पर ज्ञात होता है कि दण्डी दक्षिणी भारत में विदर्भ देश के निवासी थे। 'दशकुमार चरित' में उल्लिखित कलिंग आन्ध्र देशों के अतिरिक्त 'कावेरी पत्तन' आदि नगरों एवं दक्षिण में प्रचलित सामाजिक एवं पारिवारिक प्रथाओं के वर्णन के आधार पर उनका दाक्षिणात्य होना सिद्ध होता है। 'दशकुमार चरित्र के अध्ययन से यह भी प्रतीत होता है कि दण्डी एक सम्पन्न व्यक्ति थे । जिन्होनें सभी प्रकार के सांसारिक अनुभव प्राप्त किये थे।

दण्डी महाकवि ने भी अपने दशकुमार चरित में गंगा का बड़ा ही मनोहर वर्णन किया है–

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृति भवनाम्भोरूहो नालदण्डः।

क्षोणीनौकूपदण्ड क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः।।

ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः।।

श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः।।१।।

दशकुमार चरितम्/प्रथम उच्छ्वास/१

भगवान् विष्णु को दण्ड के समाज चरण आपका कल्याण करे, जो चरण ब्रह्माण्डरूपी छत्र का दण्ड है अथवा ब्रह्मा जी की उत्पत्ति स्थान भूत कमल का नालदण्ड है। प्रथ्वीरूपी नाव का कूपदण्ड पतवार है, प्रवहमान आकाश गंगारूपी ध्वजा का केतुदण्ड है अथवा नक्षत्र समुदाय रूपी चक्र का अक्ष दण्ड है अथवा तीनों लोकों की विजय की सूचक स्तम्भ है, तथा देवों से द्वेष रखने वाले अर्थात राक्षसों के लिये यमराज के तुल्य अर्थात मृत्युरूप है।

ज्यायभाने मार्दवासमाने विसलते च बाहू,

"ईष दुत्फुल्ल लीलावत सकहलारकोरको गंगावर्तसनाभिनाभि"

दशकुमार चरितम्/ प्रथम अंक/७

क्रोध के कारण भगवान शंकर ने तृतीय नेत्र से काम को जला देने पर भय के कारण सभी चीजों ने अपना-२ आश्रम ग्रहण किया अतः धुनुष डोरी के समान कोमलता में अतुलनीय कमल तन्तुओं ने भुजाओं का, कुछ खिले हुऐ कर्णभूषण बने हुये कमलकालिका ने गंगा के भ्रमर के तुल्य नाभि का आश्रम लिया।

बाण भट्ट विरचित हर्षचरित एवं कादम्बरी-

[illegible] संस्कृत साहित्य के उन विरले कवियों में से है, जिनके जीवन के विषय में निश्चित रूप से कुछ जानकारी देने समर्थ है। वाण ने हर्ष चरित के प्रारम्भ में वि [illegible] और अपने सम्बन्ध में विवरण दिया है। कादम्बरी के प्रारम्भिक श्लोको में भी उन्होंने [illegible] म का उल्लेख किया है।

बाण [illegible]ष्ठित वात्स्यायन वंश में उत्पन्न हुये थे। इसी वंश में कुबेर नामक एक [illegible] पण्डित का जन्म हुआ। इन्ही कुबेर के चार पुत्र हुये। इनमें से पाशुपत के एक ही पुत्र हुआ अर्थपति। अर्थपति के पुत्रों में से चित्रभानु हमारे चरित नामक के पिता थे

बाण को बचपन में ही मातृ वियोग सहना पड़ा था इनकी माता का नाम राज देवी था। बाण के पिता का जब देहावसान हुआ तब बाण की अवस्था १४ वर्ष थी । माता पिता की मृत्यु हो जाने पर बाण देशाटन के लिये निकल पड़े। बाण भट्ट ने सम्राट हर्ष से भेंट की तथा व हर्ष के कृपा पात्र बन गये। बाण भट्ट के दो पुत्र थे। जिनमें से एक ने उत्तर कादम्बरी के प्रारम्भ में स्वयं उल्लेख किया है कि उसने पिता की मृत्यु के कारण अपूर्ण कादम्बरी पूर्ण की।

स्थिति काल-

सभी प्रमाणों से स्पष्ट है ८०० ई० तक वाण को ख्याति सब ओर फैल चुकी थी। अतः उनका स्थिति-काल इससे पर्याप्त समय पूर्व सम्राट हर्षवर्धन के काल सप्तम शती ईस्वी के पूर्वार्ध सुनिश्चित होता है-

रचनायें-

बाण भट्ट की कुछ अन्य रचनायें भी बताई जाती है जो निम्न लिखित है-

१. कादम्बरी	२. हर्षचरितम	३. चण्डी शतक
४. पार्वतीपरिणय	५. मुकुटताडित	६. शारदाचनद्रिका

कादम्बरी में बाणभट्ट ने पतित् पावनी गंगा का वर्णन यत्र-तत्र प्रस्तुत किया है।

यहाँ पर राजा शुद्रक की प्रशंसा करते हुये कवि कहता है- कि जो कर कमल में दिखाई देते हुये शंख और चक्र के (आयुध रूप) चिन्ह वाले विष्णु के समान (अपने) कर कमलों में दिखाई देते हुये (सामुद्रिक शारस्त्रोक्त) शंख-चक्र (की हस्त रेखाओं में) के चिन्ह वाला था और-

हर इवे जितमन्मथः, गुह इवाप्रतिहतशक्ति, कमलयोनिखि, विमानी कृतराजहंस मण्डलः, जलधिरिव लक्ष्मीप्रसूतिः गंगा प्रवाह इव भगीरथ पथ प्रवृत्तः, रविखिप्रतिदिवसोप जायमानोदयः,"

कादम्बरी कथामुखम्-शूद्रक्र-वर्णनम् पृष्ठ-३३

कामदेव को जीतने वाले शिव की भांति जिनके काम जिसने

काम-भावना को जीत लिया था, जो अनिरूद्ध शक्ति (नामक अस्त्र वाले) कार्तिकेय की भांति अप्रतिहत शक्ति (बल) बाला था। राजहंस पक्षियां के समूह को बाहन बनाने वाले ब्रहमा के समान उसने श्रेष्ठ राजाओं के समूह को अपने अत्याधिक तेज, बल के द्वारा मान रहित बना दिया था। जो समुद्र की भांति लक्ष्मी का उत्पत्ति स्थान था, जो भागीरथ के रथ-चक्र द्वारा चिन्हित मार्ग पर बहने वाली गंगा के प्रवाह के समान भागीरथ के सदाचार मार्ग पर चलने वाला था, प्रतिदिन उगने वाले सूर्य की भांति जिसकी धनादिकी प्रतिदिन उन्नति होती थी।

राजा की प्रशंसा करते हुये संस्कृत मनीषी कवि बाणभट्ट कहते है कि-

"एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदलसंपुटभिदि किंचिन्मुक्त-पाटलिमम्न भगवति सहस्त्रमरीचिमालिनिः राजानमास्थानमण्डपगतमड्ंगनाजनविरूद्धेन वाम पार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण संनिहित विषघरवे चन्दनलता भीषण रमणीयाकृतिः,अविरलय लयजा नुलेपनधवलित स्तनटोन्मज्जदैरावत कुम्भमण्ऽलेव मन्दाकिनी",

कादम्बरी कथामुखम्-शूद्रकवर्णनम् पृष्ठ ६२

एक बार नवीन कमल-पंखड़ियों के सम्पुट को विकसित करने वाले तथा अपनी लालिमा का थोड़ा परित्याग करते हुये भगवान सहस्त्ररश्मि अर्थात सूर्य जब तक अधिक ऊँचे उचित नही हुये थे, तभी एक प्रतिहारी जो कि स्त्री जनों के स्वभाव के विपरीत वॉई ओर बगल में लटकती हुई तलवार के कारण निकट स्थिति सर्पों वाली चन्दन लता के समान भयंकर एवं सुन्दर आकृति वाली मानों स्नान करते हुये ऐरावत हाथी के कुम्भस्थल वाली आकाश गंगा के समान थी।

अनड.वारगशिरोनक्षत्रमालायमानेन रोमराजित तालवालकेन रश नादाम्ना परिगत जघनाम् अतिस्थूलमुक्त फलघटिटेन शुचिना हारेण गंगा स्त्रोतसेव कालिन्दीशड.कया कृत कण्ठगहाम्,.

कादम्बरी कथामुखम् चाण्डालकन्यावर्णनम् पृष्ठ - ८७

कवि चाण्डाल कन्या की तुलना गंगा से करते हुये कहते है कि-

जो कामदेव रूपी हाथी मस्तक की नक्षत्र-माला जैसी प्रतीत होती

हुई तथा रोम-पक्ति रूपी लता के मालवाल जैसी मेखला की लड़ियों से घिरे हुये जघन-भाग वाली थी, अत्यन्त मोटे-मोटे मोतियों से बनाये गये उज्जवल हार गले में पहने होने के कारण जो मानों यमुना होने की शंका से गगां की धारा द्वारा गले मिली जाती हुई प्रतीत होती थी।"

" ते च तस्मिन्नति वाहरातिवाह्य निशामाल्यनीडेषु प्रतिदिनमुत्थामोत्याया हारान्वेषणाय नर्भास विरचित पड्क्तयः मदकलहलधरहलमुखोन्क्षेपविकीर्णबहु स्त्रोतसमम्बर तले कलिन्दकन्यामिव दर्शयन्तः, सुरमजोन्मूलित विगलदाकाशगंगा। कमलिनी शंकामुत्पादयन्तः,"

कादम्बरी कथामुखम् शाल्मलीवृक्षवर्णनम् पृष्ठ सं. १६५

बाणभट्ट शाल्मली वृक्ष का वर्णन करते हुये कहते है कि- वे शुक-पक्षी उस वृक्ष पर अपने घोसलों में रात बिता-विताकर, प्रतिदिन उठ-उठकर आहार खोजने के लिये आकाश में पंक्ति बनाकर घूमा करते थे। उस समय वे ऐसा द्वश्य बनाते थे, मानों मद से सुन्दर बलराम के हल की नोंक के ऊपर फेंकने के कारण यमुना आकाश में अनेक धाराओं में बिखर गयी हो। ऐसी शंका उत्पन्न करते थे मानों इन्द्र के हाथी ऐरावत ने आकाश गंगा की कमलिनियों को उखाड़कर फेंक दिया हों।

" एकदा तु प्रभात संध्या रागलोहिते गगनतले, कमलिनीय धुरक्त पक्षपुटे बृद्धहंस इव मन्दाकिनी पुलिनादपर जलनिधिटमवतरति चन्द्रमसि, परिणतरड्कुरोम पाण्डुनि ब्रजति विशालतामाशाचक्रवाले"

कादम्बरी कथामुखम्-प्रभात वर्णनम् पृष्ठ-२०२

महाकवि बाणभट्ट शुक-जन्म-वर्णन के पश्चात् प्रभात काल का वर्णन करते हुये प्रातकालीन सन्ध्या की तुलना आकाश गंगा से इस प्रकार कर रहा है- कि एक दिन अचानक ही उस महावन में शिकार के कोलाहल की ध्वनि उठी। उस समय आकाश प्रातःकालीन सध्या की लालिमा से रंगा हुआ था। कमलिनी के मधु से लाल पंखो वाले बूढे हंस की भांति चन्द्रमा आकाशगंगा के तट से पश्चिमी समुद्र के तट पर उतर रहा था। बूढ़े रड्कु नामक मृग के रोओं के समान हल्का पीला दिशामण्डल विस्तार को प्राप्त हो रहा था।

रविरथ इव द्रढ़नियमितान्क्षचक्रः, सुराजेव निगूढमन्त्रसाधनक्षपितविग्रहः,

जलनिधिरिव कराल शंख मण्डलावर्तनाभिगर्तः, भगीरथ इव द्रष्टगंगावतारः,"

कादम्बरी कथामुखम्-हारीत वर्णनम् पृष्ठ सं०- २८६

महाकवि वाण भट्ट शुकनास की दशा का वर्णन करने के पश्चात् हारीत की तुलना गंगा से करते हुये कहते है कि-

दृढ़ता से इन्द्रियों के समूह को वश में किये हुये था, गुप्त मन्त्रणा तथा सेना के बल पर युद्ध की सम्भावना को समाप्त कर देने वाले अच्छे राजा की भांति वह गुप्तमन्त्र साधना से शरीर को क्षीण कर चुका था, विशाल शंख के मण्डलाकार घुमाव जैसा था, भागीरथ की भांति उसने गंगा का अवतार देख लिया था।

"अधोमुखचन्द्रकलाकाराभ्यामवलम्बितवलिशिथिलाभ्याभ्रलताभ्यामवष्टभ्य -मानद्रष्टिम्, अनवर तमन्त्राभ्यासविवृताधरपुटतया निष्पटद्भिरति शुचिभिः सत्यपरोहैरिव स्वच्छेन्द्रियवृत्तिभिरिव विद्यागुणैरिव करूणारसप्रवाहैरिव दशनमयूखैर्घवालित पुरोभागम् उद्वमदमलगंगाप्रवाहमिव जह्नुम्,"

कादम्बरी कथामुखम् जाबालिवर्णनम् पृष्ठ-३२६

कवि जावालि ऋषि का वर्णन करते हुये कहते हैं कि-उलटी चन्द्रकला के समान आकार वाली तथा झुर्रियाँ पड़ जाने से लटकती हुई भौहों से उनकी दृष्टि रूक रही थी, निरन्तर मन्त्र का अभ्यास करने से ओष्ठों के खुले रहने के कारण दांतो की निकलती हुई अति उज्जवल किरणों से, जो सत्य के अड्.कुरो सी इन्द्रियों की स्वच्छ वृत्तियों सी तथा करूणारस के प्रवाह सी प्रतीत होती थी, आगे के भाग को उज्जवल बना दिया था मानो वे गंगा के निर्मल प्रवाह को उगलते हुये जहनुऋषि हों।

"उपरचितभस्मत्रिपुरूड्रकेण तिर्यक्प्रवृन्तत्रि पथगास्त्रोतस्त्रयेण हिमगिरिशिलातलेनेव ललाटफलकेनोपेतम्",.......

कादम्बरी कथामुखम्-जाबालि वर्णनम् ३२३

महाकवि जाबालि ऋषि की उपमा गंगा से इस प्रकार करते है कि भस्म का त्रिपुण्ड्र लगाकर उनका भालपट्ट ऐसा प्रतीत होता था मानो तिरछे बहते गंगा के तीन स्त्रोतों से युक्त हिमालय का शिलातल हों।

"अनिलवश जनित तनु तरंगभंग मुत्लवमानमृणालमिव मन्दाकिनी प्रवाहम कलुषमगंमुद्वहन्तम्,"

कादम्बरी कथामुखम् जाबालिवर्णनम्-पृष्ठ संख्या ३२८

कवि कहता हैं कि मानो वह गंगा का प्रवाह है जिसमें वायु के कारण छोटे तरंग खण्ड उत्पन्न हो गये है और उनके ऊपर कमलनाल तैर रहा है।

" आसन्नवर्तिना मन्दाकिनी सलिलपूर्णेन त्रिदण्डोपविष्टेन स्फाटिक कमण्डलुना विकचपुण्डरीक राशि मिव राजहंसेनोपशोभमानम्,"

कादम्बरी कथामुखम् जाबालि वर्णनम् पृष्ठ सं० ३३१

जाबालि ऋषि पास में स्थित गंगाजल से भरे हुये तिपाई पर रखे हुये विल्लौरी कमण्डलु से इस प्रकार सुशोभित हो रहे थे, जैसे विकसित कमलसमूह राजहंस से।

"अहो! महासत्तवेमं जरा यास्य प्रलयरविरश्मिंनिकरदुर्निरीक्ष्ये रजनिकरकिरणपाण्डुशिरोरुहे जटाभारे फेनपुज्जधवला गंगे व पशुपतेः क्षीराहुतिरिव शिखाकलापे विभावसोर्निपतन्ती न भीता।"

कादम्बरी कथामुखम् जाबालि वर्णनम् पृष्ठसं०-३४३

ऋषि की महन्तता पर प्रकाश डालते हुये कवि कहता है कि अहो, यह वृद्धावस्था भी बड़े साहस वाली है जो इस महात्मा के प्रलयकालीन सूर्य के किरण-समूह के साथ कठिनाई से देखे जाने योग्य तथा चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत केशो वाले जटाभार पर, शिव की जटाओं पर झागों के समूह से उज्जवल गंगा के समान तथा अग्नि के ज्वाल समूह पर दूध की आहूति के समान गिरती डरी नहीं।

"चन्द्रभरणभृतस्तारकाकपालशकलालंकृतादम्बरतलात् त्रयम्बकोन्तमागंगदिव गगां सागरानापूरयन्ती हंसधवला धरणमामपतज्ज्योत्स्ना।"

कादम्बरी कथामुखम् रात्रिवर्णनम् पृ० ३७४

रात्रि का वर्णन करते हुये महाकवि वाणभट्ट कहते है कि चन्द्रमा को आभूषण के रूप ने धारण करने नक्षत्रों के समान चमकीले कपालखण्डों से सुशोभित शिवजी

के सिर से समुद्र को भरती हुई हंसो से श्वेत गंगा जिस प्रकार धरती पर गिरी थी, उसी प्रकार चन्द्रमा रूपी आभूषण को धारण करने वाले खण्डों के समान नक्षत्रों से सुशोभित आकाश से सागर को भरती हुई हंस के समान उज्जवल चन्द्रिका धरणी पर छिटकने लगी।

धनपाल विरचित तिलक मञ्जरी-

बांण के परवर्ती गद्यकाव्यकार धनपाल ने १० शताब्दी ई० तिलकमञ्जरी नाम की प्रेम गाथा गद्यकाव्य में प्रस्तुत की। जिसकी अनुच्छाया कादम्बरी की द्रष्टिगत होती हैं कादम्बरी की तुलना में इस गद्य काव्य में तिलक मञ्जरी और समरकेतु की प्रणय कथा वर्णित हैं।

तिलकमञ्जरी के प्रारम्भ में धनपाल ने अपने पूर्ववर्ती कथाकार श्री पालिकृत 'तरंगवती कथा' को आदर्श मान कर गंगा के उपमान में उल्लिखित किया है।

डा० कपिलदेव द्विवेदी ने तिलकमञ्जरी का रचनाकाल १६वीं शताब्दी निरूपित किया हैं। द्रष्दव्य संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास इलाहाबाद, १९९९ पृ० २३२। जिससे श्री पालिकृत तंरगवतीकथा सम्भवतः शताब्दी में विरचित हो चुकी होगी जिससे प्रभावित होकर धनपाल ने गंगा का तिलकमञ्जरी में इस प्रकार स्मरण किया है।

" पुण्या पुनाति गंगेव गां तरंगवती कथा"।

डा0 रामजी उपाध्याय विरचित सत्य हरिश्चन्द्रोदम् -

कविपरिचय- लेखक श्री राम जी उपाध्याय की जन्मभूमि उत्तर प्रदेश के गंगा-सरयू के पास बलिया मण्डल के अर्न्तगत सरयू के पास नदमलेजीति ग्राम में थी। वाल्यावस्था की शिक्षा इन्होंने मण्डल विद्यालय में ग्रहण की तत्पश्चात् वाराणसी के महामहोपाध्याय श्री लक्ष्मण शास्त्री के चरण चञ्चरीक में संस्कृत महावृक्ष के प्रथम कुसमों की रचना की। तदोपरान्त प्रयाग विश्वविद्यालय में डा० बाबूराम सक्सेना महोदय के श्री चरणों में एम०ए०, डी०फिल, उपाधि प्रथम स्थान के साथ अर्जित की। लेखक के प्रायः दश ग्रन्थों को पुरस्कृत किया गया। उत्तर प्रदेश की संस्कृत अकादमी ने २५०० रू० विशिष्ट पुरूस्कार के द्वारा

१९८७ ई० में इन्हें सम्मानित किया।

उपाध्याय जी १९४७-१९८० वर्षों तक परम रमणीय मध्य प्रदेश के सागर विश्वविद्यालय में संस्कृत प्राचार्य रहे। अध्यापन काल में १९६३ शताब्दी में सागर विश्वविद्यालय में संस्कृत प्राचार्य रहे। अध्यापन काल में १९६३ शताब्दी में सागर विश्वविद्यालय से डि०लिट्० उपाधि हेतु प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका इस विषय पर शोध प्रबन्ध सुनिश्चित किया। १९८१ शताब्दी में हिन्दू विश्वविद्यालय से डी०लिट् की उपाधि से अलंकृत हुये।

रचनायें-

रामजी उपाध्याय ने संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी तीनों भाषाओं में प्रमुख रचनाओं का ग्रन्थन किया, जो अधोलिखित हैं-

१. Sanskrit and Prakrit Mahakaryas-D Phil Thesis.

२. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, डी०लिट् शोध प्रबन्ध।

३. मध्यकालीन संस्कृत नाटक उ०प्र० शासन के द्वारा पुरस्कृत
म०प्र० " " " " " "

४. महाकविः कालिदासः उ०प्र० शासन के द्वारा पुरस्कृत

५. भारतस्य सांस्कृतिक-निधिः उ०प्र० शासन के द्वारा पुरस्कृत

६. द्वा सुपर्णा (उपन्यास) उ०प्र० शासन के द्वारा पुरस्कृत

७. दशरुपक - तत्वदर्शनम्

८. दशरुपकंनान्दी टीका-सहितम्

९. पूर्वपथ हिन्दी नाटकम्

१०. महाभारतीय-संस्कृति कोशः

११. संस्कृत के महाकवि और काव्य

१२. धम्मपदं सम्पादित

१३. मनुस्मृतिनवनीतम् सम्पादित

१४. सत्यहरिश्चन्द्रोदयम् (उपन्यास)

१५. कैकेयी विजयमम् (नाटक)

१६. अशोक विजयम् (नाटक)

त्रियद्वर्षाणि स सागरिकेति त्रैमासिकी संस्कृत शोध पत्रिकां सम्पादयति ज्ञान-विज्ञानकार्य जातविभावित-वैदुषीक सन् १९१८ ई० वर्षे पुण्यपत्तने अखिलभारतीय प्राच्य परिषदः (All India Oriental Conference) साहित्य- विभागस्याध्यक्षपदाय निर्वाचितः। १९८१ ई० वर्षतः स वाराणस्यां 'भारतीय-संस्कृति संस्थानम्' इति नामधेया संस्था संचालयति।

गंगा-वर्णनम्-

कालान्तरेणानुपमं हरिश्चन्द्रो गंगा-सरयू-संगम प्रदेशेऽतिथी स्वगेहभूतं, मनः प्रहलादजननं दृष्टिकान्तं, स्फुटितकमलामोदकर्षाय, सुखशाद्वलं मधुरारावै र्विहमैर्विपुलं नादितम्, उत्कचपुष्पवृक्षैः समावृतं, बृह्मलोकप्रतीकाशं पावनं पुण्याख्यं नामाश्रमपदं ददर्श। तत्र भावितात्मनां कपोतवृत्तीनां परंतपस्तपतां, पर्णसंस्कतराणा-मृषीणां संवासोऽवर्तिष्ट। प्रदेशेऽस्मिन् ब्रह्ममनः सम्भवान्मानससररसः स्रुता सरयूः स्वात्मभूत जाहनवी संगम- संक्षोभघर्घरा हरिश्चन्द्रं चिरमरमयत्। आश्रमोपासका उपशमशीलाः परोक्षदर्शका मुनिजना ध्यानयोगेन तस्य भावित पोविशेषं पश्यन्तः स्वात्मना सुप्रस नास्तं सोत्साहमभ्यनन्दन्। आतिथेयास्तेऽर्घेण मुनिजनोचितमूलफलकन्दाशनैश्चं तं यथायोग मानुर्चुराशीर्वचोभिश्च तस्यार्थसिद्धिं प्रशशंसुः। कतिपयदिवसान् यावन् महामुनीनां तपोविध ानान्यादर्शीकृत्याभिरुचिरे पर्णशाला-प्रचिते पुण्या-श्रमे साधु विश्रम्य च प्रागवारितेन गंगा पुलिन विहारिपथेन स सिन्धुं प्रति प्रापद्यत।

अमृतोपमतोयाभिश्शिवाभिस्सरिद्भिरुपसंस्कृता गंगा दर्शन मात्रेण सर्वार्थ साधिनी शोभते। शक्तिरेव सा, गमयति भगवत्पदमतः स्वनाम सार्थयन्ती दृष्टा पापं हरति, स्पृष्टा स्वर्ग नयति, अवगाहिता च मोक्षदा भवति। जाग्रद्, अश्नन् वदन्, श्वसन् मो गंगा सततं स्मरति स कर्मबन्धनान्मुच्यते। एवमेव गंगायाः सनातन लोकपावन प्रसगं मनसि निधाय स सततं तस्याः साक्षाद् दर्शनेन स्मरणेन चात्मसंस्कारं सम्यग् व्यधात्। तेन पूर्वमेव श्रुतमासीत्-गंगोपकण्ठं तपोवनं

सिद्धिक्षेत्र मेवेति। तस्मिन् सिद्धि क्षेत्रे निरत्तरं विचरन् स गंगाया नैसर्गिक प्रभावेण मनोरथसिद्धये आत्मानं संसाधयामास।

सत्यहरिश्चन्द्रोदयम् गंगा वर्णनम् पृष्ठ ४-५

जब महामुनि ने पुत्र प्राप्ति का पूरा विश्वास दिया दिया तब हरिश्चन्द्र जनपद के प्रधानों को प्रजापालन का कार्यभार सौंपकर पूर्व दिशा में गंगासागर की ओर सरयू के बालू पर बने ऊबड़-खाबड़ पथ पर पैदल ही चल पड़े। कुछ समय पश्चात् मार्ग में गंगा-सरयू संगम प्रदेश में हरिश्चन्द्र ने परम पवित्र पुण्य नामक आश्रम देखा, जो अतिथियों के लिये अपना निजी घर लगता था, मन को आह्लादित कर देता था, नयनाभिराम था, खिले हुये कमलों की गन्ध से कषाय था, वहाँ घास सुख स्पर्श प्रदान करती थी, मधुर कलख करने वाले पक्षियों के द्वारा अतिशय प्रतिध्वनित था, विकसित पुष्प-मण्डित वृक्षों से परिच्छन्न था, मानो दूसरा ब्रह्मलोक ही था। वहां पर आत्म ज्ञानी कपोतवृत्ति से जीवन बिताने वाले उत्तम कोटि के तप में लगे हुये पत्तों का ही आसन डासन प्रयोग करने वाले ऋषियों की बस्ती थी। उस प्रदेश में ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुये मानस सरोवर से जन्मी सरयु अपनी ही आत्मा -रुप गंगा के संगम के अवसर पर क्षोभ के कारण कण्ठावरोध से घर्घर ध्वनि करती हुई हरिश्चन्द्र को बहुत समय तक पुलकित करती रही। आश्रम में रहने वाले शान्ति परायण भविष्यदर्शी मुनियों ने ध्यान योग से भविष्य में निष्पन्न होने वाली उनकी तपोभूमि को देखकर मन ही मन प्रसन्न होकर उत्साहपूर्वक अभिनन्दन किया। आतिथ्यकारी मुनियों ने अर्ध और मुनिजनोचित मूलफलकन्द के भोजन से उनकी यथायोग्य अर्चना की और आर्शीवादों से उनकी अभीष्ट सिद्धि की कामनायें की। कुछ दिन तक महामुनियों की तपश्चर्या के अनुशासन को आदर्श रूप में अपनाये हुये उस रमणीय पर्णशाला-प्रकल्पित पुण्याश्रम में भलीभाँति विश्राम करके हरिश्चन्द्र पूर्वनिश्चित गंगातटीय पथ से सागर की ओर चल पड़े।

अमृतोपम जल द्वारा अमरता प्रदान करने वाली सरिताओं से सज्जित गंगा दर्शन मात्र से सभी कामनाओं को पूरी करने मवाली सुशोभित है शक्ति रूपिणी वह भगवान के चरणविन्द तक प्रगमन करा देती है, अतः अपने नाम को चरितार्थ करती हुई,

दर्शन से पापों को दूर कर देती है, स्पर्शमात्र से स्वर्ग प्राप्त करा देती है और स्नान करने से मोक्षदायिनी होती है।

जागते हुये भोजन करते हुये और श्वास लेते हुये। जो गंगा का स्मरण करता है, वह कार्य बन्धन से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार गंगा के स्नातन लोकपावन प्रसंगों को मन में विचार करते हुये वे सतत उसके साक्षात् दर्शन और स्मरण से अपने को परिष्कृत करते चलते थे। उन्होनें पहले से ही सुन रखा था गंगा के समीपवर्ती तपोवन सिद्धिक्षेत्र ही है। उस सिद्धि क्षेत्र में निरन्तर विचरण करते हुये वे गंगा के नैसर्गिक प्रभाव से मनोरथ की सिद्धि के लिये अपने को योग्य बना रहे थे।

''अहोविभूतिः काश्या योगर्पण्स्य महाश्मशानस्य। गंगातटे महाश्मशान नियुक्तो हरिश्चन्द्रोऽनुक्षणं कर्तव्यपरायणतया स्वकर्मानुष्ठानेन च डोम्बराजस्यसाचिवयं प्रपेदे। 'अविमुक्तक्षेत्रेऽस्मिन् जीवनां प्राणप्रयाणोत्सवे दक्षिणकर्णे तारक ब्रह्ममंत्रं ददतो भगवतः शशिशेखरस्य कृपाकणिका भृशायते। जगज्जननीगंगायाः शाश्वतप्रातिवेशिकप्रतिष्ठानेन श्मशानस्य परं पावित्र्यं प्राभवत्।सा गंगा विष्णुपादोद्भवा देवी विश्वेश्वर शिरःस्थिता त्रिभुवनस्य पावयित्री मुनिभिर्देवैश्रोपसेव्यते। शिवश्चात्र विश्वेश्वर-लिंग प्रतीकों ज्योतिर्लिंगों ब्रह्मज्योति-दर्शनमात्रेण वितरति। गंगा-शिवयोः संवासात् परयोन्नायकमिदं श्मशान सौभाग्य फलेनास्माकं संसेव्यं वर्तते इति प्रवोदवाहिनी तस्य विचारसरणिर्नित्यं समुन्ननाम।

सत्य हरिश्चन्द्रोदय उत्तरभाग, महाश्मशान वर्णनम् अध्याय ५ पृ०३५

काशी का योगपीठ इस श्मसान का वैभव क्या ही निराला है। गंगा तट पर स्थित महाश्मशान में नियुक्त होने पर हरिश्चन्द्र प्रतक्षण अपनी कर्तव्य परायणता और कर्मोद्योग से डोम्बराज के सचिव बन गये। उनके मन में सतत आनन्ददायिनी विचार-धारा उठती रहती थी कि -

इस अविमुक्त क्षेत्र से जब जीवों का प्राण शरीर से मुक्त होता है। तो इस उत्सव के अवसर पर उनके दाहिने कान में तारकमन्त्र देते हुये चन्द्रशेखर भगवान शिव की कृपा कणिका महिमान्वित होती है। यह श्मसान परम पवित्र और लब्ध -प्रतिष्ठ इसलिये

भी है कि यह गंगा मैया का आदिकाल से ही पार्श्ववर्ती रहा है। गंगा विष्णु के चरणों से उत्पन्न हुई देवी विश्वेश्वर शिव के सिर पर प्रतिष्ठित होकर त्रिभुवन को पवित्र करती हुई मुनियों और देवताओं द्वारा पूजित है। यहाँ शिव जी विश्वेश्वर लिंग प्रतीक ज्योर्तिलिंग है और दर्शनमात्र से यह श्मसान पारमार्थिक उन्नति प्रदान करके हम सबको सौभाग्य प्राप्त कराने के कारण सबके लिये सेव्य है।

''गंगा शिवयोरौदात्यानुरूपं मनसि वचसि कार्य पुण्य पीयूष पूर्णमस्माकं समाग्रयं भवतु।''

इस उद्देश्य में गंगा ओर शिव की उदात्तता क अनुरूप मन, वचन और शरीर में पुण्यात्मक सुधा से निर्भर होगा हम सबका कल्याण।

''दाह विषयकं संवादं दूरामेव शृण्वन् कश्चित् प्रवयाश्चाण्डालतल्लजः 'अस्य शवस्य दाहो नापेक्षितः इति प्राबोधयत्। सर्पदष्टा हि न दाह्यनतेऽपि तु मध्येगंग विसृज्यन्ते यतो हि नाम सर्वौषधियोगेन गंगामृतवारिणाभिषिक्तो मृतोऽयमपहृतसर्प विषप्रभावः सुप्तं इवोत्तिष्ठेदिति चासूचयत्।''

हरिश्चन्द्रेण पुत्र शवप्रवाहः पृष्ठ ३८

दाह विषयक संवाद को दूर से ही सुनने वाले किसी बृद्ध चाण्डाल महानुभाव ने कहा-

इस शव का दाह नहीं होना चाहिये, सर्पदंश से मृत को जलाया नहीं जाता, अपितु उसे गंगा की धारा के मध्य में प्रवाहित कर दिया जाता है, क्योंकि गंगा के सुधा- मिश्रित जल स, जिसमें नानाविध औषधियों का मिश्रण होता है, अभिषिक्त होने पर मृत के सर्पविष का प्रवाह दूर हो जाता है। वह वैसे ही उठ खड़ा हो सकता है, जैसे सोया हुआ पुरुष।

''क्षत्रिमान्वयं कुलजनं विहाय नान्यः कश्चिन्मय पुत्रं गंगायां प्रवाहयेदिति''

हरिश्चन्द्रेण पुत्र शवप्रवाहः पृष्ठ३९

क्षत्रिय वंशोत्पन्न किसी कुल तिलक को छोड़कर कोई दूसरा मेरे पुत्र को गंगा में प्रवाहित नहीं करेगा।

संस्कृत की नीतिकथाओं में भी गद्य पद्यात्मक अवतरणों के अन्तर्गत गंगा का स्वरूप एवं गौरव निरूपित हुआ है। इन नीति कथात्मक ग्रन्थों में नारायण पण्डित का हितोपदेश प्रमुख है।

नारायण पण्डित विरचित हितोपदेश –

पंचतन्त्र के पश्चात् नीतिकथाओं में लोकप्रिय रचना 'हितोपदेश' ही है जिसके लेखक 'नारायण पण्डित' बंगाल के राजा धवलचन्द्र के आश्रित थे। १३७३ ई० की प्राप्त प्राचीन पाण्डुलिपि के आधार पर यह रचना १४वीं शती के पूर्व सिद्ध होती है क्योंकि उसकी ४३ कथाओं में २५ कथायें पंचतन्त्र से ली गई है। हितोपदेश के चार परिच्छेद है-

१. मित्र लाभ

२. सुहद्भेद

३. विग्रह

४. सन्धि

इसमें प्रथम दो पंचतन्त्र संग्रहीत है। पद्यों की संख्या इसमें पंचतन्त्र से अधिक है।

संस्कृत के प्रारम्भिक छात्रों में पठन-पाठन इसका ही होता है, क्योंकि इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है।

हितोपदेश में भी गंगा का वर्णन प्राप्त होता है -

सिद्धिः साध्ये सतामस्तु प्रसादात्तस्य धूर्जटेः।
जाह्नवीफेनलेखेव मन्मूर्ध्नि शशिनः कला।।

हितोपदेश मंगलाचरणम् १

"अस्ति भागीरथी तीरे पाटलीपुत्रनामधेयं नगरम्।"

हितोपदेश मित्रलाभः ६ के बाद

गंगा के तट पर पटना नाम का एक नगर है।

"अस्ति भागीरथी तीरे गृध्रकूटनाम्निपर्वते महान् पर्कटीवृक्षः।"

हितोपदेश मित्रलाभः जरद्गाव-विडालकथा

गंगा तट पर गृध्रकूट (गिद्धौर) नाम का एक पर्वत है, उस पर्वत पर एक बड़ा पाकड़ का वृक्ष है।

"अहमत्र गंगातीरे नित्यस्नायी, निरामिषाऽऽशी, ब्रह्मचारी, चान्द्रायणवृतमाचरंस्तिष्ठामि।"

हितोपदेश मित्रलाभः जरद्गाव-विडालकथा

उस विलाव ने गिद्ध से कहा, " मैं यहां गंगा जी के किनारे प्रतिदिन स्नान कर फलहारी हो ब्रह्मचर्य से रहता हूँ और चन्द्रायण व्रत करता हूँ।

मन्थर उवाच -

"सत्सगः, केशवे भक्तिर्गगाम्भसि निमज्जनम्।
असारे खलु संसारे, त्रीणि साराणि भावयेत।।"

हितोपदेश लीलावती-वाणिकपुत्र कथा

मन्थर बोला -

इस असार संसार में तीन वस्तु सार समझनी चाहिये एक तो सज्जनों का संग, दूसरी भगवान की भक्ति और तीसरा गंगा का स्नान।

चम्पूकाव्यों में गंगा वर्णन-

संस्कृत के अनेक चम्पूकाव्यों में पतित पावनी, मोक्ष दायिनी, भागीरथी गंगा का मनोहारी वर्णन प्राप्त होता है।

दशवी शताब्दी के सुप्रसिद्ध चम्पूरचनाकार त्रिविक्रम भट्ट ने अपने नलचम्पू और मदालसा चम्पू में गंगा का सविशेषण उल्लेख किया है। महाभारत के नलोपाख्यान पर आधृत नलचम्पू इनका विख्यात मौलिक ग्रन्थ है। जिसकी भाषा सुबन्धु के समान श्लेष प्रधान है। श्लिष्ट अर्थ में वर्ण्यविषय के साथ इनका गंगा वर्णन सर्वथा सराहनीय है।

११वीं शताब्दी के सुप्रसिद्ध धारा नरेश भोज एवं लक्ष्मणभट्ट ने

रामायण चम्पू की रचना की इसमें रामायण की मूल कथा चम्पू शैली में वर्णित हैं। इसमें भी गंगा का गौरव एवं स्वरूप अनेक स्थानों में विद्यमान है।

भोज के परवर्ती अनन्त कवि ने भारत चम्पू की १२ स्तवकों में सुन्दर रचना की जिसमें महाभारत की कथनीय कथा वर्णित है। इसके अनेक सन्दर्भों में गंगा वर्णन होता है।

श्री गंगावतरण चम्पू –

श्री शंकर दीक्षित का जन्म १८वी शताब्दी में काशी में हुआ था श्री दीक्षित के पिता पं० बालकृष्ण दीक्षित थे। श्री शंकर दीक्षित एक प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार एवं अनेक शास्त्रों के विद्वान थे। ये काशीराज श्री बलवन्त सिंह की सभा के कवि थे। सन् १७४६ ई० में इन्होंने इस अद्भुत कृति गंगावतरण चम्पू की आठ उच्छ्वासों में रचना की। जिसमें गंगावतरण की कथा का वर्णन किया गया हैं। इसके सम्पादक डॉ० गयाचरण त्रिपाठी का इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में विचार है – ''संस्कृत साहित्यस्य समुज्जवलरत्नं सगरसुतानाम् तारणाय भागीरथ प्रयासे भूलोकमवतीर्णेयं सुरसरित गंगाद्वार-प्रयाग-वाराणसी प्रभृति नगराणि पावयन्ती कपिलाश्रमं प्रति प्रवहति, अस्मिन् प्रंसगे वाराणसी नगर्या वर्णनामतीवरम्यं, तात्कालिकयाः सामाजिक स्थितेश्च निदर्शकम्।

गंगावतरण चम्पू सम्पादक
गयाचरण त्रिपाठी, केन्द्रीय संस्कृत
विद्यापीठ, प्रयाग २००२

इसकी शैली काव्य रीति वैदर्भी तथा पदावली प्रासादिक और अनुप्रासमयी है। इस काव्य के प्रारम्भ में वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति आदि कवियों का स्तवन है तथा इसके अन्त में सगर पुत्रों की गंगा लाभ से मुक्ति का वर्णन है।

गंगागुणादर्शचम्पू –

१८वीं शताब्दी में जन्में श्री दत्तात्रेय वासुदेव निगुडकर ने

गंगागुणादर्श नामक चम्पू काव्य की रचना की थी। श्री दत्तात्रेय वासुदेव निगुडकर राजापुर संस्कृत महाविद्यालय मे आचार्य थे। जिनकी संस्कृत भाषा में अच्छी गति थी। इनकी अन्य साहित्य रचनायें स्फुटरूप से प्राप्त होती है, जिनमें गंगागुणादर्श चम्पू प्रमुख है। इसका प्रतिपाद्य विषय "हा हा हू हू गन्धर्वो के संवाद द्वारा गंगा के गुण दोषों का सरस विवेचन प्राप्त होता है।"

इस रचना के अन्त में गंगा का गौरव तथा श्रेष्ठत्व प्रस्थापित है। डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर ने इसके साहित्यिक सौष्ठव की सराहना की है। (संस्कृत वाङ्.मय कोश ' ग्रन्थ खण्ड' कलकत्ता १६८८ पृष्ठ ८६)

गंगा विलास चम्पू -

गंगा पर आधृत इस सुप्रिद्ध चम्पू के रचयिता श्री गोपाल हैं। डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर ने श्री गोपाल के पिता का नाम श्री महोदव बताया है। (संस्कृत वाड्मय कोष ग्रन्थ खण्ड कलकत्ता १६८८ पृष्ठ ६०) इस ललित चम्पू काव्य में गंगा का गौरव, स्वरुप एवं महात्म्य काव्यात्मक रूप में निरूपित किया गया है जिससे इसका साहित्यिक महत्व अन्य किसी चम्पू काव्य से न्यून नहीं है।

कण्वचरितम् (चम्पूकाव्य) -

कण्व चरितम् चम्पू के रचयिता प्रो० सुरेन्द्रनाथ वर्मा बुन्देलखण्ड कॉलेज स्कन्दपुरी, सिविल लाइन्स, झाँसी के सेवानिवृत्त हिन्दी प्राध्यापक है। सेवानिवृत्त होने पर सम्प्रति झाँसी में ही रहकर साहित्य साधना में लीन हैं। इनकी निम्नलिखित संस्कृत एवं हिन्दी की मौलिक रचनायें हाल में ही प्रकाशित हुयी हैं जो इस प्रकार हैं -

१. भावगीतम् (संस्कृत काव्य संकलन)

२. यक्षगीत (मेघदूत का पद्यानुवाद)

३. कण्वचरितम् (संस्कृत चम्पू काव्य) उ०प्र० संस्कृत अकादमी से पुरस्कृत

इनके पूज्य पिता का नाम द्वारका प्रसाद वर्मा था जिनका कण्व चरितम् में पुण्य स्मरण करते हुये गंगा का भी इस प्रकार उल्लेख किया है-

श्रीः द्वारकाप्रसादस्य सुनुरहमतिमन्दधीः।

वन्दे तच्चरणौ भक्तया करूणाजह्नुजोद्गमौ।।१

शकुन्तलोपाख्यान पर आधृत 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' की कथा वस्तु परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करते हुये कण्वचरितम् में गंगा की सहायक मालिनी नदी का इस रचना में अनेक स्थलों पर चित्रण है साथ ही गंगा गौरव को भी रचनाकार ने प्रभावी रूप से रूपायित किया है यथा -

अंकाकितो वक्रवपुश्शशांकः, क्षयी च रत्नाकरपंकलीनः।

शैन्यात्सुधायाः सवणाच्च शम्भोः, कामप्यभिख्यां शिरसस्तनोति।

स्वर्गात्पतन्ती भुवि जह्नुकन्या, शुद्रेव विष्णोश्चरणात्प्रसूता।

पीयूष कल्पं ननु पाययन्ती, पयो जनान्मातृपदं विधत्ते।।

नाट्य साहित्य में गंगा वर्णन-

संस्कृत के समृद्ध नाट्य साहित्य में भी गंगा विषयक अनेक सन्दर्भ वर्ण्य विषय के साथ समुपब्ध होते है। जिनका अनुसंधानात्मक विवेचन संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

भास विरचित पंचरात्र एवं प्रतिमानाटकम् -

संस्कृत के प्रारम्भिक नाटककारों में भास अग्रगण्य हैं, जिनका महाकवि कालिदास ने 'मालविकाग्निमित्रम्' की प्रस्तावना में उल्लेख किया है।

शुद्रक रचित 'मृच्छकटिक' भास के 'चारूदत्त' का परिवर्धित एक परवर्ती महानाटक (प्रकरण) है तथा बी० स्मिथ ने शुद्रक का शासनकाल २२०-१६६ ई० पू० स्वीकार किया है। अतः मृच्छ कटिक को द्वितीय-तृतीय शती ई० की रचना मानने पर भास इसके पूर्व चतुर्थ शती ई०पू० में आर्विभूत हुये होगें।

भास के नाटकों को सामाजिक चित्रण निःसन्देह छठीं शती ई० प्र० से चतुर्थ शती ई०पू० के भारत का है। इनके नाटकों के भरत वाक्य किसी नन्द राजा का

संकेत करते प्रतीत होते हैं

अतः अन्तः बाह्य एवं प्रमाणों केआधार पर भास चतुर्थ शती ई० पू० के ही सिद्ध होते हैं।

भास के नाटक ग्रन्थ -

भास कृत १३ नाटक बताये गये हैं-

१. दूतवाक्य, २. कर्णभार, ३. दूतघटोत्कच, ४. उरुभंग, ५. मध्यमव्यायोग, ६. पंचरात्र, ७. अभिषेक नाटक, ८. बालचरित, ६. अविमारक, १०. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, ११. प्रतिमानाटकम्, १२. चारुदत्त, १३. स्वप्नवासवदत्ता।

इसके अतिरिक्त डॉ० कुन्हन राजा 'वीणावासवत्ता' को तथा ० कालिदास शास्त्री 'यज्ञफलम्' को भास की रचना मानते हैं, किन्तु इन्हें इनकी मौलिक रचना नहीं मानते हैं।

पंचरात्र-

इस रूपक में नाटककार भास ने महाभारत में उल्लिखित गंगा विषयक आख्यान को ध्यान में रखकर तृतीय अंक में गंगा के पुत्र गांगेय अर्थात् भीष्म का द्रोण के द्वारा इस प्रकार उल्लेख कराया है-

द्रोण - एष शिष्येण मेक्षिप्तो गांगेयं वन्दितुं शरः।

पादयोः पतितो भूमौ मां क्रमेणाभिवन्दितुम्।। पंचरात्र३/१६

प्रतिमानाटकम् -

इसी प्रकार प्रतिमा नाटकम् के द्वितीय अंक में राम की वन यात्रा में गंगा तटीय पावन स्थल शृंगिवेरपुर का इस प्रकार उल्लेख किया है -

''शृंगिवेरपुरे रथादवतीर्यायोध्याभिमुखाः स्थित्वा सर्व एव।

महाराजं शिरसा प्रणम्य विज्ञापयितुमारब्धाः।।

प्रतिमा० द्वितीय अंक-पृष्ठ १०४

इसी प्रकार भरत द्वारा तृतीय अंक में गंगा यमुनाका उल्लेख

अपनी दोनों माताओं के उपमान के रूप में इस प्रकार किया है-

"मम मातुश्च मातुश्च मध्यस्था त्वं न शोभते।
गंगामयुनर्योमध्ये कुनदीप प्रवेशिता ।।

प्रतिमानाटक ३/१६

कालिदास विरचित विक्रमोर्वशीयम् तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम्-

विक्रमोर्वशीयम् में गंगा सम्बन्धी स्वाभाविक वर्णन प्राप्त होते है। क्योंकि इसके कथानक का स्थान हिमालय क्षेत्र ही है जो गंगा का उत्पत्ति का स्थान है। उर्वशी उसी प्रकार मूर्च्छावस्था के पश्चात् चेतनता प्राप्त कर रही है। जैसे गंगा की कगार देने से गदला गन्धला धीरे -धीरे मानो स्वच्छ हो जाता है-

आविर्भूते शशिनि समसा..........गंगारोधः पतन कलुषा गच्छतीव प्रसादम्।।

विक्रमोर्वशीयम् १/६

कुपित उर्वशी का नदी भाव में परिणित होकर नाटककार ने गंगा का ही हृदयावर्जक चित्रध्ण इस श्लोक में इस प्रकार किया है-

तरंगभ्रमंगा क्षुमित विहग श्रेणि रसना,
विकर्षन्ती फेनं वसनमिव संरम्भशिथलम्।
यथाविद्धं याति स्खलितयमिसन्धाय बहुशो,
नदीभावेनेयं ध्रुवमसहना सा परिणता।।

विक्रमोर्वशीयम् ४/२८

नायक पुरूरवा उर्वशी रूप गंगा को प्रसन्न करने के लिये इन शब्दों में चाटूकारितापूर्ण निवेदन कर रहा है-

प्रसीद प्रियतमे! सुन्दरि नदि! क्षुमिता करूण विहंगमे नदि।
सुरसरित्तीर समुत्सुके। नदि! अलिकुलझंकारिते नदि।। विक्रमोर्वशीयम् ४/२५

अभिज्ञान शाकुन्तलम् के सप्तम् अंक में हिमालय के उत्तुंग शिखरों से नीचे गिरती हुई तीन धाराओं में (अलकनन्दा, मन्दाकिनी, भागीरथी) त्रिपथगा रूप

से गंगा को कवि इस प्रकार वर्णित करता है -

त्रिस्रोतसं बहित यो गगन प्रतिष्ठां,

ज्योर्तीसिवर्तयति च प्रविभक्तरश्मिः।।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् ७/६

गंगा की सहायक सरिता मालिनी का भी प्रथम द्वितीय एवं षष्ठ अंक में नाटककार ने उल्लेख किया है। शक्रावतार शचीतीर्थ की अवस्थिति गंगा तट पर ही थी, जहाँ शकुन्तला की अंगूठी गंगा की वन्दना करने पर जल में गिर गई थी।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् पंचम अंक

विशाखदत्त विरचित मुद्राराक्षस-

कीथ के अनुसार विशाखदत्त अथवा विशाखदेव सामन्त वटेश्वरदत्त के पौत्र एवं महाराज पृथु के पुत्र थे। (संस्कृत ड्रामा, पृ० २०४) इनका नाट्य साहित्य में एक मात्र 'मुद्राराक्षस' नामक उत्कृष्टनाटक ग्रन्थ प्राप्त होता है। मुद्राराक्षस (७/५) के संकेत के आधार पर इनका स्थिति काल बौद्ध धर्म के अभ्युदय काल ई० पंचम शती (ह्वेनसांग के आगमन के पूर्व) का प्रतीत होता है। द्रष्टव्य -

(Wintternitz Historical Drama in Sanskrit Litereture Krishynaswami Aiyangar. Com.Vol.P, 360)

मुद्राराक्षस समग्र संस्कृत साहित्य में यह एक राजनैतिक ऐतिहासिक कथावस्तु युक्त ६ अंकों का अद्वितीय नाटक है, जिस पर भास के प्रतिज्ञायौगन्धरायण का प्रभाव परिलक्षित है। अन्य नाटकों की भाँति यह रस प्रधान न होकर शुद्ध घटना प्रधान नाटक है, जिसमें राजनीति की कुटिल चालों, कूटनीति के दांवपेंचों का सजीव चित्रण हुआ है।

धन्याकेयं स्थिता ते शरसि? शशिकला, किन्नु नामैतदस्या?

नामैवास्यास्तदेतत् परिचितमपि ते विस्मृतं कस्य हेतो।?

नारीं पृच्छामि नेन्दुं कथयतु विजया न प्रमाणं यदीन्दु-

देंव्य निन्होतुमिच्छोरिति सुरसरितं शाठयमव्याद्विभोर्वः।।

मुद्राराक्षस प्रथम अंक-१

नाटककार विशाखदत्त ने इस श्लोक में गंगा का वर्णन किया है। पार्वती शिव से पूछतीं हैं, ''परमसौभाग्यवाली यह कौन सी स्त्री आपके मस्तक पर बैठी है? हे प्रिये यह शशिकला (चन्द्रमा की कला) है।

प्र०- हे स्वामिन् क्या इसका शशिकला ही नाम है।

उ०- हाँ शशिकला यह नाम ही है, यह तो तुम्हारी परिचित ही थी, फिर आज किस कारण विस्मृत हो गयी।

प्र०- आपके ऊपर जो स्त्री बैठी हुई है, उसके विषय में पूछती हूँ, चन्द्रमा के विषय में नहीं।

उ०- मेरा वचन तुम्हारे लिये यदि विश्वास जनक न हो तो विजया ही यथार्थ उत्तर देवे।

इस प्रकार जगन्माता पार्वती जी से जगतपावनी श्री गंगा को छिपाने की इच्छा रखने वाले शिव जी की चतुरता तुम सब की रक्षा करें।

आशैलेन्द्राच्छिलान्तरखलितसुरधुनीशीकरा साराशीतातु,

आतीरान्नैकरागस्फुरितमणिरूचो दक्षिणस्यार्णावस्य।

आगत्यागत्य भीतिप्रणतनृपशतैः शखदेव क्रियन्तां,

चूडारत्नांशुगर्भास्तव चरणयुगस्याङ्.गुलीरन्ध्रभागाः।।

मुद्राराक्षस तृतीय अंक १९

शिला के अग्रभाग में गिरी हुई गंगा की अम्बुकणा के वर्षण से शीतल हिमालय पर्वत और उनके वर्ण वाले प्रकाशमान मणि के सदृश कान्तियुक्त दक्षिण समुद्र के तीर तक रहने वाले भयभीत और प्रणत राजसमूह से आकर आपके चरण युगल अंगुलियों के रन्ध्रभाग से निकली उन राजाओं के मुकुट के रत्न की किरणों द्वारा सर्वदा शोभित हों।

भवभूतिविरचित उत्तरराम चरितम्-

सुप्रसिद्ध आचार्य वामन (८००ई०) ने काव्यालंकार सूत्र बृत्ति में

भवभूति के एक प्रसिद्ध पद्य "इयं गेहे लक्ष्मीः" (उ०१३८) को उद्धृत किया है। इसके अतिरिक्त 'गोडवहो' प्राकृत काव्य में वाक्पतिराज ने भवभूति की प्रशंसा की है। जिससे वाक्पतिराज से उनकी पूर्ववर्तिता एवं राजा यशोवर्मा के राज्यकाल के पूर्वार्द्ध में उनकी प्रसिद्धि प्रतीत होती है अतः भवभूति का जीवनकाल ७००ई०के आसपास ही था।

महाकवि भवभूति के नाटकों की प्रस्तावना से हमें इनका कुछ परिचय प्राप्त होता है- विदर्भ राजस्थ, पद्मपुर नामक नगर के निवासी एक उदुम्बर वंशीय विख्यात ब्राह्मण परिवार में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम नीलकण्ठ तथा माता का नाम जातुकर्णी था। भवभूति का प्रारम्भिक नाम श्री कृष्ण था जो ज्ञान निधि के शिष्य थे।

रचनायें -

संस्कृत साहित्य में भवभूति के ३ प्रख्यात नाट्य कृतियाँ प्राप्त होती है -

१. महावीर चरित

२. मालती माधव

३. उत्तरराम चरितम्

"यं ब्राह्मणमियं देवी वागवश्येवानुवर्त्तते की भवभूति की गर्वोक्ति बहुत अंशों में तथ्ययुक्त है। वस्तुतः संस्कृत भाषा पर उनका असाधारण अधिकार था तथा भाषा उनके संकेत पर दासी की भांति अनुसरण करती थी। समुचित शब्द विन्यास उनकी शैली का विशेष गुण है। भवभूति के अन्तिम गंर्भाग में गर्भवती सीता के राम के द्वारा परित्यक्त होने पर, गंगा प्रवाह में कूद रही है यह सूचना इस श्लोक में इस प्रकार वर्णित की गयी है -

"विश्वम्भरात्मजा देवी राज्ञा त्यक्ता महावने।
प्राप्य प्रसवमात्मानं गंगा देव्यां विमुञ्चति।।"

उत्तरराम चरितम् ७/१

गंगा का प्राणिकल्याणकारी मांगलिक और रमणीय रूप माँ के समान व्यक्त किया गया है -

पाप्मभ्यश्च पुनाति वर्धयति च श्रेयांसि सेयं कथा।

मंगला च मनोहरा च जगतो मातेव गंगेव च ।।

उत्तरराम चरितम् ७

दिङ्.नाग विरचित कुन्दमाला -

'कुन्दमाला' नाटक की रचना बौद्ध दार्शनिक दिङ्.नाग द्वारा न होकर किसी दूसरे दिङ्.नाग या धीरनाग (वीरनाग) द्वारा हुई थी। नाट्य दर्पणकार रामचन्द्र गुणचन्द्र (११वी शती ई०) ने 'कुन्दमाला' का उल्लेख किया है। यथा- 'वीर नागनिवद्धायां कुन्दमालायां सीतायास्तदपत्ययोः' अतः भवभूति के परवर्ती कुन्दमाला के कर्ता (दिङ्.नाग१०००ई०) के आस पास आविर्भूत थे।

'उत्तररामचरित की भांति 'कुन्दमाला' का कथानक रामायण के उ[illegible]ण्ड सीता परित्याग, लवकुशजन्म, वाल्मीकि द्वारा राम के अश्वमेध यज्ञ में लवकुश का रामायण गान कराना आदि पर आधारित है। इस नाटक में ६ अंक है, जो रस,भाव एवं भाषा-शैली, नाटकीय क्रियाशीलता आदि की दृष्टि से अत्यन्त प्रभावोत्पादक एवं संर्वाग सुन्दर होने से श्रेष्ठ नाटकों में महत्वपूर्ण है। नाटक में सरल, प्रासादिक दीर्घसमास रहित शैली प्रयुक्त हुयी है।

कुन्दमाला नाटक के प्रथम अंक में नाटककार द्वारा गंगा का उल्लेख किया गया है। राम के आदेश से वाल्मीकि आश्रम के समीप गर्भवती सीता को गंगाघाट पर छोड़ते हुये कहते है-

सर्वेमांश्रृणवन्तो देवतालोक पालाः मातगंगा भ्रातरः शैलराजाः।

भूयो भूयो याचते लक्ष्मणोऽयं यत्नाद् रक्षया राजपुत्री गतोऽहं ।।

कुंदमाला प्रथम अंक

[illegible]रारि विरचित अनर्घराघव-

ब्राह्मणवंशोद्भव मुरारि की उपाधि भी बाल-बाल्मीकि अर्थात् बाल्यावस्था से इनकी काव्य-प्रतिभा वाल्मीकि का स्मरण दिलाती थी। मुरारि सम्भवतः अनंगहर्ष के

समकालीन थे। पुराने आलोचकों में से कुछ ने मुरारि को भवभूति से उच्चतर कोटि का कवि माना है।

"मुरारिपदचिन्तायां भवभूतेस्तु का कथा।
भवभूतिं परित्यज्य मुरारिमुररीकुरु।।

उनकी आलोचना के आधार रुप में जो कृतियाँ रही होंगी, वे अभी तक प्राप्त नहीं है, क्योंकि अब तक के मुरारि के प्राप्त नाटक अनर्घराघव को भवभूति के उत्तररामचरित से किसी प्रकार उच्चतर कहा ही नहीं जा सकता।

अनर्घराघव में नयी घटनाओं के कारण रामकथा का अभिनव स्वरूप मिलता है। राम वहाँ से विमान पर सुमेरू, चन्द्रलोक मयलपर्वत, गोदावरी, काँची, उज्जयिनी, माहिष्मती, यमुना, गंगा, वाराणसी, मिथिला, चम्पा आदि देखकर प्रयाग से होते हुये अयोध्या आते हैं।

लंका विजय के अन्नतर अयोध्या प्रत्यागमन के सन्दर्भ में कवि ने गंगा का संक्षिप्त वर्णन किया हैं।

अनर्घराघवनाटके गंगावर्णनम् -

लक्ष्मण! (दूरमंगुल्या दर्शयन्)

त्रिपुरहरकिरीटक्रीडितैः क्रीड्यद्भि-
र्भुवनिममृतभानोबलिमित्रैः पयोभिः।
सगरसुतचितायाः पावनी तोयराशे-
रिममियमघमग्रे जाह्नवी निह्नुते नः।।७/११७

रामः (सहर्षम्)

गौरी विभज्यमानार्धसंकीर्णहरमूर्धीन !
अम्ब! द्विगुणगंभीरे भागीरथि! नमो स्तुते।। ७/११८

(सीतां प्रति) देवि वन्दस्व !

देवस्याम्बुजसंभवस्य भवनादम्भोधिमागायुका,

सेयं मौलिविभूषणं भगवतो भर्गस्य भागीरथी।

उद्यातानपहाय विग्रहमि स्त्रोतः प्रतीपानपि,

स्त्रोतस्तीव्रतरत्वरा गमयति द्रागब्रहमलोकं जनान्।। ७/११६

जयदेव विरचित प्रसन्नदेव

'प्रसन्नराघव' नाटक तथा 'चन्द्रालोक' अलंकारग्रन्थ के रचयिता जयदेव ११-१२वी शती के विदर्भ के कुण्डनपुर नगर में उत्पन्न हुये थे। उनके पिता महादेव तथा माँ सुमित्रा थी। ये गीत गोविन्दकार जयदेव से सर्वथा भिन्न है।

'प्रसन्नराघव' रामायण की रोचक एवं परिवर्तित घटनाओं के कथानक से युक्त ७ अंकों का एक श्रेष्ठ नाटक है, जिसकी भाषा में अनुपम विलास एवं लालित्य है। पदावली इतनी मृसण एवं उदार है तथा भाषा शैली में इतनी रमणीयता प्राजलता प्रासादिकता एवं मधुरता है कि इन्हें पीयूषवर्षी की उपाधि मिली।

'प्रसन्नराघव' में गंगा वर्णन विषय महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्राप्त होते है। इसके अतिरिक्त इनका गंगास्तव शीर्षक अन्य काव्य भी प्राप्त होता है। जिसमें गंगा का सरस स्तवन किया गया है।

हस्तिमल्ल विरचित विक्रान्त कौरवम्

विक्रान्त कौरव नाटक के कर्ता जैन कवि हस्तिमल्ल १३वीं सती ई० के उत्तरार्द्ध में पाण्ड्य देश में स्थित गुडिपत्तन नगर के निवासी थे। प्रस्तुत नाटक की नायिका सुलोचना काशी नरेश अकंपन की पुत्री हैं। उसके स्वयंवर -सन्दर्भ में काशी और गंगा का स्मरणीय वर्णन हैं। विक्रान्त कौरवम् के अतिरिक्त "मैथीली कल्याण" एवं "अंजनापवनञ्जय" इनकी अन्य नाट्यकृतियाँ हैं।

विक्रान्त कौरवनाटके गंगा वर्णनम्

गंगातरंगेण विधारमन्ती,

सरोजजालं चलहंसमालम्।

उल्लासिहारच्छ विहारितोथा,

वाराणसी सीमविहारिपूरा।।२.१०

मदकलसारसलीलाकल्हारविसरणमंजुलसमीरा।

तामरससरसकेसरविसराकुलसलिलकल्लोला।। २.११

क्वचिज्जम्बूकुंजप्रतिहतिपरावर्तितजवः,

क्वचिद् वृत्तावर्तभ्रमवशपरिभ्रान्तसलिलः।

प्रवाहो जाह्नव्याः प्रथयति गभीरं कलकलम्,

क्वचिद्रोधः पातदुतविघटमानोर्मिनिवहः।।२.२१

विसृत्य लहरीजलं नभसि दूरमत्रोत्थिता,

विवर्तित निशातशुभ्रकरवालधारोज्वलाः।

भृषाश्चटुलचंक्रमास्सपदि मीनकेतोरपि,

स्फुरन्तः इव केतवः किमपि कौतुकं तन्वते।।२.२२

तरंगप्रङ्खोलव्यतिकरपरावर्तितदलं,

दृशो सारंगाक्ष्यास्तुलयति विलोलं कुवलयम्।

स्तनौ तस्याः कार्तस्वरकलशसौभाग्यजयिनौ,

स्मरक्रीडादालौ स्मरपतितरां कोकमिथुनम्।।२.२३

डॉ0 श्रीधर भास्कर वर्णेकर विरचित विवेकानन्द विजयम्

'विवेकानन्दविजयम्' के रचयिता डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर नागपुर विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त संस्कृत प्राध्यापक थे। आप नागपुर से प्रकाशित होने वाली संस्कृत साप्ताहिक 'भवितव्यम्' के संस्थापक, सम्पादक थे। संस्कृत के लिये आप सर्वात्मना समर्पित सच्चे साधक थे। आप एक यशस्वी संस्कृत पत्रकार, नाटककार एवं उच्चकोटि के महाकवि थे। इनकी निम्न लिखित उत्कृष्ट कृतियाँ इनके वैदुष्य और कवित्व की प्रतीक है -

१. शिवराज्योदयम् (महाकाव्य)

२. विवेकानन्दविजय् (महानाटक)

३. मातृभूलहरी (काव्य)

४. मन्दोरिमाला (संस्कृत काव्य)

५. तुकाराम चरितम् (काव्य)

६. श्रमगीता काव्य

७. संस्कृत वाड्.मय कोश सम्पादित तीन खण्ड आदि।

दुर्भाग्य वश दो वर्ष पूर्व एक कार दुर्घटना में सपत्नीक दिवंगत हो गये जिससे संस्कृत साहित्य जगत को अपूर्णनीय क्षति हुयी। इनके पाण्डित्य से प्रभावित होकर सत्यानन्ददेवायतन कलकत्ता इन्हें प्रज्ञा भारती की मानध उपाधि प्रदान की गयी। कालान्तर में इनकी कृतियों का एक संकलन 'प्रज्ञाभारतीयम्' नाम से नागपुर से प्रकाशित किया गया।

यहाँ विवेकानन्दविजयम् के सप्तम अंक में प्रतिपादित गंगा गौरव को प्रतिपादित करने वाले पद्य को अविकल रूप में उधृत किया जा रहा है।

अपूतंमन्या सा हरिचरणयोगादथ यदा,
वियद्गंगा खिन्ना, पुरहर-शिरोवासमगमत्।
ततो यस्याः सड्.गं कथमपि समासाद्य, समगाद्,
अलभ्यं पावित्र्यं, जयतु सततं सा भरतभूः।।४६।।

विवेकानन्दविजयम् सप्तमोंक - ४६

समीक्षा-

संस्कृत के समृद्ध साहित्य का अवलोकन करने पर हमें इसकी संस्कृत की अन्य विभिन्न प्रकीर्ण काव्य विधाओं में भी गंगा विषयक महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। जिनमें गंगा का दिव्य स्वरुप, गौरव एवं महात्म्य निरूपित हुआ है। इस दृष्टि से गद्य काव्य के अन्तर्गत महाकवि दण्डी विरचित दशकुमार चरितम्, बाणभट्ट विरचित कादम्बरी एवं हर्षचरित, धनपाल विरचित तिलकमञ्जरी एवं डॉ० राम जी उपाध्याय विरचित सत्यहरिश्चन्द्रोदयम् जैसी कथा कृतियों, नारायण पण्डित प्रणीत हितोपदेश (नीतिकथा) के अतिरिक्त संस्कृत के चम्पू काव्यों में भी गंगा के प्रचुर सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। इन चम्पू काव्यों में त्रिविक्रम भट्ट कृत नलचम्पू, अनन्त कवि कृत भारत चम्पू, श्री शंकर दीक्षित रचित गंगावतरण चम्पू, श्री दत्तात्रेय वासुदेव निगुडकर कृत गंगागुणादर्शचम्पू, श्रीगोपाल विरचित गंगा विलास चम्पू, प्रो० सुरेन्द नाथ वर्मा विरचित कण्वचरितम् चम्पू उल्लेखनीय कृतियां है।

संस्कृत नाट्य साहित्य में भी गंगा वर्णन प्राप्त होता है। भास के नाटकों में पंचरात्र एवं प्रतिमानाटकम्, कालिदास कृत विक्रमोर्वशीयम् एवं अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विशाखादत्त विरचित मुद्राराक्षस, भवभूति कृत उत्तरराम चरितम्, दिङ्.नाग रचित कुन्दमाला, मुरारि रचित अनर्घराघव, जयदेव विरचित प्रसन्नराघव एवं गंगास्तव, हस्तिमल्ल कृत विक्रान्त कौरवम् डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर कृत विवेकानन्दविजयम् आदि अनेक नाटकों में गंगा वर्णन सम्बन्धी महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। जिनसे राष्ट्रीय अखण्डता, एकता तथा सांस्कृतिक एक्य भावना को सम्पुष्ट करने की दिशा में गंगा अद्भुत अवधान सिद्ध होती है।

उपसंहार

शोध निष्कर्षों का निरूपण

उपसंहार

शोध निष्कर्षो का निरूपण-

गंगा वैदिक कालीन सप्त सैन्धव प्रदेश की पूर्वी सीमान्त नदी थी, जिसका पूर्व से पश्चिम की प्रमुख नदियों के साथ गंगा तटवासी जन (गाङ्ग्य) के रूप में उल्लेख हुआ है। गंगा के लिये इस समय प्रयुक्त अन्य अभिधान जाह्नवी का भी ऋग्वेद में तथा शतपथ ब्राह्मण १३/४/५/११ के अतिरिक्त उपनिषद ग्रन्थों में भी उल्लेख हुआ है। यद्यपि गंगा और यमुना का उल्लेख सिन्धु की सहायक तथा सरस्वती आदि नदियों के साथ हुआ है, तथापि वैदिक कालीन सप्त सैन्धव प्रदेश की प्रधान सात नदियों के समान इन्हे उतना महत्व नही मिला है, जितना सरस्वती,शुतुद्रि,परूष्णी,विपाशा असिक्नी,वितस्ता सिन्धु को।

गंगा का उद्गम मध्यहिमालय की १२८०० फीट ऊँचाई पर केदारनाथ के उत्तर में (३०-५६फीट अ० ७६-४५फी०द०) अवस्थित गंगोत्री 'गोमुख' नाम की १६ मील लम्बी हिम कन्दरा से हुआ है। प्रारम्भ में २ गज चौड़ी १५ इंच गहरी भागीरथी नाम से अपनी सहायक जाह्नवी एवं भिल्लांगना को मिलाकर प्रथम १८० मील पर्वतीय प्रबल प्रवाह के पश्चात् टेहरी के नीचे देवप्रयाग में अलकनन्दा को आत्मसात् करती है। देवप्रयाग से ही इस संयुक्त तीव्र प्रवाह को गंगा कहा जाता है। हरिद्वार (गंगाद्वार) में गंगा के वेगपूर्ण प्रवाह का अवतरण मैदानी भाग में होता है, जहॉ से यमुना-संगम प्रयाग तक यह दक्षिण-पूर्वाभिमुख बहती हुई उत्तर में सरयू (घाघरा), राप्ती, गण्डकी, तथा दक्षिण से सोन (शोण) का जल लेती हुई, राजमहल पहाड़ियों के पास दक्षिण को मोड़ लेकर ७५':५० मील का लम्बा मार्ग तयकर भगीरथी एवं हुगली जैसी शाखओ में बॅटकर पूर्वी सागर बंगाल की खाड़ी में विश्राम करती है। ऋग्वेद के आधार पर ज्ञात होता है, पूर्वी समुद्र आरावत के पास गंगातट पर आर्यो की बस्तियों कम बसी थी, वृवु आदि पणियों का ही इसके कछारों में निवास था।

पौराणिक साहित्य में गंगा के स्वरूप एवं महत्व की प्रभविष्णु व्यज्जना पायी जाती है। अनेक पौराणिक उपाख्यानों-गौतमी गंगोपाख्यान, ऋषिकोपाख्यान, गंगासप्तशतीआख्यान, अनसूयोपाख्यान, कुमारोपाख्यान, कुटिलोपाख्यान, गांगेयोपाख्यान, सपत्न्यपाख्यान,

सगरोपाख्यान, गोलोकोपाख्यान, प्रेयस्युपाख्यान, नारायणोपाख्यान, भोगवती उपाख्यान, नरनारायणोपाख्यान आदि में गंगा का नैसर्गिक स्वरूप महत्तता , पावनता, दिव्यता वर्णित है।

इन उपाख्यानों में गंगा मात्र नदी न होकर सचेतन, देवी स्वरूपा निरूपित है, कही-कही इन उपाख्यानों में गंगा का मानवीकरण विभिन्न क्रियाओ एवं गतिविधियों में प्रस्तुत है तो कही गंगा की सखियों के उल्लेख के साथ इसकी लौकिकता पुर्नजन्म लौकिक व्यक्तित्व अंकित है, तो कही गंगा की परिलौकिकता सहित अचिन्त्य चरित्र चित्रित किया गया है।

विभिन्न पुराणों में जहॉ गंगा की दैवी उत्पत्ति रूपायित है, वही इसका लौकिक दृष्टि से धार्मिक तीर्थ के रुप में सांस्कृतिक अभ्युदय भी विभिन्न तीर्थो के कुम्भ पर्वो एवं मेलों के रूप में निरूपित किया गया है। समासतः सम्पूर्ण पौराणिक साहित्य में गंगा का स्वरूप एवं महात्म्य अद्भुत रूप में चित्रित है। जिससें इसके धर्म तीर्थो एवं मेलों के माध्यम से भारत का पुरातन सांस्कृतिक गौ... ...गर हो उठता है।

अलंकृत आदिकाव्य ...ायण में आदिकवि महर्षि वाल्मीकि ने बालकाण्ड के २३ वें सर्ग के कई श्लोकों में ...त पावनी गंगा का वर्णन विश्वामित्र के साथ रामलक्ष्मण की मिथिलापुर यात्रा के सन्दर्भ में वर्णन किया है।जिसमें इसकी उत्पत्ति, स्वरूप एवं महात्म्य का पौराणिक पृष्ठभूमि के आधार पर आदिकवि ने निरूपण किया है।इसके अतिरिक्त इसी काण्ड के सर्ग ४४ में भागीरथ के प्रयास से गंगा का अवतरण तथा गंगा द्वारा सगर के ६० हजार पुत्रों के तर्पण का वृतान्त प्राप्त होता है। अनेक अविधानों से युक्त गंगा का अयोध्या-काण्ड के सर्ग ५२ में रामवनगमन के समय गंगा पार करने का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया हैं।

...गंगोपाख्यान (बालकाण्ड अध्याय ३५ से ४४) तो लोक विश्रुत है ही, ...ायण में गंगावर्णन सम्बन्धी अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते है, जिनमें वनगमन के समय ... के लिये सन्नद्ध श्रृगंवेरपुर में श्री राम, सीता व लक्ष्मण का प्रथम बार गंगा दर्शन अत्यन्त जीवन्त एवं मार्मिक हैं।

'पंचम वेद' के रूप में प्रख्यात 'महाभारत' में गंगा का प्रभावी वर्णन महर्षि वेदव्यास ने आरण्यक पर्व के अन्तर्गत ८५ से ८६ अध्यायों के बीच में अत्यन्त मार्मिक रूप से किया है।इसके अतिरिक्त वन पर्व के १०६ वे अध्याय में महर्षि लोमश धर्मराज युधिष्ठिर को गंगावतरण का रोचक वर्णन प्रस्तुत करते है। जिसमें इसके अलौकिक दिव्य स्वरूप का अत्यन्त हृदयावर्जक, प्रस्तुतिकरण हुआ है। इसमें गंगा की नैसर्गिक सुषमा के साथ पावनता प्रभावशालिता तथा लोककल्याणकारिता व्यक्त होती है।

इसीप्रकार अनुशासन पर्व के २६ वें अध्याय के अन्तर्गत युधिष्ठिर भीष्म संवाद के रूप में गंगास्तव के माध्यम से इसका अलौकिक महात्म्य व्यक्त हुआ है।समासतः पूर्ववर्ती पौराणिक साहित्य की प्रतिच्छाया में रामायण और महाभारत दोंनों महत्वपूर्ण ग्रन्थों में गंगा का गौरव, स्वरूप, प्रभाव एवं माहात्मय वर्णित हुआ है। जिसके साहित्यक एवं सांस्कृतिक महत्ता निर्विवाद रूप से सिद्ध होती है।

लौकिक संस्कृत साहित्य के परवर्ती अनेक महाकाव्यों में गंगा, गंगा प्रपातों ,निर्झरों तथा उसकी सहायक नदियों, गंगा तटीय तीर्थों एवं सहायक नदियों के संगमों का विम्बग्राही काव्यात्मक चित्रण प्राप्त होता है। इन महाकाव्यों में महाकवि कालिदास कृत रघुवंश,कुमार सम्भव के अतिरिक्त भट्टिकाव्य,हरविजय,शिशुपाल वध, गंगावतरणम् आदि अनेक महाकाव्य उल्लेखनीय हैं। जिनमें गंगा का स्वरूप ,गौरव एवं महात्म्य अत्यन्त सरस रूप में व्याख्यायित है। इन महाकाव्यों में कतिपय गंगा की प्रमुख सहायक नदियॉ भी वर्णित हैं जिनमें यमुना ,तमसा,सरयू ,शोण (शोणभद्र) आदि उल्लेखनीय हैं।

कतिपय महाकाव्यों में इन नदियों के संगमों तथा गंगा तटीय विख्यात अर्थ एवं काम तीर्थ स्थलों पुष्पपुर आदि का भी उल्लेख किया गया है। जिनमें गंगा यमुना संगम स्थित प्रयाग जैसे धर्म तीर्थ सर्व प्रमुख है।

संक्षेप में इन महाकाव्यों में गंगा महात्म्य वर्णन के माध्यम से राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता एवं अखण्डता निरूपण का श्लाधनीय साहित्यक सत् प्रयास हुआ है। अतः इन महाकाव्यों के गंगा वर्णन की प्रासंगिता सर्वथा समीचीन प्रतीत होती है।

समृद्ध संस्कृत गीतिकाव्य के अन्तर्गत स्तोत्र साहित्य विधा अत्यन्त समृद्ध और लोकप्रिय है, अतःगंगा पर आधृत अनेक उत्कृष्ट स्तोत्रों की रचना पुराण काल से अव तक निरन्तर प्राप्त होती है।श्री मद् देवी भागवत नवम् स्कन्द के १२वें अध्याय में विष्णु पदीस्तोत्रम् स्कन्धपुराण के काशी खण्ड पूर्वार्द्ध में अगस्त्य एवं स्कन्द के संवाद रूप में गंगासहस्त्रनाम् स्तोत्र, ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खण्ड में गंगा स्तोत्रम्, कल्किपुराण के अनुभागवत, भविष्य के तृतीयांश में गंगास्तव, मत्स्य पुराण में गंगा पुण्य नामानि, श्री हनुमत विरचित'गंगास्तव' बाल्मीकि विरचित 'गंगाष्टकम्' कालिदास कृत शार्दूलविक्रीडित छन्द में प्रथम गंगाष्टकम् तथा भुजंगप्रयात छन्द में द्वितीय 'गंगाष्टकम्' शंकराचार्य विरचित गंगाष्टकम् तथा गंगा स्तोत्रम्, अब्दुल रहीम खान खाना कृत 'गंगा लहरी' सत्यज्ञानानन्द तीर्थ विरचित 'गंगाष्टकम्' आदि महत्वपूर्ण स्तोत्र कृतियाँ उल्लेखनीय हैं।

इन विभिन्न स्तोत्र ग्रन्थों में गंगा का नैसर्गिक स्वरूप, दिव्य उत्पत्ति, दिव्य गुण युक्त माहात्मय वर्णित है, जिससे गंगा के प्रति लोक जीवन की सहज श्रद्धा एवं भक्ति का होना स्वतः स्वाभाविक हैं। यहीं कारण है कि मातृदेवी के रूप में जगतपालिनी, पतितपावनी, मोक्षदायिनी गंगा का गौरव एवं माहात्म्य स्वतः संसार में संवर्धित हैं। सप्त नदियों में सर्वश्रेष्ठ गंगा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को अपने हरिद्वार और प्रयाग के कुम्भ पर्वो से निरन्तर बढ़ाती रहती है। इन स्तोत्र काव्यों में गंगा का यही अलौकिक वैशिष्ट्यव्याख्यायित है।

अर्वाचीन संस्कृत काव्यों में गंगा गौरव सशक्त रूप से प्रतिपादित है। इन काव्यों में अनेक काव्यशास्त्रीय, छन्दःशास्त्रीय एवं वर्ण्य विषयगत विद्यमान है, जिनसें इन काव्यकृतियों की पर्याप्त प्रभावशालिता परिलक्षित हैं। इन काव्य कृतियों में कविवर स्व० पं० विष्णुदत्त शुक्ल विरचित 'गंगासागरीयम्' , अर्वाचीन संस्कृत कवियत्री डा० कमला पाण्डेय प्रणीत 'रक्षतगंगाम्' साहित्यवारिधि डा० कैलाशनाथ द्विवेदी कृत 'गंगा गरिमा',सुकवि विश्वेश्वर विद्याभूषण प्रणीत 'गंगासुरतरंगिणी', प्राचार्य के०वी० एन०आप्पाराव रचित 'गंगालहरी' सुविख्यात राजनेता चक्रवर्ती श्री राजगोपालाचार्य विरचित 'गंगा तरंगम्', डा०मंजुलता शर्मा रचित गंगे आदि उल्लेखनीय है।

इन अर्वाचीन सशक्त संस्कृत काव्य रचनाओं से गंगा का दिव्य स्वरूप एवं अनुपम माहात्म्य लोक मानस में प्रतिष्ठापित हुआ है,जिसमें गंगा भारत की नहीं,अपितु विश्व की सर्वश्रेष्ठ नदियों में मूर्धन्य मानी जाती है।

गंगा सागरीयम् तथा सौलोचनीयम् के रचयिता पं० विष्णुदत्त शुक्ल का जन्म सन १८८५ ई० में उ०प्र० के उन्नाव जनपद में अवस्थित कर्नाईपुर नामक गॉव में हुआ था। उनके पूज्य पिता पं० मिश्री लाल शुक्ल और माता का नाम शिवरानी देवी शुक्ल था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा - दीक्षा उन्नाव में तत्पश्चात् उच्च शिक्षा वाराणसी के हिन्दू विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। आर्चाय जे०वी० कृपलानी और डॉ० सम्पूर्णानन्द की प्रेरणा से कालान्तर में काशी विद्यापीठ में भी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् अध्यापन कार्य भी किया। पं० विष्णु दत्त शुक्ल आदर्श आदर्श अध्यापक,उत्साही,साहसी,स्वाधीनता सेनानी तथा दैनिक प्रताप एवं सहयोगी नामक पत्रों सें जुड़े एक निर्भीक पत्रकार ,समर्पित साहित्य प्रेमी और श्रेष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता थे। श्री शुक्ल निश्चल हृदय के हास,परिहास,प्रिय परम विनोद एवं जीवन्त सत पुरूष थे। आजीवन अर्थाभाव अनुभव करते हुये भी ये जीवन संघर्ष से कभी विमुख नहीं हुये और कर्मठता पूर्वक साहित्य सर्जना के साथ समाज और राष्ट्र की सेवा की। जिससे ये आज भी एक आदर्श महापुरूष के रूप में हम सब के लिये सम्माननीय एवं स्मरणीय बने हुये हैं।'गंगा सागरीयम्' विष्णु दत्त शुक्ल प्रणीत संस्कृत की एक आधुनिक अद्यतन कृति है। यह वस्तुतः एक श्रृंगार रसात्मक महाकाव्य है। कथा के परिकल्पित संभार में अप्रतीतत्व की प्रतीति होती है।

नायक नायिका की समासोक्ति प्रस्तुति के साथ ही दौत्य कार्य का भी काव्य में समावेश हुआ है।गंगा को नायिका समुद्र को नायक तथा मेघ को दूत बनाकर प्रस्तुत किया गया हैं। गंगा और सागर दूत के माध्यम से एक दूसरे के गुण सौन्दर्य का श्रवण करते है और उसमें पारस्पिरिक आकर्षक उत्पन्न होता है।

मिलन की आतुरता में वियोग की वेदना भी नायक व नायिका को पीड़ित कर रही है। यही वेदना यदि रचना में पूर्व राग और विप्रलम्भश्रंगार की स्थापना का

कारण बनती है अतः काव्य में रस श्रृंगार के भी दर्शन होतें हैं।

समासतः कथावस्तु, भाषाशैली, रीति, छन्द, अलंकार योजना, प्रकृति चित्रण, रस निष्पत्ति, सामाजिक-परिष्कार, समाज में वैचारिक क्रान्ति की आवश्यकता, परिश्रम में महत्व और अन्त में नायक नायिका का सुखद मिलन काव्य को भव्यता प्रदान करते है।

'गंगा सागरीयम्' पं० विष्णुदत्त शुक्ल द्वारा प्रणीत काव्यकृति काव्यशास्त्रीय अनेक विशेषताओ के कारण स्तुत्य और अभिनन्दनीय है । गंगा और सागर की सुकवि शुक्ल ने मानवीकृत कर सचेतन रूप में समासोक्ति के माध्यम से नायिका-नायक रूप में निरूपित किया है यही इनकी मौलिक काव्य-उद्भावना हैं, जिसकी अद्भुत रसनिष्पत्ति से इस काव्य के सहृदय श्रोता-पाठक चमत्कृत और आनन्दित हो जाते है।यही इस काव्यकृति और कृतिकार की महती सारस्वत सफलता हैं।

संस्कृत की अन्य विभिन्न प्रकीर्ण विधाओं में भी गंगा विषयक महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्राप्त होते है, जिनमें गंगा का दिव्य स्वरूप गौरव एवं माहात्म्य निरूपित हुआ [illegible] दृष्टि से गद्य काव्य के अन्तर्गत महाकवि दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्', वाणभट्ट [illegible] कादम्बरी' एवं 'हर्षचरित' धनपाल विरचित 'तिलकमंजरी' एवं डॉ० राम जी उपाध्याय [illegible] सत्यहरिश्चद्रोदयम' जैसी कथा, कृतियॉं, नारायण पण्डित प्रणीत हितोपदेश(नीतिकथा) के अतिरिक्त संस्कृत के चम्पू काव्यों में भी गंगा के प्रचुर सन्दर्भ प्राप्त होते है।इन चम्पू काव्यों में त्रिविक्रम भट्ट कृत 'नलचम्पू' राजाभोज एवं लक्ष्मण भट्ट कृत 'रामायण चम्पू', 'अनन्त कवि कृत 'भारत-चम्पू' श्री शंकर दीक्षित विरचित 'गंगावतरण चम्पू', अनन्त कवि कृत 'भारत-चम्पू', श्री शंकर दीक्षित विरचित 'गंगावतरण चम्पू', श्री दत्तात्रेय वासुदेव निगुडकरकृत 'गंगागुणादर्शचम्पू' प्रो० सुरेन्द्र नाथ वर्मा विरचित 'कण्वचरितम् चम्पू' उल्लेखनीय कृतियॉं है।

संस्कृत नाट्य साहित्य में गास के नाटकों में 'पंचरा[illegible]' एवं 'प्रतिमानाटकम्', कालिदास कृत 'विक्रमोर्वशीयम् एवं ' अभिज्ञानशाकुन्तलम्', विशाखदत्त विरचित'मुद्राराक्षस', भवभूति कृत 'उत्तरराम चरितम्, दिंड्गनाग रचित 'कुन्दमाला', मुरारि कृत [illegible]कौरवम् श्री धरभास्कर वर्णेकर कृत विवेकानन्दचरितम् आदि अनेक नाटकों में गंगा

वर्णन सम्बन्धी महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। जिनसे राष्ट्रीय अखण्डता,एकता तथा सांस्कृतिक एक्य भावना को सम्पुष्ट करने की दिशा में गंगा का अद्‌भुत अवधान सिद्ध होता है।

गंगा वर्णन में कल्पना एवं चमत्कारिता का प्राचुर्य प्राप्त होता है। यथार्थ के समानान्तर किसी समता,सारूप्य अथवा ताद्रव्य की सृष्टि ही सालंकृत कल्पना है। प्रस्तुत ही कविता का यथार्थ है। इसी को वाच्यार्थ कहते हैं,परन्तु कविता का दूसरा पक्ष,जिसे हम ''अप्रस्तुत विधान'' की संज्ञा देते हैं। सदैव कल्पनाश्रित होता है। आचार्य कुन्तुक की दृष्टि में यही कल्पना वक्रता हैं,जिसे हम काव्यशास्त्र की भाषा में अलंकार कहते हैं --

वाक्यस्य वक्रभावोन्यो भिद्यते यः सहस्त्रधा।

सर्वो प्यलंकारवर्गो यत्रान्तर्थविष्यति।।

-- वक्रोक्ति जीवतम्

यही कल्पनायें काव्यशास्त्रीय दृष्टि से अलंकार हैं। उर्पयुक्त समस्त कल्पनायें क्रमशः उपमा,रूपक,अनन्वय,उपमेमोपमा,अपह्नुति तथा व्यतिरेक अलंकार हैं। गंगा वर्णन सन्दर्भो में जो चमत्कारी कल्पनायें विविध अर्थालंकारों की सृष्टि करती है। काव्यशास्त्रीय व्याख्या के सन्दर्भ में ,सर्वप्रथम उन कल्पनाओं का विश्लेषण किया जा रहा है जो कल्पनायें तकनीकी दृष्टि से अलंकार नहीं हैं ,फिर भी लोकोत्तर चमत्कार उत्पन्न करतीं हैं।

आदि कवि वाल्मीकि के गंगास्तवन में एक चमत्कारपूर्ण अद्‌भुत कल्पना का दर्शन होता है। कविता वाच्यार्थ की कविता है ही नहीं। कवि की भगवती गंगा के प्रति अनुपम् प्रीति,अतिशय श्रद्धा अथवा आलौकिक आसक्ति व्यक्त हो रही है। संस्कृत वाङ्मय में तथा हिन्दी में भी ऐसे अनेक समानान्तर पद्य प्राप्त होते हैं।

गंगा वर्णन में रम्य विम्ब विधान विद्यमान हैं। हमारी कल्पना मन की उड़ान न होकर,प्रस्तुत वस्तु का साक्षात् प्रतिविम्ब बन जाती है तो उसे बिम्ब योजना कहते हैं।यथा--

शिशुपाल वध महाकाव्य में प्रथम सर्ग में भगवान श्री कृष्ण का वर्णन करते हुये माघ कहते हैं - यदि नीले आकाश में (श्वेत) आकाश गंगा की दो पृथक्

धारायें गिरें तो छवि समान छवि भी वनमाला से विभूषित (श्याम वर्ण) श्री कृष्ण के वक्षःस्थल की होगी।

गंगा सम्बन्धी वाङ्मय में भी ये बिम्ब योजनायें साकार हुईं हैं। रघुवंश महाकाव्य के १३ वें सर्ग के गंगा यमुना संगम चित्रण में कवि कुलगुरू कालिदास ने ऐसी ही जीवन्त,प्रत्यक्ष - अवेक्षणीय बिम्बानकृतियाँ गढ़ी हैं। गंगा वाड्.मय की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह आद्यान्त सरस स्तोत्रमय है। उसमें भक्ति भावना आत्मनिवेदन,दैन्यदुराशा -प्रदर्शन एवं देवविषयिणी रति के अतिरिक्त कविता के अन्य प्रतिमान बहुत क़म रूपायित हो सकें हैं,फिर भी कवियों ने कल्पनाओं और बिम्बों का आश्रय लिया है।

गंगा वर्णन में जड़ चेतन का अद्भुत समन्वय विद्यमान है। गंगा मात्र जल प्रवाहमयी एक नदी ही नहीं रही, वह देवव्रत,भीष्म जैसे वीर पुत्र की प्रसविनी माँ तथा सम्राट् शान्तनु की प्रिया भी रहीं । गंगा एक नदी ही नहीं है, बल्कि भारतीय संस्कृति में वह पतितोद्धारिणी,मंगलकारिणी,दयानिधिभूता एक स्नेहशीला माँ हैं,जो महाराज भगीरथ की दुर्घर्ष तपश्चर्या से द्रवित होकर,उनके कपिल नेत्राग्निन - भस्मीभूत पुरखों को मुक्ति देने के लिये,पृथ्वी पर अवतरित होती हैं। गंगा की चेतना के मुख्यतः दो पक्ष हैं पहला हैं आधिदैविक तथा दूसरा है उसका मानवीकृतरूप। आधिदैविक दृष्टि से गंगा एक पाप विनाशनी देवता हैं, विष्णु, शिव आदि ही की तरह,मानवीय रूप में गंगा देवीरूप से भी अधिक चेतन हैं। वह हस्तिनापुर नरेश शान्तनु की हृदयाधीश्वरी बनतीं हैं भारत राष्ट्र की साम्राज्ञी। एक स्नेहशीला माँ की ही तरह वह देवव्रत के अभ्युदय से प्रसन्न एवं मृत्यु से मर्माहत हो उठतीं हैं।

वाल्मीकि, शंकराचार्य, कालिदास तथा अन्यान्य स्त्रोतकारों ने अपनी स्तुतियों में प्रायः गंगा के आधिदैविक रूप को ही रूपायित किया है,परन्तु पण्डितराज जगन्नाथ सरीखे सहृदय कवियों ने अपनी क्रान्तदर्शिनी प्रतिभा से प्रेरित होकर गंगा के विविध मानवीय रूपों को अपनी कविता में प्रस्तुत किया है। गंगा के चेतन रूप का दर्शन प्रायः भक्त कवियों को ही हुआ है,जो स्वभावतः सांसारिक विषय - वासनाओं से मुक्त थे। उनकी दृष्टि में गंगा भक्ति - मुक्ति विधायिनी एक बाहनी शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर हुई है। जो कवि

निसर्गतः,विरागी सन्यासी नहीं थे अथवा भक्ति भावना से भी परमार्थतः ओत प्रोत नहीं थे, जिन्होंने प्रायः गंगा को जड़प्रकृति के ही रूप में देखा। वे गंगा में तिरोहित 'मातृत्व'को नहीं देख सके।

गंगा का धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप भी स्वतः संलक्ष्य हैं। धर्माचरण में गंगा का जो स्थान एवं महत्व सनातन धर्म एवं उसके शैव शाक्त,वैष्णव तथा तंत्र सम्प्रदायों में है, वैसा अन्य नास्तिक धर्म सम्प्रदायों में नहीं।धर्म सिद्धि का साधन रूपणी गंगा सभी साधकों की सदैव प्रेरणास्त्रोत रही हैं। स्मरण,कीर्तन,व्रत - उपवास,स्नान -दान तथा तीर्थ यात्रादि के माध्यम से गंगा इस जटिल कर्मकाण्ड का अभिन्न अंग बनती हैं। कर्मकाण्डीय व्यवस्था में गंगा जल ही एक ऐसा उपादान है जो स्वयं में सीमित नहीं बल्कि अन्यान्य अनेक पदार्थों में भी व्याप्त माना गया है। ब्रहमवैवर्तपुराण , प्रकृति खण्ड (अध्याय १८) तथा पदमूपुराण उत्तरखण्ड (अध्याय १२६) में शंख में गंगा का निवास शिव पुराण में बताया गया है। तुलसी में गंगा स्थिति नारद पुराण (६१२५) में बतायी गयी है। पितरों की सेवा में गंगास्नानजन्य पुण्य विद्यमान हैं ऐसा पदमूपुराण (भूमिखण्ड,अध्याय २६ श्लोक ५८,६०,६२,६४,६७,६६,७२ तथा ७४) में कहा गया है। अच्युत कथा - प्रसंग में गंगा का निवास होता है,ऐसा उल्लेख अनेक ग्रन्थों में मिलता है। ब्रहमकमण्डलु ,शिवजटाजूट,विष्णुचरण,नर्मदा तटवर्ती नन्दिकेश्वरतीर्थ तथा अविन्ध्या नामक देश विशेष में भी गंगा को अवस्थित माना गया है। पार्थिव वस्तुओं,लोकों,तीर्थों तथा विविध जीवों में गंगा की व्यापकता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है।

गंगाजल-स्नान से अन्तःकरण की निर्मलता तथा सत्प्रवृत्तियों का उदय ही,स्नान का सर्वोत्तम फल है। यदि गंगा स्नान के पूर्व मन में मलिनता रही अथवा स्नान के बाद पुनः पापोदय हुआ तो गंगा स्नान की कोई सार्थकता नहीं। अथर्ववेद में स्पष्टताः कहा गया है कि जलों में अमृत होता है। अतः जल भेषज के समान है, परन्तु यह भेषजीय जल गंगा मात्र में सम्भव है,अन्यत्र नहीं। अथर्ववेद में आठवें काण्ड के दूसरे सूक्त में ऋषि पुनः गंगा को 'दिव्यपयस्वती'अर्थात् दिव्य जलवाली स्वीकार करते हैं। गंगा स्नान से गात्र शुद्धि,पापविनाश के

साथ ही साथ मोक्ष लाभ की बात प्रायः प्रत्येक स्तोत्र की फलश्रुति में कही गयी हैं। कल्किपुराण तृतीयाशं में प्रातः, मध्याहन् तथा सांय गंगास्नान करने से मनुष्यों के समस्त पापों विनाश तथा बल एवं आयु की बुद्धि का समर्थन किया गया है --

सर्वपापहरं प्रंसां बलमायुर्विवर्धनम्।

प्रातर्मध्याहनसायाह्ने गंगासान्निध्यता भवेत्।।(कल्कि० तृतीयांश)

व्रतानुष्ठान,व्रत उपवास तथा जप आदि भी उपासना के अभिन्न अंग हैं, तथापि भारतीय जनमानस में गंगा सम्बन्ध अनेक व्रतोपवास,अभिचार-कर्म तथा जादू-टोने,टोटके युग युग से प्रचलित रहे हैं। वन्ध्या स्त्रियाँ अथवा पुत्र प्राप्ति के लिये उत्कण्ठित महिलायें गंगा में कटा हुआ कुम्हड़ा (क्रष्माण्ड) अर्पित करतीं हैं। वैधव्य प्राप्त होने पर पहली बार गंगा तट पर महिला के मुण्डन कराने तथा शोभावर्धक वस्त्र छोड़ने की परम्परा है। बच्चों के मुण्डन की गंगा तट पर परम्परा भी बहुत प्राचीन है। गंगा तट पर यज्ञ - याग तथा दान भी एक शास्त्र समर्थित तथ्य है। पद्म पुराण के पाताल खण्ड (अध्याय ८२) में गंगा सप्तमी व्रत का महात्म्य और विधि बतायी गयी है। उपलक्ष्य में वैशाख शुक्ल सप्तमी के दिन गंगाव्रती भक्त को हरद्वार,कुशावर्त,विल्वक,नीलपर्वत तथा कनखल में गंगा स्नान एवं गंगाराधना करनी चाहिये। गंगा स्नान से सम्बद्ध दशहरा व्रत सम्भवतः सर्वाधिक महत्व का है। अपने अवतरण मात्र से गंगा ने दस प्रकार के पापों को हर लिया है,अतएव वह शुभ दिन "दशहरा" नाम से विख्यात हुआ।

गंगा सम्बन्धी मंत्रानुष्ठान मंत्र उपासना का एक महत्वपूर्ण अंग है। भविष्योत्तरपुराण में निम्नलिखित गंगा मंत्र दिया गया है --

"ऊँ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गंगायै नमो नमः। "

स्कन्द पुराण काशी खण्ड में २० अक्षरों के गंगा मंत्र का निर्देश किया गया है -

"ऊँ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गंगायै स्वाहा।"

गंगा का तान्त्रिक प्रयोग बताते हुये कहा गया है कि काले बैल के

रक्त में गंगा की मिट्टी मिलाकर यदि ललाट प्रदेश में तिलक लगाया जाये तो उस व्यक्ति की सम्भावना से वैरी तत्काल मृत्यु को प्राप्त हो सकता है। मकर वाहिनी गंगा की पाषाण मूर्तियाँ आज भी मथुरा,सागर एवं प्रयाग के संग्राहलयों में प्रभूत मात्रा में इसकी लोक व्यापकता सुरक्षित है। नागोद राज्य (मध्य प्रदेश) में स्थित भूमरा के शिव मन्दिर में मकरवाहिनी गंगा एवं कूर्मवाहिनी यमुना की लोक पूजित मूर्तियॉ अभी भी विद्यमान हैं।

गंगा में निषिद्ध और विधेय कार्यों का विवेचन इस प्रकार है -- गंगा में प्राण त्याग,गंगाजल में विक्रय निषेध, गंगासाक्षिक मिथ्याभाषण निषेध, गंगा स्नान में यान निषेध, गंगा में वर्ज्य १४ कार्य। ब्रहमाण्ड पुराण में गंगा में वर्ज्य १४ कार्य इस प्रकार बताये गये हैं। (गंगा के समीप शौच,गंगाजल में आचमन,बाल झाड़ना, निर्माल्य डालना,मैल छुड़ाना,शरीर मलना, हँसी मजाक, दान लेना, मैथुन, अन्यतीर्थ के प्रति अनुराग,अन्य तीर्थ की महिमा का गायन, कपड़ा धोना अथवा छोड़ना,जल पीटना तथा तैरना आदि) प्राचीनकाल से लोक प्रचलित हैं। धर्मसिद्धि के साधना स्थल अनेक गंगा तीर्थ भी हैं। गंगा मन्दिर, सुरीर, हरिपदी गंगा, मानसी गंगा, स्वर्ण गंगा, पाण्डर गंगा, पाण्डव गंगा, भविष्य गंगा, गंगोत्तरी आदि अनेक गंगा तीर्थ प्राप्त होते हैं।

गंगा वर्णन की साहित्यिकता सर्वत्र संलक्ष्य है। गंगा से सम्बद्ध संस्कृत वाड्.मय में अनेक रूप हैं।

(१) वैदिक गंगा

(२) पौराणिक गंगा

(३) स्त्रोतात्मक एवं अर्वाचीन काव्य में वर्णित गंगा

काव्यशास्त्रीय विविध विधाओं के लक्षण ग्रन्थों के अतिरिक्त अनेक लक्ष्य ग्रन्थों में भी गंगा सम्बन्धी स्फुट पद्य मिलते हैं। काव्य प्रकाश, साहित्य दर्पण तथा रस गंगाधर आदि में भी ये पद्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। प्रायः इन पद्यों के रचनाकार का नाम भी अज्ञात है,परन्तु ये पद्य हैं अत्यन्त ललित। विधाकर पण्डित कृत 'सुभाषित रत्न कोष', श्रीधरदास कृत 'सदुक्तिकर्णामृत',शार्गंधर प्रणीत 'शार्गधर पद्धति',जल्हर प्रणीत 'सूक्ति मुक्तावली'

तथा वल्लभदेव प्रणीत 'सुभाषितावली' सरीखे संग्रह ग्रन्थ में भी अनेक स्वनामधन्य कवियों द्वारा प्रणीत गंगा सम्बन्धी पद्य उपलब्ध हैं।

संस्कृत के गंगा वाङ्.मय का हिन्दी कविता पर प्रभूत प्रभाव परिलक्षित है। वीरगाथा, भक्ति, रीति तथा नवयुगीन काव्य आयामों में गंगा पर विशाल प्रबन्धात्मक एवं मुक्तक काव्य विरचित हुआ। भक्तिकाल में गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस ,कवितावली आदि अपने ग्रन्थों में गंगा का भावभीना वर्णन प्रस्तुत किया है। केशव की 'रामचन्द्रिका' में भी गंगा का वर्णन मिलता है। रहीम एवं रसखान ने स्फुट रूप से सरस गंगा - स्तुतियाँ लिखीं हैं। रसखान का एक छन्द गंगा के प्रति उनकी हार्दिक श्रद्धा को स्पष्ट कर देता है। रीतिकाल में पद्माकर ने गंगा को अभिलक्षित कर अद्भुत रचनायें की हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा रत्नाकर प्रणीत 'गंगावतरण' काव्य वर्तमान युग के सुन्दर सरस काव्य हैं। पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की 'डलमऊ की गंगा' एवं 'नौकाविहार' में कालाकाँकर की ग्रीष्मकालीन गंगा का भव्य अंकन है। अतः लोकमंगलकारी गंगा वाङ्.मय की व्यापकता और प्रभावोत्पादकता सार्वजनीन और सार्वभौमिक ही हैं।

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थ सूची

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थ सूची

अ- आधार ग्रन्थ-

क्र०	ग्रन्थ नाम	लेखक/संपादक/प्रकाशक	प्र०स्थान	संस्करण
१.	ऋग्वेद संहिता	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	सम्वत् १६६८
२.	अथर्ववेद	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	सम्वत् १६६८
३.	शतपथ ब्राह्मण	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	द्वितीय संस्करण
४.	जैमिनीय ब्राह्मण	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	द्वितीय संस्करण
५.	ताण्ड्य ब्राह्मण	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	प्रथम संस्करण
६.	तैत्तिरीय आरण्यक	वैदिक संशोधन मण्डल	पूना	द्वितीय संस्करण
७.	तैत्तिरीय उपनिषद्	सम्पादक श्री राम शर्मा	बरेली	प्रथम संस्करण
८.	ऐतरेय उपनिषद्	सम्पादक श्री राम शर्मा	बरेली	प्रथम संस्करण
६.	छन्दोग्य उपनिषद्	गीता प्रेस	गोरखपुर	द्वितीय संस्करण
१०.	प्रश्नोपनिषद्	गीता प्रेस	गोरखपुर	द्वितीय संस्करण
११.	मुण्डकोपनिषद्	गीता प्रेस	गोरखपुर	द्वितीय संस्करण
१२.	अग्नि पुराण	सम्पादक हरि नारायण आप्टे	पूना	१६०० ई०
१३.	हरिवंश पुराण	आनन्दाश्रम	पुणे	द्वितीय संस्करण
१४.	ब्रह्मवैवर्त पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	द्वितीय संस्करण
१५.	विष्णु पुराण	सम्पादक रामनारायण शास्त्री	गोरखपुर	१६६६ ई०
१६.	नृसिंह पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
१७.	शिव पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
१८.	वामन पुराण	आनन्दाश्रम	पुणे	१६०५ ई०
१६.	देवी भागवत	आनन्दाश्रम	पुणे	१६०० ई०
२०.	ब्रह्म पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण

क्र.	ग्रन्थ	प्रकाशक / सम्पादक	स्थान	संस्करण
२१.	पद्म पुराण	सम्पादक महादेव चिम्टाजी आप्टे	पूना	१६०७ ई०
२२.	नारद पुराण	आनन्दाश्रम	पूना	१६०[illegible] ई०
२३.	स्कन्द पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
२४.	कूर्म पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
२५.	मत्स्य पुराण	सम्पादक हरि नारायण आप्टे	पूना	१६०७ ई०
२६.	गरूड़ पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	द्वितीय संस्करण
२७.	भविष्य पुराण	आनन्दाश्रम	पूना	द्वितीय संस्करण
२८.	कल्कि पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
२६.	विष्णु धर्मोत्तर पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	द्वितीय संस्करण
३०.	श्रीमद्भागवत्	गीता प्रेस	गोरखपुर	प्रथम संस्करण
३१.	श्रीमद्वाल्मीकि रामायण	सं.पं. रामनारायण शास्त्री, गीताप्रेस	गोरखपुर	
३२.	श्रीमन्महोभारतम्	गीता प्रेस	गोरखपुर	प्रथम संस्करण
३३.	र[illegible]शम्	कालिदास प्रणीतम् चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	
३४.	कुमार सम्भवम्	कालिदास प्रणीतम् चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	
३५.	भट्टिटकाव्य	भट्टिट प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	द्वितीय संस्करण
३६.	किरातार्जुनीयम्	भारवि प्रणीत,चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
३७.	शिशुपालवध	माघ प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
३८.	हरविजय	रत्नाकर प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
३६.	राजतंरगिणी	कल्णह प्रणीत,चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
४०.	गंगावतरणम्	श्री नीलकण्ठ दीक्षित प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	प्रथम संस्करण
४१.	पारिजातहरण	पं० उमापति शर्मा द्विवेदी, प्रणीत,	वाराणसी	प्रथम संस्करण
४२.	शिवलीला महाकाव्य	चौखम्भा विद्या भवन	वाराणसी	प्रथम संस्करण
४३.	सीतास्वयंवर	श्री नागराज प्रणीत	पुणे	प्रथम संस्करण
४४.	गंगासागरीयम्	पं० विष्णुदत्त शुक्ल सं० डॉ० बृजलाल वर्मा	इलाहाबाद	प्रथम संकरण१६८२

४५.	गंगास्तव	श्री हनुमान प्रणीत, गीता प्रेस	गोरखपुर	प्रथम संस्करण
४६.	गंगाष्टकम्	वाल्मीकि प्रणीत, गीता प्रेस	गोरखपुर	द्वितीय संस्करण
४७.	गंगाष्टकम्स्तोत्र	कालिदास प्रणीत, गीता प्रेस	गोरखपुर	द्वितीय संस्करण
४८.	गंगाष्टकम् एवं गंगास्त्रोतम्	शंकराचार्य प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
४६.	गंगाष्टकम्	अब्दुल रहीम खान खाना प्रणीत परोपकारिणी सभा	अजमेर	द्वितीय संस्करण
५०.	गंगा-लहरी	जगन्नाथ प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	प्रथम संस्करण
५१.	अमृत लहरी	शंकराचार्य प्रणीत, चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
५२.	धर्मसिन्धु ग्रन्थ	वेंकटेश्वर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
५३.	गंगाष्टकम्	सत्यज्ञानातीर्थ प्रणीत आनन्दाश्रम	पूना	प्रथम संस्करण
५४.	रक्षतगंगाम्	डॉ० कमला पाण्डेय प्रणीत	वाराणसी	प्रथम संस्करण२०००
५५.	गंगा-गरिमा	डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी प्रणीत कुसुम कुलाय	अजीतमल	प्रथम संस्करण२००३
५६.	मङ्.गल्या	डॉ० चन्द्रभानु त्रिपाठी शक्ति प्रकाशन	प्रयाग	१६७८
५७.	गंगा-लहरी	श्री आप्पाराव प्रणीत	पुणे	प्रथम संस्करण
५८.	गंगा-सुरतरंगिणी	श्री विश्वेश्वर विद्याभूषण प्रणीत	वाराणसी	प्रथम संस्करण
५६.	गंगा तरंगम्	चक्रवर्ती श्री राजगोपालाचार्य प्रणीत	मद्रास	प्रथम संस्करण
६०.	दशकुमार चरितम्	दण्डी प्रणीत सं० डॉ० के०के० त्रिपाठी	कानपुर	१६४८
६१.	हर्षचरितम्	बाणभट्ट प्रणीत डॉ० मीरा शास्त्री	जयपुर	२००२
६२.	कादम्बरी	बाणभट्ट प्रणीत स्व० सं० पी० वी० काणे	बम्बई	१६२१
६३.	तिलक मञ्जरी	धनपाल प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	प्रथम संस्करण
६४.	सत्यहरिश्चन्द्रोदयम्	डॉ० रामजी उपाध्याय प्रणीत	वाराणसी	२००१
६५.	हितोपदेश	नारायण पंण्डित प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
६६.	नलचम्पू	त्रिविक्रम भट्ट प्रणीत साहित्य भण्डार	मेरठ	१६६६
६७.	रामायण चम्पू	भोज एवं लक्ष्मण भट्ट प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	प्रथम संस्करण
६८.	भारत चम्पू	अनन्त कवि प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण

६६. गंगावतरण चम्पू	डॉ० गयाचरण त्रिपाठी	प्रयाग	२०००
७०. गंगागुणादर्श चम्पू	श्री दत्तात्रेय वासुदेव निगुडकर प्रणीत	नागपुर	१६६६ ई०
७१. गंगा-विलास चम्पू	श्री गोपाल प्रणीत	काशी	प्रथम संस्करण
७२. कण्वचरितम् चम्पू	प्रो०सुरेन्द्रनाथ वर्मा प्रणीत स्कन्दपुरी	झाँसी	प्रथम संस्करण १६६८
७३. पंचरात्र	भास सम्पादक राम जी उपाध्याय	सागर	१६८६
७४. प्रतिमानाटकम्	भास प्रणीत रामजी उपाध्याय	सागर	१६८६
७५. अभिज्ञान शाकुन्तलम्	कालिदास प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	
७६. विक्रमोर्वशीयम्	कालिदास प्रणीत चौखम्भा संस्कृत सीरीज,	वाराणसी	
७७. शाकुन्तलीयम्	डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी प्रणीत रेखा प्रकाशन	आगरा	१६६८
७८. मुद्रा राक्षस	विशाखदत्त प्रणीत चौखम्भा सीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
७६. उत्तररामचरितम्	भवभूति प्रणीत सं० डॉ० शारदा रञ्जनरे	कलकत्ता	१६४६
८०. प्रसन्नराघव	जयदेव प्रणीत निर्णय सागर, प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
८१. विक्रान्त कौरव	जैनकवि हस्तिमल्ल प्रणीत सं० रामचन्द्रमित्र	वाराणसी	१६६६
८२. विवेकानन्दविजयम्	डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर	मद्रास	१६८६
८३. अनर्घराघव	मुरारि प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
८४. कुदनमाला	दिंङ्.नाग प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
८५. काव्यमीमांशा	राजशेखर प्रणीत सं० केदारनाथ शर्मा सारस्वत	पटना	१६५४
८६. काव्य प्रकाश	मम्मट प्रणीत सं० आचार्य विश्वेश्वर	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
८७. ध्वन्यालोक	आनन्दवर्धन प्रणीत सं० आचार्य विश्वेश्वर	वाराणसी	प्रथम संस्करण
८८. वक्रोक्तिजीवतम्	कुन्तक प्रणीत निर्णय सागर प्रेस	बम्बई	प्रथम संस्करण
८६. निरुक्त	यास्काचार्य प्रणीत सं० देवराज	कलकत्ता	१६५६ ई०

ब- सन्दर्भ ग्रन्थ-

क्र०	ग्रन्थ नाम	लेखक/संपादक/प्रकाशक	प्र०स्थान	संस्करण
९०.	अभिनम् चिन्तनम्	डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी,		प्रथम संस्करण२००३
९१.	ऋग्वैदिक भूगोल	डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी साहित्य निकेतन	कानपुर	१९८५
९२.	वैदिक साहित्य और संस्कृति	आचार्य बलदेव उपाध्याय	वाराणसी	१९७३
९३.	ऐंश्मेण्ट इण्डिया	मैक्रिण्डल, सम्पादक मजूमदार	कलकत्ता	प्रथम संस्करण
९४.	भारत का इतिहास	डॉ० कामेश्वर प्रसाद	पटना	प्रथम संस्करण १९९३
९५.	विश्वसभ्यता का इतिहास	डॉ० उदय नारायण राय	प्रयाग	प्रथम संस्करण
९६.	स्टडीज इन इण्डियन आर्ट	डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल	वाराणसी	प्रथम संस्करण
९७.	भारतीय कला के कुछ मांगलिक प्रतीक -	विमल मोहनी श्रीवास्तव का शोध प्रबन्ध		
९८.	दि यक्षाज	कुमार स्वामी	पुणे	प्रथम संस्करण
९९.	दि आर्ट ऑफ इण्डिया	शिवराम मूर्ति	कलकत्ता	प्रथम संस्करण
१००.	मेम्वायर्स ऑफ आर्क्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया			
१०१.	शालमंजिका	डॉ० उदय नारायण राम	इलाहाबाद	प्रथम संस्करण
१०२.	संस्कृत साहिय का इतिहास	डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी	जयपुर	२००५
१०३.	History of Nayak's of Madura	R.S.ayyar	मदुरै	१९८६
१०४.	प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल	विमल चरण लाहा	दिल्ली	द्वितीय संस्करण
१०५.	दि गंगा एक्शन प्लान	डॉ० आर०एन०सिंह, प्रतियोगिता विकास		
१०६.	भारत भ्रमण	साधुचरण प्रसाद वाराणसी हिन्दी मासिक दिसम्बर८५अंक१९०२		
१०७.	गंगा तीर्थो का विस्तृत वर्णन	कल्याण तीर्थांक गीताप्रेस	गोरखपुर	
१०८.	ज्योलॉजी ऑफ इण्डिया एण्ड वर्मा	डॉ० एम०एस०कृष्णन	मद्रास	१९५६
१०९.	केदारनाथ खण्ड भौगोलिक सांस्कृतिक अध्ययन	डॉ० गोविन्द प्रसाद हट्वाल,	कानपुर	१९९२
११०.	दि कम्पटीशन मास्टर		आगरा	सितम्बर ८५ अंक
१११.	संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डॉ० रामजी उपाध्याय	प्रयाग	१९९६

११२. A Classical History of Sanskrit Literature, Krishnamachari, Delhi

११३. अर्वाचीन संस्कृत साहित्य डॉ० श्रीधर भास्कर वर्णेकर पूना १६६६

११४.Modern Sanskrit Writings Vol I and II, Dr.V. Raghwan Madras 1952

११५. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास डॉ० हीरालाल शुक्ल इलाहाबाद १६६७

११६. कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थलों का प्रत्यभिज्ञान, साहित्य निकेतन कानपुर १६६६

११७. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी इटावा १६७८

११८.A New History of Sanskrit Literature Krishna Chaitanya Delhi1966

११६. संस्कृत साहित्य का इतिहास डॉ० बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर काशी १६६७

ग- शोध पत्रिकायें कोश ग्रन्थादि-

क्र०	ग्रन्थ नाम	लेखक/संपादक/प्रकाशक	प्र०स्थान	संस्करण
१२०.	सागरिका	सं० डॉ० रामजी उपाध्याय	वाराणसी	वर्ष १६ १,४
१२१.	अर्वाचीन संस्कृतम	डॉ० रमाकान्त शुक्ल	दिल्ली	
१२२.	पारिजातम्	सं० डॉ० प्रकाश मित्र शास्त्री	कानपुर	वर्ष १०/१-१२
१२३.	पंचाल (गंगा विशेषांक)	सं० डॉ० करुणाशंकर शुक्ल	कानपुर	२००२
१२४.	गीता सन्देश (गंगा विशेषांक)	भानुमित्र, गीताश्रम	ऋषिकेश	
१२५.	लोकालोक (प्रयाग एवं कुम्भ विशेषांक)	डॉ० वीराचार्य शास्त्री	दिल्ली	१६६६
१२६.	भूगोल(भुवन कोशांक गंगा एटलस विशेषांक)	डॉ०रामानारायण	प्रयाग	१६५७
१२७.	अमरकोश	चौखम्भा संस्कृत सीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
१२८.	त्रिकाण्डशेष	पुरुषोत्तम देव चौखम्भा संस्कृतसीरीज	वाराणसी	द्वितीय संस्करण
१२६.	संस्कृत वाङ्‌मय कोश(प्रथम व द्वितीय भाग)	डॉ०श्रीधर भास्कर वर्णेकर	कलकत्ता	१६८६
१३०.	संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ	पं० द्वारिका प्रसाद चतुर्वेदी	इलाहाबाद	१६६६